नही है कि जगमोहन के मामले मे सरकार के ऊपर के स्तर के व्यक्तियों में बहुतों ने नये मार्ग का प्रकाश देख लिया है और सरकारी सहायता से शीघ्र ही जगमोहन की कहानी चित्ररूप पा सकती है। सेकुलर इंडिया—धर्म-निरपेक्ष भारत—के माने है कि इंडिया उच्चवर्ण-शासित है, इस सत्य को सब जानते है; जबान से नही कहते, काम मे कर दिखाते है। सिनेमा में दिखा देने पर आइडिया सर्वसाधारण की स्वीकृति पा जायेगा, क्योंकि बिना फ़िल्म देखे भारत की जनता कुछ सीखना नही चाहती। देशप्रेम, शराबी पति के प्रति पत्नी का अनुगत भाव और प्रतीक्षा की आवश्यकता, पुलिस की भलमनसाहत, गरीबों के लिए अमीरों के हृदय की पीडा—यह सब देश मे है और रहेगा। किन्तु धर्मेन्द्र या हेमामालिनी या लता मगेशकर की सहायता के बिना भारतीय लोग भारतीयता की ए-बी-सी-डी भी नही सीख सकते। सुना जाता है कि इस चित्र में स्वयं तैलग स्वामी और काठियाबाबा जगमोहन हाथी के शरीर मे मिलेंगे और उसकी देह से निकलेंगे। जगमोहन मात्र चौपाया, बड़ा भारी, स्तनपायी नही है। यह उक्त महापुरुषों का गजरूप है, यह इसी से प्रमाणित हो जायेगा। भूखा सोमरा, महावत बुलाकी इत्यादि के चरित्रों में सर्वभारतीय स्टार कास्ट रहेगा। जगमोहन के चरित्र के लिए अभिनेता मिलते ही चित्र शुरू हो गया। लेकिन हाथी के चरित्र मे अभिनय करने के लिए किसी भारतीय के तैयार न होने पर अमरीका मे फ़ीलर भेजा जायेगा। जो हो, भविष्य की बात अपनी जगह रहे, जगमोहन की कहानी का उसके मूल मे लौटना आवश्यक है।

सतहत्तर के अक्टूबर मे, दूसरे अक्टूबरों की तरह, पलामू का जगल सरस बाँस के झाड़ और कभी-कभी बरगद के पेडों से सुशोभित था। बाँस कहते ही बंगाली मुहावरे का 'बाँस घुसेडना' समझते है। लेकिन बाँस और बरगद, दोनों पेडों के पत्ते और कोमल डालें, हाथी के प्रिय खाद्य होते है—यह सबको नही मालूम है। जो सोचते हैं कि यह जानना जरूरी नही है, उनको जान रखना अच्छा है। वे लोग जो कुछ जानते है, उससे भारत की श्रेष्ठ जाति और राजनीति में झगडा है, किन्तु उससे धनवाद का गुंडा-राज या आचार्य भावे का गो-हत्या के विरुद्ध अनशन प्रभावी नही होता। जगमोहन जातीय एक बड़ा मैमल—स्तनपायी जन्तु—उनकी तुलना मे बहुत क्षमता-

राधाकृष्ण द्वारा प्रकाशित महाश्वेता देवी की अन्य रचनाएँ

भटकाव
जगल के दावेदार
1084वें की माँ
अग्निगर्भ

शाली है और भारत में फिर से आपातकाल स्थापित होने में सहायक है। हाथी का बाँस के पेड़ और बरगद के पत्तों के प्रति प्रेम भारत मे फिर से पिछला राज लाने के वातावरण के सृजन मे सहायक हुआ था। इसका कारण था, काशीवासी चरणदास महन्त का कंजूस स्वभाव। उससे ही यह *सब हो गया और एक नूतन, इमर्जेंसी-उज्ज्वल एशिया मे मुक्ति के सूर्य से* आलोकित भारत-भूमि का उदय हुआ।

चरणदास बहुतेरे महन्तों मे एक था। बनारस मे उसकी हवेलियों-पर-हवेलियाँ थी। इसके सिवा बस-टैक्सियाँ, दास-दासी, भैंसें, देहात मे जमीन और चार हाथी थे। हाथी उसकी हैसियत की निशानी थे। लेकिन हाथियों की खुराक के प्रति उसके मन मे आश्चर्यजनक वैराग्य था। बनारस के समीप गाँव के मकान (पक्का चौमंजिला) में स्थापित लक्ष्मी-*जनार्दन ही हाथी के कारण थे—या उनका कारण ही हाथी थे।* होली, जन्माष्टमी और दशहरा में लक्ष्मी और जनार्दन हाथी की पीठ पर सवार होकर गाँव और शहर जाते और प्याला लेते। उसके लिए मादा-हाथी मोती थी। महन्त के हाथियों की खुराक उनकी प्रजा ही देती। बाकी तीन नर-हाथियों की महन्त को एक बार ही जरूरत पड़ती। रथयात्रा पर जगन्नाथ-दर्शन के लिए अठारोनता से हाथी पर सवार होकर शहर में घुसते। जगमोहन, गणेश और घनश्याम—इन तीन हाथियों पर महन्त और उनके हाली-मवाली बैठते। इसके सिवा साल-भर हाथी उनके किसी *काम न आते। 'ह्यूज फोर-फुटेड पैकिडर्म'—विशाल मोटी खाल का चौपाया* देखकर उनका महन्तगीरी का-सा फायदे का कारोबार बेकार लगता। उनका खाना वे कभी न देते, फिर भी 'हाथी की खुराक' सोचते ही उनका कलेजा काँप जाता। गाय-भैंस तो थी नहीं जो खिलाने पर दूध देती। टैक्सी या बस भी नहीं, जो पेट्रोल भरने से पैसे ला दें। पाले हुए लड़के-लड़कियाँ नहीं जो खिलाने-पिलाने पर सोने के समय देह-सुख दें। बिना फ़ायदे के कारोबार को 'हाथी पालना' कहा जाता है। यह तो सचमुच का हाथी पालना है। हाय! वे दिन नहीं रहे कि आपातकाल में आराम के साथ हाथी से देहाती भंगी प्रजा के घर रौंद डालें, उनके छप्पर से फूस निकालकर हाथी खा लें, कोठे का धान खाये। फिर महन्त बनने को मुसी-

घहराती घटाएँ



राधाकृष्ण

वत है कि चार हाथी रखने ही पड़ेंगे। इसीलिए हाथी के मर जाने पर सोनपुर के मेले से फिर भी हाथी खरीदना पडता। न रखने से बदनामी होती। चरणदास बहुत ही मॉडर्न महन्त था। लेकिन पुरखों से चली आ रही प्रथा को अस्वीकार नही कर सकता था।

लेकिन हाथी हवा खाकर तो जिन्दा रह नही सकता। चरणदास के दादा नियमित रूप से हाथी को सिघाड़े के आटे की जलेबी खिलाते थे। चरण-दास जिन्दगी-भर हाथियों को जलेबियाँ खिला सके, इसके लिए वे हवेली-पर-हवेली बनवा कर गये। चरणदास ने उनकी इच्छा पूरी नही की, क्योंकि उच्च वर्ण के रोब के सिवा काशी माहात्म्य नाम मे अब कुछ नही है। वह है इसीलिए निम्न वर्ग के मंत्री के विश्वविद्यालय में आने पर वे तमाशा बन कर जाते है। लेकिन दूसरी ओर सब डॉवाडोल है। जलेबियाँ आजकल ऊँचे दामों पर बिकती है।

हाथियों के खाने का हिसाब महन्त ने बड़ी होशियारी से ठीक किया है। वे दो हाथी बनारस में रखते है। दो बेटों की शादियाँ हो गयी है। महन्त के समधी उनका खाना जुटाते है। इस शर्त पर ही शादी हुई थी। वह दो *गणेश और घनश्याम बच्चा हाथी हैं। अभी भी खीच कर नहीं खाते।*

जगमोहन बूढा हाथी है। उसका महावत बुलाकी भी बुड्ढा है। बुलाकी हर बरस जगमोहन को लेकर बनारस से पुरी जाता है। बरस-भर उसे जहाँ जंगल मिलता, वहाँ हाथी चरा कर बांस के पत्ते और मुलायम डालें और बरगद के पत्ते खिलाता। पुरी से दूसरे हाथी बनारस लौट जाते। जगमोहन नही लौटता। मेदिनीपुर के रास्ते में चलते-चलते वह फिर पलामू या चाईबासा के जगल मे खो जाता। चरणदास जिस तरह जग-मोहन को खाना नही देते थे, उसी तरह बुलाकी को भी वेतन नही देते थे। बुलाकी जगमोहन को गाँव के जमीदारों के ब्याह मे बारात मे किराये पर देता, राँची शहर में बच्चो को पैसे लेकर सवारी कराता। उससे जो भी मिलता वह उसका होता। चरणदास का खयाल था कि बहुत मिलता था। बुलाकी जानता था कि कुछ भी नही मिलता। जगमोहन और बुलाकी—दोनों ही की उम्र सत्तावन थी। अठारह बरस की उम्र मे बुलाकी जगमोहन का महावत रखा गया था। वेतन निश्चित हुआ दो रुपये, खुराकी और

करुणा प्रकाशनी, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित
बंगला पुस्तक 'तैऋते मेघ' का अनुवाद

प्रथम हिन्दी संस्करण : 1980

मूल्य
30 रुपये

प्रकाशक
राधाकृष्ण प्रकाशन
2 अंसारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली-110002

मुद्रक
भारती प्रिंटर्स
दिल्ली-32

बरस में तीन बार कपड़ा-लत्ता। वेतन कम है, बहने से नहीं चलता। 1939 के वर्ष में कलकत्ते में दो रुपये के मन-भर चावल मिलते थे। बनारस में दो रुपये की बड़ी कीमत थी।

लेकिन फिर बुलाकी का वेतन दिया जाना बन्द होने लगा। बुलाकी भी माँग न पाता और चरणदास भी नहीं देते। हाथी लेकर उन दिनों शहर में जाना होता और जो उत्सव होता, बुलाकी को भी उसमें हिस्सा मिलता। जगमोहन का पौरुष प्रसिद्ध था और आसपास के ग्रामीण रईस लोग मादा-हाथी ख़रीदने पर गर्भाधान के लिए जगमोहन को ले जाते। उससे चरणदास को बहुत कुछ मिलता, क्योंकि रईस लोग हाथी के बच्चों को अच्छे दामों पर बेचते। जगमोहन मेहनत कर मरता और रईस लोग बच्चे बेचते। चरणदास को रुपये मिलते। बुलाकी को बख़्शीश और कपड़े मिलते। जगमोहन को जाड़ा रोकने के लिए कंबल मिलता।

पैकिडर्मों—बड़े पशुओं—को परिवार लेकर रहना अच्छा लगता है। हाथी बहुत ही घरेलू जानवर होता है। जगमोहन की मुसीबत थी कि हाथी होकर उसे हथिनियों का गर्भाधान करना पड़ता था। लेकिन हथिनी की गर्भावस्था, उसका बच्चा पैदा होने पर उसकी देखभाल करना—यह सारे स्वाभाविक काम वह नहीं कर पाता। मनुष्य की ज़रूरत में उसके हस्तित्व का पूरा उपयोग नहीं हो पाता। बुलाकी उसका दर्द समझता और छुटकी-उटकी नौकरानी या सस्ती रंडी के सिवा उसकी स्वाभाविक मौना-कांक्षा की स्थायी व्यवस्था जैसे नहीं हुई, उसके कारण वह जगमोहन के साथ एक आश्चर्यजनक बन्धन में बँध गया। वह बीच-बीच में किस्से कह-कर जगमोहन को सान्त्वना देता रहता।

जैसे, 'पता है, तुझे तकलीफ़ है। बता, क्या करूँ? तू भी मालिक का नौकर, मैं भी। बता, तुझसे क्या कहूँ? मालिक क्या खुद नामरद है! बचपन से एक रंडी के साथ लटर-पटर किया कि रात का काम कर सके, लेकिन उसकी गर्मी से कभी बेटा नहीं पैदा हुआ। एक के बाद एक तीन शादियाँ कर लीं। कुछ भी पैदा नहीं हुआ। तब साधू-सन्त, डागदर-इलाज ख़ूब किया। अरे गर्मी में जब जीउ नहीं, तो हकीम क्या करेगा? उससे बनारस में बड़ी हँसी हुई। तब मालिक ने भाई से कहा—घर की लाज है,

प्रणति और ममत्व को

तू भिड़ना। भाई भी भिड़ गया। बस। आठ बरस में तीन बहुओं के सात बेटा-बेटी पैदा हुए। जगमोहन। तू मरद है! मैं मरद हूँ! लेकिन उस नामरद ने हम दोनों को ख़रीद लिया था। तेरा दुख मैं समझता हूँ। यह समझ ले, और दुख मत कर।'

सच्ची कहानी को वह क़िस्सा कहता। जगमोहन इस कहानी में कितना समझता, कौन जाने! पर बुलाकी उसका आत्मीय था। चरणदास के काम से एक अवास्तविक संसार में जी रहा था, इसलिए जगमोहन बुलाकी की जरा देर की ग़ैरहाज़िरी से वास्तविकता खो जाने पर बहुत डरता। बुलाकी के रंडी के घर जाकर बीच-बीच में डुबकी लगा जाने पर वह खाना छोड़ देता। चरणदास कहता, 'उसे छोड़कर कभी न जाना।' और सुना जाता था कि एक बार हाथी पर चढ़कर बुलाकी किसी चवन्निया रंडी के यहाँ गया था। हुआ क्या कि उस दिन बनारस की सस्ती रंडियों ने अपना सारा काम भूलकर जगमोहन की सूँड़ में गेंदे की माला पहनायी और ढोलक बजाकर 'गोकुलवारे साँवरिया' नामक भक्तिगीत गाया। बुलाकी को उन्होंने उस दिन संग-कामी पुरुष के रूप में न देख भगवान के प्रतिनिधि के रूप में देखा और रंडियों की मालकिन बूढ़ी गुलाबी सहसा, 'बुलाकी कहाँ है? यह तो बाबा विश्वनाथ हैं' कहकर भावावेश में बेहोश हो गयी।

इस घटना का बनारस में व्यापक प्रचार हुआ और ऊँची रंडियों, गानेवाली बाई जी—सबके यहाँ बुलाकी ने जगमोहन को घुमाकर बहुतेरी वेश्याओं का उद्धार किया। उद्धार का पुण्यकर्म स्थायी नहीं हुआ, जिसका कारण बहुत गंभीर था। स्थायी होने पर इन स्त्रियों को शरीर बेचने का काम छोड़ना पड़ता। छोड़ देती तो वे खाती क्या? ख़रीदार आदमी भी कहाँ जाते? इस घटना के फलस्वरूप बुलाकी के जीवन में भी फ़ोर्स्ड ऐब्स्टिनेंस हो गया, क्योंकि रंडियों की नजरों में वह सदा के लिए भगवान का प्रतिनिधि हो गया। भगवान के प्रतिनिधि के साथ सुरापान, कलेजी के भोजन और शयन-रमण के लिए वे राजी न होतीं, 'नहीं-नहीं, देवता' कहकर प्रणाम ठोकती रहतीं। चरणदास की छुटकी दासियाँ भी इस चर्चा के फैलने से भागने लगीं और बुलाकी फूलकर स्वाभाविक इच्छा-पूर्ति का जब-तब

का सुख भी खो बैठा। दो-हजारी हाथी लेकर चार आनेवाली रडी के घ
जाने का पहले कभी का न सोचा यह सुदूरगामी फल मिला।
इसका परिणाम हुआ कि बुलाकी और जगमोहन दोनों पोटेंट मेल—
मदनि मर्द—और भी दुर्बोध्य व्याख्या और असाध्य मेल के बधन मे बँध
गये। रइसों की हथिनियों के गर्भाधान कराने के काम में जगमोहन जब
मतवाला होता, तो बुलाकी अपनी अक्ल लगाकर उन सारे अचलों मे अपनी
आदिम प्रवृत्ति का निवारण कर आता। इसके नतीजे से जगमोहन और
बुलाकी के आत्मज और आत्मजाओं का सिरजन होता रहा। लेकिन सन्
सैंतालीस के वर्ष के बाद रइसो की हालत गिर गयी। हाथियों का पालना
कम हो गया, जगमोहन और बुलाकी ने अचानक देखा कि वे बेकार हो
गये हैं। इसी समय चरणदास ने जगमोहन और बुलाकी को चलता-फिरता
चिडियाघर बनाकर बनारस छुड़ा दिया। वे निकल ज़रूर पड़े, लेकिन चरण-
दास के दास के ही रूप मे। लिबरेटेड बुलाकी ने लिबरेटेड जगमोहन की पीठ
पर बैठ बनारस-त्याग किया। साधारण मानव और यान्त्रिक संसार मे
परित्यक्त पैकिडर्म की वह यात्रा एक किंवदन्ती बन गयी। सेवा के समय वह
न होता। बुलाकी को वेतन नही मिलता था, जगमोहन को खाना नही
मिलता था। लेकिन कुछ दिये बिना ही उनको सदा के लिए दास बनाकर
चरणदास ने उन्हें फिर भगा भी दिया। आषाढ़ मे पुरीधाम में तीन दिन
सर्विस देगा और बाकी तीन सौ बासठ दिन अपना इन्तजाम अपने-आप
करें—चरणदास की इस व्यवस्था में बुलाकी या जगमोहन ने कोई गलत
बात नहीं देखी। इस हिसाब को मान लिया और खिसक गये।
बरस-भर मे तमाम जगह घूमते-फिरते। क्रम से जगल कटे, राह-घाट
बने, बस-मोटरें चलीं। पैकिडर्म और मनुष्यों के विचरण-क्षेत्र भी सीमित
हुए। अब बुलाकी और जगमोहन पलामू-चाइबासा बेल्ट ही अधिक पसन्द
करते थे। अल्पाहार से जगमोहन प्राय: ककाल हो गया था। हमेशा के अना-
हार से बुलाकी मनुष्य का कैरिकेचर बनकर रह गया था। किन्तु जगल-जंगल
घूमने से जगमोहन ने अपना मार्ग खोज लिया था। उसके मस्तिष्क का कोई
अंश जंगल को अपना निजी घर समझकर मानो अब पहचान रहा था।
जंगली हाथी देखकर उसे डर लगता। वह नग्नप्राय: आदिवासियो की उपेक्षा

करता। फिर भी अरण्य मे उसे चैन मिलता। बुलाकी को भी चैन आता। जंगल के गाँवों मे जाने पर जगमोहन को भी खाना मिलता, वह भी घाटो, बथुआ का साग, भेली गुड़ आदि खाकर जी रहा था। आदिवासियों से बरस-भर उसे यही स्वीकृति मिली है।

जगमोहन पहले रांची या खलारी या हटिया मे बच्चों को 'जॉय राइड' करने देता। अब उसे शहर या आदमी पसन्द नहीं है। बुलाकी यह समझता है। बहुत दिनों तक अल्पाहार और अनियमित आहार से जगमोहन टूट गया। अपना शरीर ढोने मे भी उसे कष्ट होता। बुलाकी को बहुत डर लगता। जगमोहन के मर जाने पर वह किसके सहारे रहेगा? जलाशय देखते ही वह जगमोहन को स्नान कराता था। पैसा मिलने पर उसे नमक, केला और धान खिलाता। लेकिन उससे भी जगमोहन की आँखो से उस तरह देखना न जाता। उसकी आँखें बहुत ही मानवीय वेदना से भरी और करुणापूर्ण थी। वैसी ही नजर से जगमोहन उससे कहता, 'अब मेरी छुट्टी कर दे, भैया।' बुलाकी नजर फेर लेता। जगमोहन ही इस असभव अवास्तविक ससार मे उसके लिए एकमात्र वास्तविकता था। अवास्तविक संसार! जिस ससार मे बुलाकी वेतन पाये बिना भी चरणदास का गुलाम बना घूमता-घूमता बूढ़ा और क्षीण हो गया। उसे अनाहार से शीर्ण हाथी के साथ से अधिक कुछ नही मिलता। आदमी, मामूली आदमी-सा स्वाभाविक जीवन हो गया था। वह संसार क्या अवास्तविक ही है! वास्तविकता एकमात्र जगमोहन और जगमोहन की बीमार साँसें है। जगमोहन के मर जाने पर बुलाकी क्या करेगा?

पलामू और चाईबासा के बहुत ही गरीब इलाके मे भी धनी रईस है। महाजन-जमीदार-बनिये-कलाल है। बुलाकी ने उनसे बात की थी। पर जगमोहन को लेकर उनके पास रहने के प्रस्ताव पर कोई तैयार न हुआ। जगमोहन जो कुछ खाता, उन बाँस और बरगद के पत्तों पर उनको कुछ खर्च न करना था। फिर भी वे तैयार न हुए। आज बरगद के पत्ते खायेगा, कल अगर पके धान खा जाये तो! 'नही जी, ऐसन बेईमानी ऊ नहीं जानता' कहने पर भी कोई फ़ायदा न होता।

किसी गाँव मे दो दिन रहने पर तीसरे दिन चले जाना पड़ता।

1



जगमोहन की मृत्यु

कहानी का नाम 'जगमोहन की मृत्यु' होने पर भी जगमोहन, सोमरा, गंजू और बुलाकी—तीनों ही मृत्यु के असंभव अथवा सदैव संभव परिणामों पर पहुँचे थे। घटना सतहत्तर के अक्टूबर में हुई। कहानी का एक अलौकिक छोर भी है। वह इस समय बुलडिहा गाँव के हनुमान मिश्र के क़ब्ज़े में है। यथार्थतः उस अक्टूबर के देवी-पक्ष में बुलडिहा के समीप जो अविश्वसनीय घटनाएँ हुईं, उनसे उस अंचल में हनुमान मिश्र की श्रेष्ठता और ईश्वर की इच्छा को स्थायी प्रतिष्ठा मिल गयी। भारत और भारतवासियों के मन से छुआछूत मिटाने और छोटी जाति पर होने वाले अत्याचारों को क़ानून द्वारा बन्द करवाने को जो कमर कसे है, उन्हें शिक्षा देने के लिए ही यह घटना हुई थी—ऐसा मिश्र के समर्थक कहते हैं। उसी प्रकरण पर 'जगमोहन की अमर कहानी' पुस्तिका पटना में छपी और गोमो-डाल्टनगंज लाइन के स्टेशनों पर कहीं-कहीं बिकी भी। 'जगमोहन' मन्दिरों में स्वभावतः सबसे अधिक बिकी। यह लाइन किताबों की बिक्री की लाइन नहीं है। इधर के गाँव प्रागैतिहासिक है। यहाँ के निवासी भारत सरकार के सरदर्द के प्रमुख कारण है। उराँव, मुंडा, हो इत्यादि की कोई लिखित भाषा या लिपि नहीं है। वे दिन के अन्त में चीनाघास के दानों की तलाश में हज़ारों बरस से फिरते आये हैं। जगमोहन की किताब वे भूखे-नंगे नहीं पढ़ेंगे। इसलिए किताब भुरकुंडा, खलाड़ी, पत्रातू इत्यादि नये बने धनी औद्योगिक [illegible] में बिकती। यह सारे आदिवासी भारत सरकार को अनजाने हैं। त[illegible]

डलिया-भर दाने मिलें या न मिलें। उसके बाद उन्हें पकाने पर घाटो तैयार होता। पनीला। उसमें नमक मिलाने पर वह लक्जरी—ऐश की चीज़—बन जाता।

वृद्ध, अशक्त, क्लान्त, उपवास-शीर्ण बुलाकी हाथी से उतरता और इनके पास आता। ऐसे परिवेश में, ऐसी दोपहरी में, ठीक ऐसे लोगों के पास वह बहुत बार आया था। आने के बाद, छोटे बच्चे और बूढ़े-बुढ़ियाँ हाथी देखकर आकर्षित होंगे या नहीं, यह कई दूसरी चीज़ों पर निर्भर करता है। यथार्थ में इस पृथ्वी पर सब कुछ इसके-उसके ऊपर निर्भर करता है। नंगे गरीब गाँव में हाथी आया। सबके भागकर भीड़ लगाने की बात होती।

पहले वे भीड़ लगाते थे। तब बुलाकी को भी बहुत खुशी होती और हाथी की पीठ से ही हाथ हिलाते हुए उतरता। जान-पहचान का गाँव होने से वह चिल्लाकर कहता, 'आ रे एतोया! तोहार ललुआ गैया जंगल माँ घुसत है रे!' जिस तरह बुलाकी फटी धोती पहने पगलैट-सा रहता वैसा ही इन लोगों में उसे सहज लगता। टेंट में पैसे रहने पर वह इनके साथ महुआ पीता, कुछ दिन ठहर जाता। बिन पैसे लिये ही सबको जगमोहन के ऊपर बैठाता।

इस तरह का स्वागत उसे तभी मिलता, जब एक के बाद एक कर कई बरस 'काले वर्षंतु पर्जन्यः पलामू शस्यशालिनी' होती। वर्षा होने पर खेती होती। खेती जाती ज़मींदार या महाजन के खलिहान में। आदिवासी खेत-मजूरों को मजूरी नहीं मिलती, कुछ को मिलती—मड़ुआ-मक्का मिलते। खेतों की मिट्टी और दँवाई के ओसारे की धूल को पानी से साफ कर धोने पर उन्हें खेती में से कुछ मिल जाता। इसके सिवा बरसात होने पर जंगल में फल-कन्द होते, चौनाघास की झाड़ियाँ उग आतीं, पानी में मछलियाँ आ जातीं। बरसात होने के बाद किसी फ़ारेस्ट बेल्ट के गाँव में आने पर बुलाकी को गाँववालों की आँखों में स्वागत मिला था। यही उराँव, कोल, हो उपजाति के लोगों को बहुत दिनों से मालूम था कि उनका खेती करने का अधिकार है, ज़मीन पर या उपज पर नहीं। श्रम का अधिकार है, पारिश्रमिक का नहीं। इसका नतीजा होता है कि वर्षा होने पर वे खुश हो जाते

के कष्ट देते हैं। विकास कार्यालय की उपेक्षा कर यह अविकसित रहते है। सरकार को छुआछूत पसन्द नहीं है, यह बात जानते हुए भी ये लोग ऊँची जाति वालों से डरते है। देश की धन-सपदा मे इनका अधिकार रहे, यही सरकार की घोषित इच्छा है। फिर भी मैंगनीज, बॉक्साइट, माइका, लोहा, ताँबा, सीमेंट, कोयला सब गैर-आदिवासी लोगों के हाथों में देकर ये अनाहार से सूखा शरीर लिये दूर से कल-कारखाने की शोभा देखते है। सबसे गन्दी बात है कि अकाल के दिनों मे देशी और विदेशी फ़ोटोग्राफ़रों के आने पर यह कैसे तसवीर खीचने देते है और आदमी के कैरिकेचर की तरह इन सारी शक्लो की तसवीरें बाहर प्रचारित होकर भारत की छवि नष्ट करती है। असल मे यह दोगले खच्चर है। पिछली सरकार मे आपात-काल की डाँट से इनके जीवन मे अकाल और सूखे का मामला लाद दिया गया था। वर्तमान सरकार ढीली होने से यह निरन्तर अपनी गरीबी बताने की सुविधा ले रहे है। आश्चर्य क्या है, इन जातों के लोप होने से सरकार जीवित रहेगी? भारत के बाहर की दुनिया के खाद्य निर्यात का मामला बदमाशी नहीं लगता? जो हो, आजकल बुरुडिहा अचल मे जगमोहन का विदेही प्रभाव अत्यन्त संक्रामक है। किताब मे सब लिखा है। इस अठहत्तर में कर्पूरी ठाकुर की जॉब रिजर्वेशन की सदेच्छा भी घूमकर अपने ही ऊपर चोट करने के बाद जगमोहन की किताब मे जुड गयी है। जगमोहन की घटना से ही प्रमाणित हो गया कि छोटे लोग सदा छोटे ही रहेंगे। ऐब्सट्रैक्ट—अमूर्त—ईश्वर, मूर्त काशी विश्वनाथ, हनुमान जी, रामजी—सबकी यही इच्छा है। इसके बाद भी कर्पूरी ठाकुर उछल-कूद करने गये और हिन्दू देवता वर्ग के हाथो दुरुस्त हुए। किताब लाखो-लाख बिकी और बुरुडिहा अचल की सवर्ण हिन्दू स्त्रियाँ उसे साईं बाबा और सन्तोषी माँ की तसवीरों के साथ रखकर उसकी पूजा करने लगी। इस तरह जगमोहन की मृत्यु क्रमशः बहु-उद्देश्यीय साबित हुई, किन्तु वह बाद मे विचार करने की बात है। जगमोहन का मामला राष्ट्र के जीवन मे कितनी बड़ी घटना है, पिछली सरकार को लौटा लाने के पक्ष में कितना बड़ा दिग्दर्शक है, उसे कलकत्ता के आदमी नहीं समझेंगे, क्योंकि वे कलकत्ता को और अपने को पूरा भारतवर्ष मानते हैं। उन्हे यह खबर भी

'जगल के महुओं के पेड पर हमारा हक है। फारेसगार्ड सुनता नही, पैसा लेता है।'

'महाजन पानी नही देता। कुआँ पंचायती है।'

शिकायत। शिकायत। शिकायत। कहते-कहते डरी हुई नजरों से आफ़िस के कमरे और अफ़सर को देखना। अदृश्य दीवार में सर टकराना। लौट आना। आते वक्त बहुत-से औद्योगिक कारखानों के कारण नये रईस बने राँची शहर को देखना। रोशनी और सवारियों और सिनेमाहाउस और शराब के बार और सजे-बजे नर-नारी। मासल स्वर में 'महबूबा, महबूबा' गाने का अश्लील आक्रमण। हटिया के रास्ते में 'बिरसा मुंडा' की काँसे की मूर्ति। ऊँची वेदी पर रखी मूर्ति की आँखें भावहीन थीं। 'जंगल के दावेदार' की भावना से वचित थी। दिकू-पुलिस-महाजन-सरकार और जुडीशियरी से पिसी अपनी सन्तानों को देखती है और काँसे की गूँगी भाषा में कह रही है, 'घर लौट जाओ, बाप लोगो! उलगुलान हुए बिना तुम्हारा निस्तार नहीं है।'

शब्दहीन कठ निराश है। जीवित बिरसा जानता था कि उलगुलान[1] होगा। मूर्ति को मालूम है कि उलगुलान न होगा।

आज पाँच बरस से राँची-पलामू-सिंहभूम की आदिम सन्तानों का जीवन कष्ट मे है। आदिवासियो का जीवन प्राणदंड के अभियुक्त-सा है। महाजन, जमींदार, प्रशासन, जुडीशियरी—उसके चार हाथ-पाँव है, चार घोड़ो मे बाँध घोडों को चाबुक लगा चारों ओर भगा दिया। जीवन का धड़ जजीर से बँधा पड़ा है। चारों हाथ-पाँव टूटकर उखड गये है। धड़ से खून बह रहा है और धीमे-धीमे मौत हो रही है।

लेकिन ऐसा होने की बात न थी, क्योंकि भारत के सविधान मे लिखा है कि इन सारी उपजातियों और आदिवासियो की सख्या तीस मिलियन है।...दे शुड थी मेड टु एनजॉय द प्रिविलेजेज ऑफ सिटिजनशिप ऐंड शुड बी एबल टू टेक पार्ट इन द मेकिंग ऐंड स्ट्रेंग्दनिंग द डेमॉक्रेटिक इन्सटिट्यूशंस इन द कट्री। दे शुड रियलाइज द फुल ऐडवाटेज ऑफ़

1. मुडा लोगो का आंदोलन।

बुलाकी जान भी न सका कि जगमोहन क्या घटनावली उत्पन्न कर देगा और सतहत्तर के अक्टूबर में वह बुरुडिहा नामक गाँव के पास के जंगल में घुसा।

दो

बुरुडिहा गाँव के मानव मानचित्र और प्राकृतिक विवरणवृत्त की इस कहानी के लिए बहुत जरूरत है।

गाँव के नाम से ही प्रमाणित होता है कि गाँव आदिवासी है। आदिवासियों से कभी बसे ग्राम के मानव मानचित्र में परिवर्तन बहुत समय पहले हो गया। गाँव में रहने वाले आदिवासियों की जमीन पर अधिकार प्रायः ग़रीबों का था। गाँव में सात सौ लोग रहते हैं। एक सौ चार परिवार हैं। अधिकांश परिवार गंजू जाति के लोगों के हैं। गाँव वास्तव में गंजू लोगों का था। उसके बाद पारसनाथ और बनारसीदास—दो लाला आ गये। धीरे-धीरे कुछ और लाला आकर रहने लगे। कुछ रैदास थे। दो घर धोबी और नाई थे। लाला लोगों ने स्वभावतः ही गंजू लोगों की जमीन-जायदाद हथियाकर गाँव को अपने सहारे कर दिया। गाँव में उनका महाजनी कारोबार था और सरकारी लाइसेंस का ताड़ीखाना भी उनका था। कपड़ों और परचून का रोजगार था।

बुरुडिहा दूकान चलाने लायक़ ठीक गाँव न था। लेकिन बुरुडिहा इस अंचल की सबसे बड़ी हाट की जगह था। यहाँ सोमवार और शुक्रवार को बड़ी हाट लगती। मिर्च, प्याज, धनिया आदि की बिक्री होती। मौसम के साग-सब्जी और फल बिकते। बुरुडिहा के पास ही, केवल मील-भर दूर, भालातोड़ था। वह गल्ले का बड़ा बाजार था। वहाँ वैष्णव मंडली का मठ और अस्पताल है। आदिवासी विकास दफ़्तर की शाखा और पुलिस-स्टेशन है। बुरुडिहा, भालातोड़—ये सब जगह रोडवेज़ से जुड़ी हुई हैं, रेलवे से नहीं।

इन लाला लोगों ने मिश्र को लाकर जमीन देकर बसाया। धीरे-धीरे

हनुमान मिश्र आस-पास की खेती की जमीन और फलों के बगीचे खरीदकर काफ़ी पैसे वाला हो गया। यथार्थ में इस जगली जगह मे हनुमान मिश्र जैसे ऊँची जाति के ब्राह्मण का आना और बस्ती बसाने का काम कितना बहु-मुखी है, यह कलकत्ते के लोग किसी तरह न समझ सकेंगे। कलकत्ता शहर में बस्ती और आराम से प्रेम रहता है, इसलिए रैदास जाकर चाटुज्जे के घर भात पकाता है। इससे शहर के लोग समझ लेते हैं कि भारत से जात-पाँत की समस्या मिट गयी है। शहरी और शिक्षित क्रान्तिकारी भी यह गलती करते है। उनकी नीयत में कोई सन्देह नही है, मारे जाते हैं भलाई के दस्तावेज़। लेकिन वे भी जब गाँव-गिराँव गये, तो जात-पाँत, छुआछूत और धर्म के तिगड्डे विरोध को नगण्य कर उन्होंने दूसरे बस-स्टॉप से काम किया।

यह गलत है। इस भारत-भूमि मे नंगे फटेहालों को लड़ाकू बनाने पर, कुरुक्षेत्र मे उतरने के पहले जान लेना होगा, जरूरत पड़ने पर गंजू और दुसाध लोग गुलबदन साहु को क्षेत्रपाल देवता और सूर्यदेव के प्रति उत्सर्ग कर केनाम्ब्रा पहाड़ से नीचे ढकेलकर मार सकते हैं। लेकिन हनुमान मिश्र के मन्दिर से लगे कुएँ से पानी लेने के लिए उनके हाथ नहीं उठेंगे।

उनको जानना चाहिए कि आर्थिक शोषण जिस प्रकार एक लक्ष्य है, उसी तरह दूसरा लक्ष्य है जात-पाँत, छुआछूत और धर्म। यह त्रिमूर्ति भवन की तरह ही भारतीयो के हृदय मे पक्का घर किये हुए है। भवन रहने पर उसमे परिचित मूर्ति की स्थापना करना चाहेंगे।

जो लोग इस पर विश्वास नही करते, उन्हे बुरुडिहा गाँव देखना जरूरी है। बुरुडिहा एक आणविक भारत-कॉसमॉस है। रैदास-धोबी-गंजू-दुसाध मे कौन किससे छोटा-बड़ा है, यह इन्होने निश्चय नहीं किया है। किसी समय बाम्हन ही सत्कर्म करते रहे होंगे। निश्चय ही उन लोगों ने समस्त पतित जातियों को विभाजित कर शासन करना चाहा था। उसी से बुरुडिहा की इन जातियो के रक्त मे एक विश्वास बैठ गया है। वह विश्वास इस प्रकार है—हर एक के साथ भोजन करना, पानी पीना नही हो सकता। कलवरिया में बैठकर माल पीते-पीते इसके-उसके पास से चरपरा चना खा सकते हो, तली चीज नही खा सकते हो। उसके साथ चाय पी सकते हो, मुरमुरे

समान ही लोप होने के मार्ग पर थे। किसी दिन वे भी झुंडों में अरण्य भारत में घूमते-फिरते थे, आज वे लुप्तप्राय है। लेकिन बुलाकी को लगता, आदिवासियों का कहना था, 'हम भी भारत के नक्शे से मिटे जा रहे है। अपने परिचय की रक्षा नही कर सकते। चाय बागान या कोयला खान के मजदूर बन कर हम आदिवासी नही रहते। मजदूर बने जा रहे है। मानव की विलुप्ति मे एक हाथी की विलुप्ति का क्या मूल्य हो सकता है ? उसकी और हमारी मृत्यु अच्छी ही है। सबके लिए। जमीदार और महाजन, काफी बाँस के पत्ते, धान, केले के वृक्षों से उसे जिन्दा रखा जा सकता है। हमे कर्ज और बेगार का पंजा उठा लेने से बचाया जा सकता है। हमे भूखो मारना ही शक्तिशालियों को इच्छित है। यह हम जानते हैं। उसे मान लिया है। अपने अस्तित्व को समेटते-समेटते हम लुप्त होते जा रहे है। तुम और तुम्हारा वह 'हाथी' नाम का बहाना है, जीवन के इस हिंस्र नियम को जितनी जल्दी समझ लो, उतना ही अच्छा है तुम्हारे लिए।'

यह क्रूर, उदासीन और तेज विद्वेष आजकल बुलाकी को घबरा देता। चरणदास उसे और जगमोहन को रिजेक्ट कर देगा, इस बात को वह समझता था। लेकिन ये लोग ? उसे तो कुछ चाहिए नही। पानी—बाँस की पत्तियाँ—बरगद की पत्तियाँ। इनमे से कोई भी पैसों से नही आती। नमक ? हाँ, तृणभोजी प्राणी को नमक की जरूरत होती है। जगमोहन संरक्षित जगली हाथी नही है कि फ़ॉरेस्ट डिपार्ट उसे नेचुरल साल्टलेक से नमक दे। बुलाकी नमक तो खरीदना चाहता है। जगल के आदिवासियों के जीवन में नमक ऐसी कीमती चीज है कि बुलाकी उनसे माँग नही सकता। 'अपने-आप दे दें, तो अच्छा है। न दें तो ? कोई हरजा नही, खरीद लूँगा। लेकिन आँखो मे थोडा-सा स्वागत तो दिखाओ। इस तरह से तिरस्कृत मत करो। अगर तुम भी तिरस्कार करोगे, तो मेरे कलेजे मे बहुत चोट लगेगी। बहुत दिनो से मैं और जगमोहन, सारे मौलिक अधिकारो से वचित है। हमारा पुरुषत्व भी तिरस्कृत है। इसीलिए तो मैं तुम्हारे गाँव-गाँव फिरता हूँ। तुम लोगो के साथ ही मैं अपने को बराबरी का सहज-स्वच्छद समझता हूँ। अपने अस्तित्व के लिए सकोच नही होता। अब क्यो रिजेक्ट कर रहे हो ? मैं नुकसान पहुँचाने वाला नही हूँ। मेरा हाथी तुम्हारे घर नही

ही खा सकते।

मनुष्य लोग बहुत सरल, डरपोक, ब्राह्मणत्व और उच्चवर्ण की श्रेष्ठता में विश्वास करने वाले होते हैं। उसका परिणाम होता कि छुआछूत की गड़बड़ करने पर 'जात गयी पाँत गयी' कहकर वे हनुमान मिश्रजी के पास ही भागते।

हनुमान मिश्र महापाप की बात सुनकर कान में उँगली देते और रोते। छाती पीटते और जल्दी-जल्दी मन्दिर की ओर देखते। उसके बाद वे विधान देते—पूजा, प्रायश्चित, सिर मुँड़ाना, जात भाइयों को अन्नदान। इससे फिर उधार लेना पड़ता। धर्म के पतन के घोर प्रायश्चित के काम में जो रुपये लगते, वह हनुमान मिश्र खुद ही उधार देते।

उराँव, मुंडा या हो—ये हनुमान मिश्र की आँखों के काँटे थे जिनके सृजन-कार्य में ब्रह्मा का कोई हाथ न था, कहीं के किसी सिबोंडा या हड़ाम-देउ ने उन्हें उत्पन्न किया था, उनके अस्तित्व की वे बिलकुल उपेक्षा करते। वे इतने पतित थे कि जातपाँत, छुआछूत समझते ही नहीं। पहले ही बताया है कि इन हनुमान मिश्र का बुरुडिहा रहने का काम गहरे मतलब से था। स्वतन्त्रता के तुरन्त बाद बुरुडिहा में एक अशान्ति की घटना हो गयी। बुरुडिहा में जंगल के किनारे कई घर उराँव के थे। एतोया उराँव की बहू बिखनी लालाबाबू के यहाँ मजूरनी थी। वह कुएँ से पानी भरकर अंदर औरतों के नहाने के लिए चहबच्चा भरा करती थी, खलिहान साफ़ करती, रसोई की लकड़ी के चैले फाड़ती। एक वक्त का जलपान, और महीने पर चार रुपये वेतन मिलता। इससे अधिक रुपये उन दिनों बुरुडिहा में कोई भी नहीं देता था। आज भी उस अंचल में बँधे हुए वेतन पर आदिवासी महीने में पंद्रह-बीस रुपये और एक बेला जलपान पाकर काम करते हैं। जलपान का मतलब भड़ुआ का सत्तू या घाटो होता है। उसमें भी बिखनी की बेडौल-सी उग्र देह थी। एतोया उस बात में बहुत ही सचेत था, और अगर बिखनी के ब्याह का भोज देने में लाला लोगों का कर्जदार न होता तो वह बिखनी को काम न करने देता।

हर महीने वह हिसाब करता, बिखनी का वेतन लाला लोगों के काट लेने पर मूल-ऋण का क्या चुकता हुआ! स्वभावतः असल और सूद में हिसाब

तोड़ता। मैं आदिवासी नही हूँ, अवांछित दिकू भी नही हूँ, मैं तुम्हारे जीवन मे महाजन और पुलिस नही घुसाता हूँ।'

इस पृष्ठभूमि से बुलाकी गाँव मे घुसता। इस सलाप से उसका अस्तित्व कितना विपन्न था, वह समझ में आता था।

सलाप ! बुलाकी और कोई ग्रामवासी। दोपहर का समय। धूलि-धूसर पत्थर चीनाघास के दाने चुन रहे हैं। बुलाकी उतरता है, जगमोहन उसकी ओर देखता है। स्वागत और बातचीत क्या होगी, जगमोहन यह जानता है। वह जानता है कि बुलाकी को खरी-खोटी सुनने को मिलेगी। गहरी सहानुभूति से वह धुँधली नजरों मे ममता भर कर बुलाकी को नहलाता। उसके बाद अलग हटकर स्थिर खड़ा हो जाता। अपने को और हटा सकने पर उसे चैन आता। लेकिन पैकिडर्म—मोटी खाल का जन्तु—चींटी नहीं है। अपना अस्तित्व औरों की ओट कर लेना उसके वश मे नही है। उसका अस्तित्व अब बहुत ही अवांछित है और सबकी आँखों में खटकने वाला है—यह जगमोहन सूँड़ का राडार चलाकर हवा से ही समझ गया। जगमोहन चुपचाप रहता, मानो विवर्ण पत्थर का हाथी हो जिसे सब भूल गये हों।

बुलाकी आगे बढ़ता है। मोनोलिथ—पत्थर के-से आदमी—चीना के दाने चुनते रहते है, सिर नही उठाते। दुबले-पतले, कोढ़े, तिल्ली और खून की कमी से आक्रान्त बच्चे अपने-अपने काम में लगे है। सब नगे हैं। प्राय. सबके पेट या गले मे तागे बँधे है। जिनकी उम्र पाँच बरस से आठ बरस तक है, वे चीना के दाने चुन रहे है। चार बरस के बच्चे तीन और दो बरस के बच्चों की रखवाली कर रहे है। एक बरस और उससे कम उम्र के बच्चे माँओं के सूखे, सिकुड़े चमड़े से किलनी की तरह चिपके पड़े है। सबमे एक ही समान चीज दिखती है कि प्रत्येक शिशु की आँखें निरुत्तर और मृत हैं। आठ बरस से ऊपर जिनकी उम्र है वे कमाने योग्य सदस्य है। आज दोपहर को धूप मे सब जगल गये है। काम है—बकरी या गाय चराना, ईंधन लाना, आलू की जाति के कन्द या सरस जड़ों की तलाश। अन्न के दो काम प्राय: व्यर्थ रहते है। उस हालत मे वे इमली के पत्ते लेकर लौटते है। जगली लोगों की तरह ही ये लोग इमली के पत्तों के कई उपयोग जानते हैं। घाटो में इमली के पत्ते और नमक मिलाने से घाटो

उलझ गया और उलझा हिसाब किसी आदिवासी की समझ से बाहर की बात है। एतोया का लगता कि वह देता जा रहा है और उधार चुक नहीं रहा है। उसका नतीजा था कि उसके मन में लाला पर गुस्सा बढ़ता रहा।

एक दिन उसने जाकर लाला के बड़े लड़के को पकड़ा, 'कितना रुपया चुकती हुआ, कितना बाकी है, समझाकर बता। वह कितने दिन और काम करे कि उधार चुक जाये ?'

जवाब उसके मन के मुताबिक न मिला। उसने कहा, 'तू जरूर झूठा हिसाब दिखा रहा है। यह नहीं है।'

वह गाली देकर उठ आया और मन का दुख भूलने के लिए हाट में मिर्च बेचने गया। वहाँ जाकर महुआ पीने बैठ गया। तब महुए में मस्त एक दूसरे उराँव ने उसे समझाकर कहा, ''तेरा उधार चुकने का नहीं। इस जन्म में नहीं।'

'क्यों ?'

'दिकू से उराँव के उधार लेने पर चुकता नहीं। किसी का नहीं चुकता और...।'

'और क्या ?'

'सनीचरी से पूछ।'

सनीचरी एक ओर बैठी महुआ पी रही थी और जीभ पर तली हुई मिर्च लगा रही थी। उसने दारू पीकर ओठ पोंछ जो कुछ कहा उसका सारांश यह है : बिखनी की देह में जवानी रहते वह उधार नहीं चुकेगा ! सनीचरी के आदमी ने लाला से बीस रुपये उधार लिये थे। महीने में दो रुपये वेतन और जलपान पर इन लाला के बाप के पास जवान सनीचरी लगी। यह पच्चीस बरस पहले की बात है। दस बरस काम करने पर भी वह उधार नहीं चुका। सनीचरी का आदमी उस कर्ज के दो बरस के भीतर मर गया। सनीचरी को बचाने वाला कोई रह नहीं गया। उसकी जवानी भी बहुत दिनों तक रही। जब तक जवानी रही, तब तक सनीचरी ने बुड्ढे लाला को शरीर और परिवार को मेहनत देकर कर्ज चुकाने का प्रयत्न किया। उसकी जवानी और बुड्ढे लाला की जिंदगी एक दिन समाप्त हुई। उधार आज तक नहीं चुका। सनीचरी अब काम करने नहीं जाती, और

स्वादिष्ट हो जाता है।

बुलाकी काम मे लगे मोनोलिथो के पास खड़ा रहता है। उसकी छाया आदमियों पर पड़ती है। समय बीतता है। छाया लम्बी होती है।

छाया लम्बी होने का समय बहुत करुण होता है। दोपहर भी नहीं, तीसरा पहर भी नही, सूर्य पश्चिम की ओर खिसक रहा है। आरण्य ग्राम है। सब सन्नाटा है, थकी धूप मे तपी धरती ताप बिखेरती है। ऐसे समय गाँव के बुजुर्ग या पहान को भी चुप रहने से, बुलाकी की उपेक्षा करने से थकान आती है। वह बात करता है। बाहर से आये की उपेक्षा की जाये, यह क्या आदिवासियो के बस की बात है? हाथी भी तो बाहर से गाँव में आया है! बाहर से आये हुए को स्वीकार करना भारत के आदिवासियों की नियति है।

'क्या चाहिए?'

'पहान तुम?'

'उधर चलो।'

बुड्ढा बुलाकी को लेकर खिसक जाता है। लँगोटी लगाये सूखे शरीर मे उपयुक्त मर्यादा लाने का प्रयत्न कर रहा है। प्रयत्न ही भारत-भूमि में एक व्यक्ति के समय संभव हुआ था। जाति के जनक के समय। ओरांव, या हो, या मुंडा गाँव के बुजुर्ग की क्या यह सामर्थ्य है कि उनकी तरह इस काम मे सफल हो? जनश्रुति है कि कौतुकमयी और मातृभाव से परिपूर्ण सरोजिनी नायडू ने स्नेह से राष्ट्रपिता से मजाक मे कहा था, 'उनकी गरीबी बनाकर चलने म हमारा कितना खर्च होता है, काश वे इस बात को जानते!' उद्दिष्ट व्यक्ति के संबध मे ब्रिटिश शासको की सुरक्षावाहिनी के ख़र्च की बात उन्होने कही थी। हमारी बात का विशेष अर्थ है। अत तक सारा खर्च-वर्च, टैक्स आदि जनता की गरदन तोड़ कर ही वसूल होता है।

बुलाकी के साथ बातों मे लगे गाँव के बूढे के लँगोटी के सहारे वाली गरीबी मे भारत सरकार का कम ख़र्च नही होता। कानून बनाने के लिए संसद के चुनाव का ख़र्च, जुडीशियरी का ख़र्च, महाजन को, धनी और जमींदार को सर्वशक्तिमान बनाये रखने का ख़र्च, आदिवासी [illegible] दफ्तर चलाने का ख़र्च, इनको मार-पीटकर ठीक रखने का [illegible]

अब उसने कह दिया है कि 'अब काम नहीं करूँगी। जेहल भेजना हो तो भेज दे।'

इसके बाद सनीचरी ने महुए के जोश में आये आकुल हृदय से एतोया से कहा, 'बिखनी को लेकर भाग जा। लाला का छोटा लड़का शैतान है। वह बिखनी को छोड़ेगा नहीं।'

एतोया जानना चाहता था कि बिखनी ने क्या खुद धोखेबाजी की है?

सनीचरी सांसारिक दार्शनिकता के साथ बोली, 'आज नहीं की तो कल करेगी।'

बातों का नतीजा अच्छा नहीं हुआ। दारू पीकर एतोया ने लाला के छोटे बेटे को काट डाला और भालातोड़ जाकर थाने में दारोगा से कहा कि उसने बुरुडिहा के गोविंद लाला को मार डाला है। जो करना हो कर ले।

उक्त हत्याकांड में असामी के खुद इकबाल करने पर भी दारोगा को मौके पर जाना पड़ा। आकर तीन दिन बुरुडिहा रहना पड़ा। दारोगा की पदवी पांडे थी। वह सदाचारी मैथिल ब्राह्मण था और बुरुडिहा में तीन दिन रहने के समय उसने लाला के यहाँ अन्न-जल नहीं लिया। पुत्र-शोक के ऊपर ब्राह्मण के भूखे रहने के शोक से लाला-जननी का कलेजा फट गया। इसका फल दूरव्यापी हुआ। परिणामस्वरूप एतोया को काला पानी हुआ और वह जेल में ही मर गया। बिखनी को मृत गोविन्द के बड़े भाई ने जबर-दस्ती दखल कर लिया। लाला लोगों ने भालातोड़ के वैष्णव समाज के गुरु की सहायता से हनुमानप्रसाद मिश्र को लाकर गाँव में बसा दिया। आदि-वासी और अन्त्यज बेल्ट के गाँवों की शान्तिरक्षा के काम में ऊँची जाति के हिन्दू को नियुक्त करने की प्रशासन की इच्छा न थी। उससे आदिवासियों और अन्त्यजों को न्याय न मिलता। किन्तु कार्यरूप में उक्त व्याख्या के सारे ग्रामरक्षक थानों में पांडे-ठाकुर-मिसिर नियुक्त हुए, और बुरुडिहा के आस-पास सारे गाँवों में मौके पर जाँच या जाँच के आदेश आने पर वे हनुमान मिश्र के घर वैष्णव भोजन करते।

दस के क़रीब गजू परिवारों की जमीन पर क़ब्ज़ा कर लाला लोगों ने वह सारी जमीन मिश्र को दे दी थी। हनुमान मिश्र लाला लोगों के भात में हाथ न डालकर अपना ही वैभव बढ़ाते रहे। वह अचल चोटी,

का खर्च—इतना ख़र्च करने के वाद ये ग़रीब है, या ग़रीब रहना ही ठीक
है। इससे तो इनको धनी वना देने में कम ख़र्च होता। लेकिन, उस तरह
के परपरा-विरोधी काम की परपरा-प्रेमी भारत से आशा नहीं की जाती।
अधिकांश लोगों को भूखा और नगा रखने में विदेश के करोड़ों रुपये
कर्ज है।

'उधर चल' कहकर बूढ़ा बुलाकी को लिये चला गया। उसका
कारण महान था। औरतों की इज्जत बचाना। आदिवासी जीवन में घुस-
कर बाहर का आदमी सामान्यतः आदिवासी औरतों की इज्जत लेकर चला
जाता है। यही नियम है। जन्मजात अधिकार का ढग है। जब आदिवासी
औरतें हैं, और उनके शरीर भी हैं, तो वह बाहर से आनेवालों के लिए है।
बुलाकी बहुत पहले से ही शरीर से पुरुषत्व का अधिकार जताना भूल
गया था और गाँव का बूढ़ा इस बात को नहीं जानता था।

बुलाकी और बूढ़ा किसी पेड़ के नीचे बैठ गये। बुलाकी ने बीड़ी दी,
बूढ़े ने नहीं ली। अपनी टेंट से पत्ता निकालकर चकमक ठोक कर उसे
जलाया।

'तुम कौन हो?'

'बुलाकी।'

'हाथी लेकर यहाँ क्यों?'

'उसे थोड़ा पत्ता-अत्ता खिलाऊँगा। थोड़ा-सा नमक ख़रीदूँगा।'

'नहीं है।'

'क्या?'

'नमक।'

'दूकान में नहीं है?'

'गाँव की दूकान में नहीं है।'

'हाट में?'

'हमें नहीं वेचा जाता।'

'क्यों?'

'वहीं बन्दूकें छिनी, जमींदार के खलिहान में आग लगी, पुलिस को
किसी ने बम मारे। जगल में कुछ लोग छिपे। पुलिस ने हमारे साथ बुराई

तिरही, कुहला और झिठरी—चार नदियों से घिरा, वनों से समृद्ध और नरम धरती का था। मालाहातू के जमीदार-वंश के अधिकार के गाँवों में फल के काफ़ी बगीचे थे। अमरूद, शरीफा, आम, लीची, पपीता और जामुन के पेड़ बहुत थे। कुँजड़े या थोक खरीदार बगीचे के फलों का अंदाज लगाकर फ़ारवर्ड ट्रेडिंग कर बगीचे के मालिक को पेशगी थोक रुपये देकर भविष्य में होने वाले फलों को खरीद लेते।

हनुमान मिश्र लाला लोगों के हिस्से में हाथ न डालते थे। ये एक के बाद दूसरा बगीचा खरीदते रहते। हर बगीचे में मिश्र-वंश के किसी बेकार आदमी को बसा देते। कुँजड़ों से तय होता कि हर बगीचे से घर के लोगों को खाने के लिए फल देने होंगे। इस तरह फलों के बगीचे ख़रीदे जाते। यथार्थ में मिश्रजी ने दूर-दूर तक अपना घेरा डाल दिया। वह अंचल ऐसा अजब था कि यहाँ का प्राकृतिक भूगोल भी सोचने में बुरा था। बुरुडिहा, पालानी, टाहाड़ इत्यादि जगहों में रहना बेकार था। दो मील दूर बस-स्टेशन पर खाने के नाम भीगे चने और प्याज मिलते थे। मिश्रजी के आदमी दूसरे बस-स्टेशनों पर फल बेचने वालों से मारपीट कर उन्हें हटा कर अपनी बिक्री करते। मालातोड़ थाने को वे हर साल इतने फल भेजते कि फलों से भरे थाने पर मिश्रजी के विरोध की कोई रिपोर्ट ली ही नहीं जाती थी। उनके आदमी औरतों, बुड्ढे-बुढ़ियों और बच्चों को ख़ास तौर पर पीटते और उन्होंने एक आतंक का राज्य क़ायम कर दिया था। ब्राह्मणों, देवताओं के खिलाफ कोई भी शिकायत सुनी नहीं जाती थी।

आस-पास किसी झगड़े की जमीन की ख़बर वे मालातोड़ के थाना और पटुलिहा की कचहरी से पा जाते और जमीन-जायदाद खरीदते रहते। मिश्र-परिवार की नीयत न साफ थी। इससे ऐसी जमीन-जायदाद में मिश्र लोग घुस पड़ते। इस पर स्थानीय कांग्रेसी पंचायत के प्रधान ब्रजभूषण शर्मा का ख्याल गया। उसने खुद आकर मिश्रजी से मुलाक़ात की और कहा, 'आपने जो किया वही देश की सेवा है।'

'कैसे?'

ब्रजभूषण शर्मा बड़ा प्रतापी और जबरदस्त आदमी था। उसके शासन में पंचायती कुआँ और प्राइमरी स्कूल सवर्ण हिन्दुओं के अधिकार में थे।

की। उसी से नमक नही विकता। सजा दी है।'

'नमक नही वेचते ?'

'दो हाट, तीन हाट नहीं विका, एक बार विका। फिर बन्द कर दिया।'

भागे हुए विद्रोहियो की सहायता के सन्देह मे नमक बद करने के माने कि यह वहुत ही चालाकी-भरा उत्पीड़न है। सोच कर वुलाकी को बड़ा ताज्जुब हुआ।

'कौन नही बेचता ? पुलिस ने हुकुम दिया है ?'

'न। महाजन, जमीदार सभी सोचते हैं कि हम उनको उखाडने मे मदद कर रहे हैं। इसीसे हमको नमक नहीं बेंचते।'

'हाट में ?'

'हाट जमीदार कंट्रोल करता है।'

'मैंने सोचा...।'

'क्या ?'

'यहाँ तीन दिन आराम करूँगा।'

'न।'

'क्यों ?'

'तीर मार-मार कर गिरा देंगे।'

'कौन ?'

'रिजर्व फॉरेस्ट में हाथी को, हिरनों को नोनखरी मिट्टी दी जाती है। लोग मिट्टी चुराते हैं। तुम बाहर के आदमी हो। तुम से बात फैलेगी। इसमे मार डालेंगे।'

'मैं किसी से नही कहूँगा। बहुत दिनों से घूम रहा हूँ। हाथी बूढ़ा हो गया है। बहुत थक गया है। थोड़ा आराम कर लेने...।'

'न।'

'तुम तो गाँव के बुजुर्ग हो।'

'न, हाथी जल पियेगा, तुम नहाओगे। पानी कहाँ है ? कुंड मे जरा-सा पानी है। हाथी मांग लेगा।'

'कहाँ जायें ?'

'पारेग—जंगल—जाओ। बोंमाडी जाओ। मनभुड़ा जाओ, वहाँ से

उनका कहना था कि ब्राह्मण के सामने रहने पर हिन्दुओं के कलेजे में ताकत आ जाती है। मिश्रजी की दूरदर्शिता के कारण अंचल में सब जगह ब्राह्मणों का केन्द्रस्थल बन गया है। खत्री, भुईंहार, लाला—इनमें ब्राह्मण सबसे बडा देवता है। अंचल में दुसाध-रैदास-गंजू-आदिवासी की प्रधानता बहुत है। इनको दबाये रखने की बहुत जरूरत है।

मिश्रजी बहुत हँसकर बोले, 'लेकिन इनकी देख-भाल करने के लिए सरकार बहुत मदद भी देती है, और इन्दिरा जी भी वही चाहती है।'

'देवता, ऐसा चाहने के बाद वे नसबन्दी क्यों करा रही हैं? इनकी संख्या न बढ़े, इसलिए? सरकारी दफ़्तर, अमला हैं? क़ानून जो भी कहे, अदालत, पंचायती दफ्तर, बी० डी० ऑफ़िस, थाना—सभी हमें मदद देते हैं। अब तक मैं अकेले लड़ता था। अब देवताओं को सामने पा गया हूँ। किस तरह इनको काबू में रखा जाये, वह दिखा दूंगा।'

'आपने जो कुछ कहा, वह ठीक नहीं है, खत्रीजी! आप। और हम पढ़े-लिखे लोग हैं। यह समझना चाहिए कि हम दोनों भारतीय हैं। आपको मालूम है कि अछूत और आदिवासियों के लिए सरकार ने बहुत-से कानून बनाये हैं।'

'क़ानून से क्या होता है देवता, कानून तो कागज पर स्याही से लिखा रहता है। क़ानून को बलवान बनाता है आदमी। पढा-लिखा आदमी। मैंने क्या कहा? उन्हें जान से मार दूंगा? नही, नहीं। लेकिन आप जो जूतो के नीचे मिट्टी मसलते हैं, उसका तो माथे पर तिलक नही लगाते? यह भी ठीक नही। जूते के नीचे की मिट्टी से यह बात कहना ठीक नही कि तुम तिलक की मिट्टी बन सकते हो।'

'यह तो ठीक बात है।'

'मेरी पंचायत मे एक ही नीति है। सरकार ने स्कूल भी बनवाया। किन्तु मैं बताये देता हूँ, लिखाई-पढाई करने से तुम्हें कोई लाभ नही। मरे जानवर का चमडा कौन साफ करेगा, कौन जूते बनायेगा, कौन कुली का काम करेगा—यह सब सोचकर भगवान ने तुम लोगों को बनाया है। पढ़ाई का तुम क्या करोगे? तुम्हारे पढने के लिए आने पर ऊँची जाति के मास्टर पढायेंगे नहीं, लड़के भी नही पढेंगे। देवता! यह सब जगह जगली जगह है। शहर की हवा यहाँ नही आती। राजा की तरह रहें, कुछ फिकर न करें।'

जाओ।'

अँधेरे वन की छाया में बुलाकी सूखी चोटी नदी के किनारे चला गया। बहुत खोज के बाद जगमोहन की राडार की-सी सूंड ने कीचड़ से भरा एक पानी का गड्ढा ढूंढ निकाला और उसमें उतर गया। बुलाकी समतल पत्थर पर लेटा जगमोहन की लम्बी-लम्बी फों-फों की-सी साँसें सुनता रहा। कब तक इस तरह चराता रहेगा, सोच रहा था। और इसी बीच सो गया। नदी की सूखी छाती पर से हवा के झोंकों से बालू के कण उड़ रहे थे। बालू के झोंकों से जगमोहन की चमड़ी फटने लगी और वह हिलने-डुलने लगा। इस तरह लेटे रहने में बहुत बेचैनी हो रही थी। फिर भी शत्रुतापूर्ण आदिवासी गाँव के मुकाबले यहाँ लेटकर बुलाकी को चैन आ रहा था।

सवेरे फिर क्लान्त-क्लान्त यात्रा शुरू हुई। जगमोहन के साथ रहते-रहते बुलाकी खुद भी आधा जगमोहन हो गया था। जगमोहन को उत्साह देने के लिए वह आम महावतों के शब्दों का व्यवहार वैसे ही नहीं करता था जैसे दल को छोड़ने वाले दल का एम्ब्लेम-बैज-पताका का व्यवहार नहीं करते।

अब जगमोहन और वह, हाथी और महावत नहीं रह गये थे। वे फ़ोर्स्ड रेनीगेड—जबरदस्ती के कारण दल छोड़ने वाले बन गये थे। जगमोहन जंगली हाथी नहीं था। चरणदास का गुलाम बनने के बाद उसका आदिम चरित्र खो गया था। अरण्य हाथी होने से वह अरण्य पैकिडर्मों के नियम के अनुसार पुत्र-पति-पिता होता। यूथपति बना घूमता। अन्तकाल होने पर सम्मान के साथ मरता। पर वह अरण्य हाथी तो न था।

और वह सही आदमी का पाला हुआ हाथी भी न था। उस तरह के हाथी व्यक्तिगत फ़ीलखाने में या सर्कस के तंबू में या चिड़ियाघर के घेरे में खाये-पिये संतुष्ट चेहरे से विराजते हैं। आदमी के साथ उसकी कमाण्डरी—उसका साथ—नहीं होता।

हाथी के रूप में जगमोहन के व्यवहार अनुचित थे। वह बुलाकी के सिवा किसी और आदमी पर विश्वास नहीं करता था। जंगली हाथी देख डर कर भागता। गाँव के कुत्ते भूँकने से भी उसे डर लगता। इसीलिए जमींदार उसे खरीदते नहीं थे। हाथी हैसियत की निशानी जरूर होता है।

बात कहते समय ब्रजभूषण की आँखें और चेहरा पवित्र दीप्ति से चमकने लगा। हनुमान मिश्र को यह समझना बाकी न रह गया कि ब्रजभूषण धर्मान्ध व्यक्ति है। उन्हें बहुत खुशी हुई। धर्मान्ध आदमी और धर्मान्धता बड़ी अच्छी चीजें है। वह अगर अछूतो और आदिवासियो को दबाकर रखने मे सहायक हो तो और भी अच्छा है, क्योंकि वे फलों के बगीचे, जमीनें और दूसरी तमाम पार्थिव सम्पत्ति बढ़ाना चाहते है, उसमे मेहनत-मजूरी के लिए इन अभागो की जरूरत होती है। वे अगर लिखे-पढे हो, अपने हको के बारे मे जानकार हों, तो हवा बिगड़ जायेगी। यथार्थ में पटना, राँची, गया, आरा, छपरा मे छोटी जात के रिक्शेवाले जिस ढग से बात करते है, उससे बाम्हण के खून मे आग लग जाती है।

हनुमान मिश्र समझते है कि ब्रजभूषण खत्री उनकी भरसक मदद करेंगे। वे बहुत खुश हुए और बोले, 'आजकल के जमाने मे आप-सा आदमी होता है, यह नही जानता था।'

ब्रजभूषण खत्री भी बहुत जोश में भरे अपने गाँव को लौट गये। इसके बाद उस अचल में असाधारण रूप से कई महत्त्वपूर्ण घटनाएँ हुईं।

बड़े आश्चर्य की बात थी कि बुलाकी या जगमोहन कुछ जाने बिना भी हर महत्त्वपूर्ण घटना के समय किसी-न-किसी तरह से घटनाओं के घेरे मे रहे।

अपने गाँव लौट जाने के बाद ब्रजभूषण खत्री ने अपने बेटे की शादी की और बेटे-बहू को हाथी की पीठ पर बैठा कर बारात को हनुमान मिश्र के मन्दिर में ले जाकर देवता का आशीर्वाद लेने का निश्चय किया। यह प्रस्ताव सबके मन के मुताबिक था और तभी भयकर घटना ने खेल दिखाया। गाँव मे जिस तरह सब लोग खेतों में जाकर मल-त्याग करते हैं और 'घर के पास सडास नही बनाते'—वैसे ही शिक्षित और आलोक-प्राप्त ब्रजभूषण भी जौ का खेत उपजाऊ बनाने गया—और अचानक देखा कि जौ के खेत के बीच की राह पकड़कर एक निकम्मा हाथी और निकम्मा महावत आ रहे हैं। ब्रजभूषण का व्यक्तित्व तेज था। इसी से मल-त्याग करते-करते उसने पूछ लिया :

'किस का हाथी है ?'

ब्याह-शादी मे हाथी पर बैठा जाता है। लेकिन हाथी माने जरूरत भी होती है। प्रजा या कर्जदार के घर या धान के ढेर को खूंदने-खाँदने, गाँव को उलट-पलट करने के बहुत काम आता है। जगमोहन को देखते ही जमीदार जाति के अपेक्षित खरीदार समझ जाते है कि जगमोहन से ऐसे जरूरत के काम न होंगे। चरणदास द्वारा मर्दानगी अस्वीकृत होने के फलस्वरूप जगमोहन का नामर्दी का यह हाल हो गया है। इस दुनिया मे निरीह कर्ज़दार का घर और ढेर खूंदने-खाँदने के लिए पौरुष की जरूरत होती है। क्योंकि जिसका कोई बचाव न हो उसे अत्याचार से पीसने की सारी शक्ति पौरुष के पूर्ण परिचय मे लगानी पडती है। उन्नत देशों मे मनुष्य के पौरुष के सहायक उन्नत अस्त्र रहते है। उपनिवेशपूर्व भारत-भूमि मे ग्रामवासियों को तंग करने में हाथी बहुत सहायक होता था। हाथी के रूप मे जगमोहन असफल है।

पुरुषत्व से वंचित बुलाकी भी महावत के हिसाब से बेकार था। चिड़ियाघर या सर्कस या सरक्षित जगल मे घूमने वाले पालतू हाथी का महावत भी वह नही था। व्यक्तिगत मालिक का महावत भी वह नही रहा। सारे महावतो के जीवन मे नियत वेतन और सन्तुष्ट पुरुषत्व के परिणामस्वरूप चेहरे पर आत्मविश्वास रहता है। ये सारे महावत जानते है कि पुरुषो के मानचित्र पर वे कहाँ पर है। बुलाकी को देखते ही मालूम हो जाता है कि वह डरपोक है, अपने अस्तित्व के लिए क्षमाप्रार्थी है और वह कही का नही है।

किस विश्वास पर, विफल होकर चलने पर बुलाकी महावत की बोली बोलता ? वह महावत होकर भी महावत नही है। जगमोहन हाथी होकर भी हाथी नही है। इसलिए बुलाकी कई अजीब शब्द बोलता—कोमाडी। कोमांडी जगमोहन ! हेहेगडा मेरे लाल ! जुजूभातू जुजूभातू मेरे यार !

आदमियों के मानचित्र से बुलाकी कितना निकल गया था, उल्लिखित शब्दावली ही उसका प्रमाण थी। कोमांडी—भुरकुंडा—हेहेगडा—जुजूभातू कई जगहों के नाम थे। इन सारे विकट नामों से वह हाथी हांकता था। साथ ही हाथी को 'लाल' और 'दुलारा' कहता। फिर दोस्त वाला शब्द 'यार' भी कहता। 'लाल' और 'दुलारा' कहना उसके पागलपन का ..., क्योंकि वह और जगमोहन एक उम्र के नहीं थे। किसी हमउम्र

'महन्त का ।'

'महन्त कहाँ है ?'

'बनारस में ।'

'यहाँ हाथी लेकर क्यों घूम रहे हो ?'

'हुजूर...!'

'अगर जी खा जाये तो ?'

'नहीं हुजूर !'

'यहाँ क्या कर रहा है ?'

'भाड़ा मिलने पर, सवारी मिले...इसी तरह हाथी की खूराक चलाता हूँ, हुजूर !'

'ठहरो, आ रहा हूँ ।'

ब्रजभूषण ने जरूरी काम निवटाया। उसके बाद बुलाकी के साथ भाव-ताव हुआ। अन्त में हाथी की खूराक और दस रुपये देना तय हुआ। बुलाकी को जलपान भी।

बहुत खुश होकर बुलाकी ने जगमोहन को नहलाया और बरगद के पत्ते खिलाये। इसके बाद घुले रंग से जगमोहन के माथे पर और सूँड पर अल्पना आँकी। खुद भी भरपेट सत्तू, मट्ठा और भेली गुड़ खाया।

लेकिन भाग्य का फेर। खबर आयी कि देवता धनबाद चले गये। दस दिन के पहले लौटेंगे नहीं। दस दिन बाद कोई शुभ दिन पचांग में निकलता नहीं था। इसलिए ब्रजभूषण ने बुलाकी को विदा कर दिया। जगमोहन को भी। बुलाकी झुझार की ओर चला गया। बुरुडिहा आते-आते जाना न हो सका।

अब उस ओर एक महत्त्वपूर्ण घटनावली घटती रही।

(एक) झुझार गाँव के प्राइमरी स्कूल के मास्टर बालकृष्ण सोशलिस्ट पार्टी के आदमी थे। उन्होंने आते ही ब्रजभूषण खत्री का कट्टर वर्ण-विद्वेष पकड़ा, और ब्रजभूषण के हर सार्वजनिक काम के पीछे इस मानसिकता को देखा। उसकी ऐसी धारणा इसलिए हुई कि उसे खूँटे का जोर था। लगा कि राँची में म्याऊँ पकड़ाने वाला आदमी है। लेकिन वन-विभाग का जंगल, जमींदार की जमीन और बाँझ पथरीले पत्थरों के क्षेत्र के

दारू के नशे में बैठ हँसी-मजाक में ठोडी पकड़ कर 'दुलारा' और 'लाल' कहना तो बेमानी न होता। महुए के नशे में आदमी बोतल को भी 'प्यारी' कहकर चूम लेता है। सुनसान रास्ते पर मृतप्राय समवयस हाथी को हाँकने के लिए 'दुलारा' और 'लाल' कहना बहुत ही व्यंजक होता है। इस संबोधन को केवल आसमान, पेड़ और सड़क सुनते। जगमोहन भट्टी की तरह फों-फों कर साँस छोड़ते हुए चलता रहता।

बड़हाई रेल का स्टेशन है। वह कुलियों की बस्ती है। वहाँ बरगद के पेड़ है। 'थोड़ा पानी मिलेगा, भैया? थोड़ा पानी! हाथी के लिए?'

'इंजन का पानी लो।'

'गरम है?'

'नहीं, लेकिन...।'

धातु के स्वाद का बेसवाद पानी चहबच्चों में भरा था। स्टेशन में आग लगने पर बुझाने के लिए था। जगमोहन ने पानी पिया।

'यहाँ क्या नदी या ताल है?'

'कहाँ? पानी मिलता ही नहीं।'

'क्या धारा भी नहीं है?'

'पतरा में देखो।'

'ये पीपल का पेड़ किसका है?'

'टीसन के जमीन में है।'

जगमोहन का लंच बड़हाई में बरगद के पत्तों का हुआ। चार मील दूर पतरा के नाले में स्नान हुआ। डिनर के लिए बड़हाई लौटना हुआ। लेकिन डीजल इंजन की सीटी से जगमोहन थर्रा गया। फिर चलना हुआ। टाहाडा-नालिगातू-जुमारो-सागु-मोचरा—एक के बाद एक जगह।

इस तरह यह चलते-चलते ही एक दिन सहसा और कोई राह न रहने पर, सब रास्ते समाप्त होने पर जगमोहन मर जायेगा। बुलाकी यह जानता था। वही डर अब उस पर छाया रहता। वह मौत भी बिलकुल चुपचाप आयेगी। प्रायः मिटे हुए दो बिन्दुओं में एक की अन्तिम विलुप्ति। भय। उसके बाद? शून्यता, शून्यता, शून्यता? चलो जगमोहन, मेरे लाल, मेरे यार! हेहेगडा-हेहेगडा जगमोहन—कोमान्डी 'कोमान्डी।'

थलग आदिवासी गाँव जो असल में राँची से सौ लाख योजन दूर हैं, इसे उसने न समझा। बस-रूट से दूरी नही है, यह दूसरी दूरी है। राँची नया भारत है। गाँवो मे नियनडर्थल युग चल रहा है। पानी नही, महुए के तेल की लाल रोशनी ही एक मात्र वत्ती है, महुआ या मक्का या चीना-दाना का घाटो एकमात्र स्टेप्ल फूड (मुख्य भोजन) है। नमक विलासिता है। रोग मे, कष्ट मे नये भारत मे घृणित मिशनरी एकमात्र सहारा है। बरस-भर उधार-कर्ज के लिए जमीदार या महाजन एक मात्र सहायक होता है। ये लोग ऐसे तुच्छ और नगण्य है कि चुनाव के समय इन्हे कोई प्रति-व्यक्ति एक रुपया देकर भी वोट न दिलाता। महाजन या जमीदार या ब्रजभूषण आँखें लाल कर जिसे वोट देने को कहें, ये लोग उसे ही वोट दे आते।

नासमझ बालकृष्ण को लगा कि इनके प्रति अन्याय हो रहा है। उसने बीच-बीच मे भालातोड़ थाने मे रिपोर्ट भी की। ब्रजभूषण समझ गया कि इस छोकरे को टाइट करना होगा।

मामले का अभाव नही होता। कॉलरा की महामारी मे इजेक्शन देने के लिए आयी हुई सरकारी जीप झुझार ग्राम की उपेक्षा कर चली गयी। इसका कारण जानना चाहने पर ब्रजभूषण घमड के साथ बोला, 'जो सुई वर्ण हिन्दू को इजेक्शन देगी वही सुई अछूत और आदिवासियों के लगेगी ?

'नही, नही, मास्टर साहब ! यह नही हो सकता है। इस जली आजादी के बाद ऊँची जाति के हिन्दुओं का इन अछूत और आदिवासियो के दबाव मे लोप हो रहा है। बस अब खून की पवित्रता रह गयी है। शरीर में खून रहते ब्रजभूषण उसे नष्ट नही होने देगा।'

बालकृष्ण सिंह आवाज मे यथासाध्य व्यग्य लाते हुए बोला, 'इन्हें कॉलरा होने पर कौन देखेगा ?'

ब्रजभूषण खत्री कठोर गम्भीरता के साथ बोला, 'बुढ़हिहा मे जीते-जागते देवता हैं—हनुमान मिश्र। वे भगवान को पुकारेंगे। जीवन और मृत्यु निम्न-पक्ष कर नापने की चीज नहीं होती। जब इजेक्शन नही थे, तब क्या सब लोग कॉलरा से मर जाते थे ?'

स्वास्थ्य-केन्द्र पर बालकृष्ण सिंह के भागदौड़ करने पर भी कुछ न हुआ। वह समझ गया कि ब्रजभूषण और हनुमान मिश्र को [illegible] कर

सरकारी कर्मचारी भी कुछ करने को तैयार नहीं हैं। ब्रजभूषण केवल पंचायत का ही प्रधान नहीं, इस अंचल का सबसे प्रतापी और प्रभावशाली व्यक्ति है।

बालकृष्ण सिंह पर भी बेकार की ज़िद सवार हो गयी। कॉलरा फैलने लगा। आस-पास के गाँव में लोग मरने लगे। इसके बाद उस झुझार गाँव में लोग मरे। इसके बाद उसने समझाया और कहा, 'मैं झुझार में हैजे की सुई दिलाऊँगा। राँची जा रहा हूँ। राँची से डॉक्टरों की गाड़ी लाकर सुई लगवाऊँगा।'

गाँव के बूढ़े ने अपनी सहिष्णु, शान्त और पीले रंग की आँखें उठाकर बालकृष्ण की ओर देखा। वह बोला, 'कुछ नहीं होगा रे!'

'क्यों?'

'झुझार में हैजा फैल रहा है।'

'किसने कहा?'

'मिश्रजी ने कहा।'

'किससे कहा?'

'खत्रीजी से।'

'कब कहा?'

'रोज कहते हैं।'

'न, न, डरा दिया था।'

'कहा था कि सुई लगवाने से मर्दों को खाँसी हो जायेगी। सरकार नसबन्दी कराना चाहती है। मरद लोग खाँसी होने के डर से नसबन्दी नहीं कराते। इसलिए हैजे की सुई लगाते हैं और मर्दों को खाँसी, औरतों को बाँझ किये दे रही है। वही कहते हैं।'

'वह अगर होगा तो खत्रीजी, मिश्रजी ने खुद सुई क्यों लगवायी? सुनो, यह सब चालाकी है। तुमको हैजा होने पर तुम मर जाओगे। वे खुद बचे रहेंगे। उसके बाद देखो, किसी मर्द के मरने पर उसकी जमीन निकल जाती है या नहीं!'

'वह तो हैजे से मरे बिना भी चली जाती है। कभी हमको यह पता न था कि जमीन खत्रीजी ले लेंगे, हम उनके चाकर बनेंगे। वही तो हुआ।'

थी। झालो का मुँह उतर गया। लेकिन कुन्दन मुसकराया और बोला, 'जरूर यह एतोया है। अच्छा ही हुआ कि बेटे ने अपने कानों सब सुन लिया।'

उसके बाद बोला, 'आज जल्दी-जल्दी चला आया। यह कहने के लिए कि एतोया को कुछ दिनों बाद ले जाऊँगा। कितने दिन बाद—यह ठीक से नही बता सकता। अब लगा कि उसे पढ़ने का इतना शौक है, रामगढ की दुकान में झाड़ू पानी देगा...काहनू उसे हिसाब-किताब सिखायेगा। तेरी आटा-चक्की में भी तो हिसाब रखना होगा।'

झालो और कुन्दन ने गहरे ताज्जुब से एक-दूसरे की ओर देखा। इस तरह आवाज को इतना इधर-उधर कर कुन्दन कभी बात न करता था। एतोया के सिवा भी जैसे उसकी और दो सन्तानें थी, उसी तरह यह भी सच था कि कल ही यदि कुन्दन उसे भगा दे तो घर-बाहर उसे कोई कायदे के खिलाफ न देखेगा, झालो तो नही ही देखेगी। दीवार पर रंगों मे बने विचित्र अनुपात के पक्षी और बन्दरों की आँखें भी आश्चर्य में बड़ी-बडी हो गयी।

रात को खाने के लिए जब कुन्दन घर गया तो उसे पहली बार पता चला कि हवा सचमुच बदल गयी है। कही वन में आग लग गयी है, क्योंकि हवा मे दावानल की तपन थी।

घरवाली का मुँह भारी हो रहा था, आँखें लाल थी, रोने से और गुस्से से आवाज भारी हो रही थी। वह कुन्दन के आगे बैठकर पंखे से हवा करने लगी। लेकिन बोली नही।

'क्या हुआ है?'

'मैं बाप के घर जाऊँगी।'

'क्यों?'

'इस अपमान के बाद टाहाड़ मे न रहूँगी।'

'कैसा अपमान?'

'मेरे गोपाल-गोविन्द स्कूल में पास नही हुए, और वह झालो का बेटा...।'

'ओह!'

'सुनो, सुई वाले के आने पर पहले मैं सुई लगवाऊँगा। तुम लोग देखना, कुछ होता है या नहीं।'

'तुझे मार देंगे।'

'कौन ?'

'खत्रीजी।'

'मार देना ऐसा आसान है ?'

'तेरे लिए डर लगता है। तू यहाँ रहता है। हम लोगों के लिए सोचता है।'

बालकृष्ण ने कहा, 'इस बार शहर से अपनी बहू और बच्चे को ले आऊँगा। तुम्हें दिखाऊँगा।'

'तेरी बहू सुई लेगी ?'

'बहू लेगी। बच्चा लेगा।'

सवेरे यह मीटिंग हुई। शाम को ब्रजभूषण खत्री साइकिल से झुमार चला गया। बालकृष्ण से बोला, 'हाट से दस किलो चावल और दो किलो गुड़ देना होगा।'

'क्यों ?'

'हैजे की महामारी चल रही है, पता नहीं है ?'

'किस तरह पता होता ?'

'यह तो आपकी ख़फ़ा होने की बात है। सुई वाले चले गये। इससे ख़फ़ा हो रहे हैं।'

'चावल और गुड़ का क्या होगा ?'

'हैजा शान्त करने के लिए यज्ञ होगा। मिश्रजी खुद यज्ञ करेंगे। सब गाँवों से चावल और गुड़ ले रहा हूँ। सुई का इलाज कुछ करता है, मास्टर साहब ? आप मास्टर आदमी हैं, आपको ब्राह्मण देवता पर विश्वास नहीं है ?'

'झुमार आपका राज्य हो सकता है, राँची नहीं। राँची जाकर मैं सुई-गाड़ी और दवा लाऊँगा।'

'यह तो बड़ी अच्छी बात है। अब जो आये वह उन्हें सुई दे। सरकारी बदोबस्त है, मैं पंचायत का प्रधान हूँ, क्या 'नहीं' कहने जाऊँगा ? अब

'एतोया की देख-भाल करने के लिए लोग हैं और मेरे बच्चे बाप रहते अनाथ है। अब एतोया हमारे मुँह पर ठोकर मारकर बड़े स्कूल में जायेगा! ब्राह्मण के लड़के गाँव के स्कूल मे रहेंगे, और गंजू का बेटा...!'

'न।'

कुन्दन अचानक बहुत जोर से चीख उठा। गरज उठा, 'उसके पहले मैं उसे मार डालूंगा।'

बात कुन्दन ने बहुत जोरो से कही और अन्दर-बाहर के सारे नौकर-नौकरानियों ने सुनी। बाद में बात को लेकर कानाफूसी भी हुई।

कुन्दन की आवाज में बहुत तेजी थी, लेकिन घरवाली को उससे भी डर न लगा। बोली, 'इसका इन्तजाम न हुआ तो मैं देउता के पास चली जाऊँगी। झालो को घर के सामने कोठरी बनाये बिना नही चलता था? देउता ने कितनी बार बाहर का जंजाल बाहर रखने को कहा था।'

इस बात मे छिपी धमकी कुन्दन के कानों में जाकर लगी और वह बोला, 'उसका भी इन्तजाम हो जायेगा।'

'इन्तजाम हो जायेगा। मेरे मरने के बाद?'

'तू मरेगी? तू तो पाँच सौ बरस तक जिन्दा रहेगी।'

कुन्दन तेजी से दूध और मिसरी का कटोरा ठेल कर उठ गया।

कुन्दन ने सवेरे एतोया को और झालो को भी बुलाकर बहुत डाँटा, लेकिन उसके बाद बात को और नही बढ़ाया। वह नही समझता था कि पास होने और मास्टर की बहुत प्रशसा से एतोया की मानसिकता में क्या रूपान्तर हो गया है। मनुष्य का मन, एक गजू बच्चे का मन, धरती के स्तर के समान होता है। उसमे निरन्तर स्तर-परिवर्तन होता रहता है—विचूर्ण—सभेद—अवक्षति के चलते-चलते एक पोली शिला स्फटिक-सी होते-होते हीरे-सी कठोर हो सकती है। एतोया के मन मे यह सब जल्दी हो गया। जो करोड़ों बरसों मे होने की बात थी उसके दो-तीन दिन में होने के परिणामस्वरूप वह मनुष्य के लिए विध्वसकारक और विनाशकारी हो सकता है। एतोया के मामले में यही हुआ था।

तीन दिन के बाद झालो पीतल की एक रकाबी मे कई पपीते, फूल और तिलकुट रखकर कुन्दन के गोठ में गयी। पूजा का प्रसाद गजू और दुसाध

चावल और गुड़ की बात बताइये।'

'आप कहिये।'

ब्रजभूषण खत्री ने तुरन्त गाँव के बूढ़े को बुलाया। कहा, 'दस किलो चावल देगा, दो किलो गुड़। बुरुडिहा ले जायेगा। मिश्रजी तुम लोगों का हैजा भगाने के लिए यज्ञ कर रहे हैं।'

'कहाँ मिलेगा? चावल किसके घर हैं?'

'वह मुझे पता है?'

'मास्टर साहब कहते हैं कि सुई लगवाने से हैजा जायेगा। जाग-जग्य करने से हमारा क्या? हमें क्या कोई खाना देगा? मिश्रजी के जाग-जग्य में बेगार और चावल तो कितनी दफा दिया। अबकी बहुत अकाल है।'

'न दे तो मत दे।'

ब्रजभूषण हँसते हुए चले गये। गाँव से जाने के पहले बालकृष्ण को रुपये देकर खुशामद के साथ अपने रेडियो की बैटरी लाने का अनुरोध कर गये। कह गये, 'देखकर बहुत अच्छा लगा, मास्टर साहब! वे लोग आपकी बात पर बहुत भक्ति करते हैं।'

इसके बाद बालकृष्ण सबेरे की बस से राँची चले गये। अधिकारियों को बताते और इन्तज़ाम करते उन्हें दो दिन लग गये। दो दिन झुझार के लोग डर के मारे दूर-ही-दूर से हैजे से मरे लोगों की चिता देखते थे, मास्टर पर आस्था रखकर ब्रजभूषण को चावल न देना नासमझी हुई या नहीं, यह सोच रहे थे। इस बीच मिश्रजी के यहाँ महायज्ञ आरम्भ हो गया। उस यज्ञ में दूसरे अछूतों को प्रसाद न मिलेगा, यह जान कर भी वे चावल और बेगार दे रहे हैं, सिर्फ वे ही बाकी रह गये। यह कैसे हुआ? इसे सोच कर सब परेशान थे।

इस बीच देखा गया कि जहाँ सबसे अधम दीनों के दीन रहते हैं, वहाँ 'उनके' चरण पड़ने की कोई इच्छा ही नहीं। वह श्रद्धालु और भले कवि की इच्छा मात्र थी। क्योंकि वही 'वे' मिश्रजी के यज्ञ में पूजा ले रहे थे। प्रत्यक्षतया सारे गुंडों के यज्ञ की जगह उपस्थित होने के बावजूद मास्टर का जनहीन कमरा और स्कूल का छप्पर जल गया। झुझार के एकमात्र जलस्रोत पंचायती ताल में एक आदमी ने हैजे से मरे व्यक्ति का शरीर डाल

गोठ में ही रख जाते थे। किसकी पूजा और क्यों पूजा हुई—इसका पता नहीं होता था।

एतोया गाँव में नहीं था। पता चला कि पालानी के मास्टर ने भी उसकी मदद करना अस्वीकार कर दिया था। बुरुडिहा के सोमरा गंजू ने टाहाड़ में लड़की के घर सोशल विज़िट पर आकर गंजुओं के निकट एतोया का केस काफ़ी सहानुभूति के साथ सुना। एक नंबर की चुआई की महिमा से उसके सूखे शरीर, गुदना गुदी छाती में असंगत उदारता जाग पड़ी। उसने कहा, 'एतोया क्यों नहीं जायेगा? भालातोड़ में मेरी चाची है। उसके घर रहेगा। खाने-पीने के लिए उसे दो रुपये दे देना, बकरियाँ चरा देगा। हाँ, मैं कह दूंगा।'

सोमरा की मानसिकता ने यथारीति गाँव के घुमाव-फिराव वाले तरीक़े से काम किया। जिस काम के करने में कुन्दन की अनिच्छा थी, उसी काम को करना उसे अच्छा लगा।

क्यों अच्छा लगा? क्योंकि कुन्दन, हनुमान मिश्र का चचेरा भाई था। हनुमान मिश्र ने सोमरा का क्या किया, क्या करता है?

खचड़ापन।

किस तरह?

सोमरा की कुल मिलाकर एक बीघा ज़मीन थी। ज़मीन उसकी थी, इसकी कबूलियत का पट्टा उसके पास था। हनुमान मिश्र और लाला लोगों ने सारे गंजू लोगों की ज़मीनें तरह-तरह के उधार और कर्ज़ के नाम पर वैध और कानून-सम्मत प्रशासन-अनुमोदित तरीकों से हथिया ली थी। सोमरा अपनी ज़मीन अपने दामाद को देना चाहता था। जमाई अक्ल के हिसाब से ज़मीन का लगान देता आया और लिखा हुआ लेता आया है। इसी एक कारण से ज़मीन ली नहीं जा सकी है।

सोमरा की ज़मीन के सिवा किसी भी गंजू की ज़मीन कागज़-पत्तरों पर साफ़ नहीं है। यह खाई लाला लोगों की अपनी ही खोदी हुई है। लाला बाबू लोगों में एक का शौक है कि बागीचे में जाकर शिकार खेलें। शौक के पीछे सफ़ेद विलायती घोड़ा था। अश्वशक्ति से अतिरिक्त उत्साह से भर कर लाला बाबू ने कूड़े-कचड़े में गोली मारकर एक क्रान्तिकारी गड़बड़ कर

दिया और दोनो ओर के गाँव वाले लाश से इनकार करने लगे। लोगों को 'अविश्वासी, हरामी' कह कर उन्होंने गाली देकर अपने कुएँ से पानी नही लेने दिया। लाश को खीचकर दूर फेंका और बुरुडिहा वालों ने वही पानी पिया। उसका नतीजा हुआ कि बुरुडिहा मे हैजे की महामारी फैली।

मास्टर कभी झुझार न पहुँचे, जिससे झुझार वालों का डर के मारे विश्वास उठ गया। वे ब्रजभूषण के पास भागे और घर-द्वार बेच मिश्रजी को प्रायश्चित मे पूजा भेजनी चाही। ब्रजभूषण बोला, 'न, न, तुम लोगों ने ब्राह्मण देवता का अपमान किया है। तुम्हारी पूजा वे न लेंगे।'

क्षमा-मधुर मुस्कान लिये हुए मिश्रजी स्वयं ही झुझार चले आये। सब लोगों को प्रसाद के पेड़े और सड़े पपीते दिये। बोले, 'ब्राह्मण क्षमा करना भी जानते है।'

उससे ब्राह्मणों का जो सुप्रीम फ़ोर्स होता है वह झुझारवासियो के और दूसरे गाँववालो के मन मे प्रतिष्ठित हो गया।

मास्टर के न आने से हेल्थ डिपार्टमेंट ने गाड़ी नही भेजी। बाद मे हाटियार के रास्ते मे मास्टर का गाड़ी के नीचे आया शव मिला। उसकी मौत का सही जवाब शहर मे न मिला। किन्तु जगलों में महाजन के चरणों का सहारा पानेवाले गाँवों मे इस मृत्यु के प्रतीक वाले आयाम ने फ़ायदा पहुँचाया। भालातोड़ थाने के अफ़सर ने गोपनीय रिपोर्ट मे लिखा, 'आदमी एजिटेटर था। गाँव वालों के साथ उसका मेल-जोल देखकर समझा जाता था कि वह असल मे कम्युनिस्ट या सोशलिस्ट था।'

इसके बाद एक के बाद एक जो घटनाएँ घटी वे बहुत ही व्यंजक थी। समय, अर्थात काल हर दशक मे आगे बढता रहता है और अचल में कही थर्मल पावर स्टेशन की स्थापना करने आये सबधित मन्त्री प्रेस के द्वारा भारत और बहिर्भारत को बताते, 'वी रीच द मॉडर्न टाइम्स।' इससे राँची और दूसरी जगहों मे यह कथन काफ़ी प्रचारित होता।

(दो) मॉडर्न टाइम्स मे अंचल मे क़दम रखने के बाद, साठ के दशको के अन्तिम वर्ष में, जो घटना घटी वह शिक्षकों पर केंद्रित नही, छात्र-केंद्रित है। टाहाड़ का गाँव फल के बगीचों के लिए प्रसिद्ध है। वहाँ के अमरूद,

दी। जुगाली करती बूढ़ी गाय के कूल्हे में गोली लगी। गौ-हत्या हो जाती तो भयंकर पाप करने के कारण लाला का घर अँधेरा हो जाता।

सोमरा के बाप ने अपनी देसी दवा से गौ को बचा लिया। उसके बदले में लाला की जननी ने उसे एक बछड़ा दिया और लड़के से उसकी जमीन न लेने को और लिखा-पढ़ी कर देने को कहा। आसन्न नरक से छुटकारा पाकर बेटे ने खुश-खुश माँ की बात सुनी।

अब मिश्रजी के बुरडिहा में स्थापित होने के बाद से उनके शिवमंदिर से लगे रहने के स्थान के पास नागफनी से घिरी सोमरा की जमीन बहुत खराब लगती थी। गजू लोग सारी जमीनें खोदकर जंगल को दखल कर बस्ती बनाकर रहते थे। सोमरा प्रायः ऊसर, मड़ुआ या जई देने वाली जमीन का मालिक था। जमाने के खिलाफ़ यह एक असहनीय-सी बात थी। फिर पानी के भर जाने के बाद इतना समय बिताकर उसने अचानक ब्याह करने का राग उठाया। दामाद को उसने अँगूठा-निशानी लगाकर जमीन दे दी थी। इसलिए उसके ब्याह के मामले में बेटी-दामाद की अलग राय न थी।

हनुमान मिश्र की बाकायदा राय न थी। वे सोमरा के पीछे लगे हुए थे। इस कारण से सोमरा भी देउता पर चिढ़ गया था। एतोया के बड़े स्कूल में पढ़ने से कुन्दन ही क्यों, देउता भी चिढ़ जायेंगे, यह उसे मालूम था। इसलिए उसने एतोया को मदद दी।

झालो समझी कि कुन्दन खफ़ा हो जायेगा। लेकिन सभी ने बताया, 'हमारे घर में कोई पढ़ता नहीं, एतोया पढ़ेगा, तो उससे हमारी छाती चौड़ी होगी।'

'लेकिन हुजूर सरकार ?'

सबने कहा, 'हुजूर सरकार खफा हो जायेंगे तो क्या तेरा सिर काट लेंगे ? सुखिया जेल से लौटेगा, उसके लौटने पर तुझे फिर इसी गंजू टोली में रहना पड़ेगा न ?'

अन्त में निश्चय हुआ कि पालानी के मंदिर में पूजा करने पर कोई मुसीबत न आयेगी। झालो वहीं पूजा का प्रसाद कुन्दन की गोठ में रख आयी। झालो बहुत खुशी से तैयार न हुई थी, पर नाखुश भी न थी। उसका विश्वास था कि एतोया की उम्र का खयालकर कुन्दन जब उसे चाहता है, तो इसके लिए भी वह माफ कर ही देगा। झालो ने कुन्दन को कभी भी

शरीफ़े, जामुन, लीची, पपीते और आम देखने योग्य बड़े होते हैं। गाँव मूलतः भालातोड़ एस्टेट के अंतर्गत था। आजकल मिश्रजी के चचेरे भाई कुन्दनजी के अधिकार में है। कुन्दनजी की उम्र चालीस बरस है। वह बहुत बलिष्ठ है और ग़लत काम करनेवालों को साइकिल की चेन से पीटने में दक्ष हैं। मिश्रजी का ब्राह्मणोचित धर्म और ब्रजभूषण की मिश्र-भक्ति—दोनों ही कुन्दन में मूर्त हुई है। टाहाड़ ग्राम का स्कूल अच्छा है। वह मिश्र-परिवार के पक्के मकान में है जिससे कि गाँव के अछूत जातियों के लड़के पढ़ने के लिए पालानी गाँव के स्कूल जाते हैं। जाते ही नहीं, यही कहना ठीक होगा क्योंकि आठ बरस के लड़के स्कूल जाने से इन्हें ठीक नहीं रहता। इनके हिसाब से आठ बरस का लड़का बालिग हो जाता है। गायें चराना या दूसरे काम कर वह घर की मदद करता है। ऐसे ही कारणों से टाहाड़ गाँव के लड़के कभी स्कूल नहीं जाते। पालानी गाँव और टाहाड़ गाँव के बीच बड़े-बड़े पत्थरों से भरा एक ऊँचा-नीचा-रूखा सा हिस्सा है। कोई-कोई पत्थर मोनोलिथ-सा है जिससे चाँदनी रात में उधर देखने पर सहसा लगता कि विभिन्न माप के और आकार के बहुत-से आदमी चुपचाप खड़े हैं। एक ख़ास पत्थर बहुत अजीब है। लंबा, चौकोर, मोटा। उस पत्थर के बारे में प्रवाद है कि वह जीवित हो उठता है और हर रोज़ थोड़ी-थोड़ी जगह बदलता रहता है। यह पत्थर नहीं, प्रेतात्मा है और उसका कोई अभिप्राय है। इस प्रवाद की सचाई को परखने कोई नहीं गया, किन्तु निर्जन समय में कोई पत्थर के समीप अकेले नहीं जाता। कुन्दन मिश्र ने एक दिन घोड़े पर चढ़कर गाँव को लौटते-लौटते अचानक देखा कि लगभग दस बरस की उम्र का एक लड़का पत्थर के नीचे कुछ लेकर छिप गया है। कुन्दन ने डर के मारे आँखें फेर घोड़ा भगा दिया। कुछ दूर आने पर सुना कि उसे कोई पुकार रहा है, 'हुज़ूर! हुज़ूर साहब! मैं हूँ!'

कुन्दन के किसान सुखिया गंजू का बेटा एतोया था। कुन्दन की ज़मीन पर हुए दंगे में सुखिया छह बरस की जेल काट रहा था। कुन्दन ही ने उसे भरोसा दिला कर जेल भेजा था। सुखिया की पत्नी झालो बड़ी गठी औरत थी। वह कुन्दन की कृपाभाजन थी। यह सुखिया के जेल जाने के बहुत पहले से था। कुन्दन ने झालो को कच्ची ईंटों का पक्का मकान बनवा दिया था।

निर्दयी या निठुर काम करते नहीं देखा था। कुन्दन बहुत कड़ी सज़ा देगा, उसका यह डर कम होता जा रहा था। कई लोगों ने उसे विश्वास दिलाया कि ठीक है टाहाड़ से जाकर एतोया पालानी में मजू टोली में रह जायेगा और शाम को जो सरकारी बस डाक-थैला लेती है उसमें चढकर भालातोड़ चला जायेगा। सोमरा पहले से ही भालातोड जाकर राह देखेगा।

कुन्दन यह सब किस तरह जान सकता है, या बिलकुल जान भी सका या नहीं, इसे लेकर तरह-तरह के अनुमान थे। कुछ बातें जाननी जरूरी थी :

(1) बुरुडिहा में हनुमान मिश्र सध्या की आरती करते-करते अचानक चीख़ उठे और गिर पड़े। स्वस्थ होने के बाद बोले कि उन्होंने अचानक देखा कि वहाँ मन्दिर-अन्दिर कुछ नहीं है। वे टाहाड और पालानी के बीचों-बीच उस मैदान को देख रहे हैं। वही प्रेतों वाला मैदान। वह अशान्त और अस्थिर पत्थर जैसे राह की ओर झुका कुछ देख रहा हो।

अब सबको याद आया कि झुझार गाँव में कॉलरा की महामारी और बालकृष्ण मास्टर की मौत—सब कुछ उन्होंने दिव्यदृष्टि से देखा था। सभी डर गये और एक-दूसरे की ओर देखने लगे। भारत मुडा बोला, 'सारा समय का दोष है। किसी जमाने में यह मुंडा जनपद था। यह मुडा लोगों के कोसान बुरू हैं, समाधि के पत्थर। अब वह गाँव नहीं रहा। फिर भी उन सब पत्थरों के नीचे पिसाब करना, उन पर गाय-बकरी को हगाना क्या ठीक है?

किसी अशुभ घटना का पूर्वाभास काले, स्थिर-लक्ष्य, मन्त्रपूत मेघ के समान टाहाड़ की ओर चला।

(2) संध्या के बाद घोड़े के खुरों के नीचे रेत की थैली बाँधकर चलने से जैसी आवाज़ होती है, वैसी दबी आवाज़ घोड़े के जोडी खुरों की सुनायी पड़ी। आवाज सुनकर टाहाड़ के लोगों को डाकुओं का डर हुआ और वे घर के कपड़े-लत्ते लपेटकर लेट गये।

(3) तड़के टाहाड गाँव के सब लोगों ने एक अद्भुत तीखी चीख फैलते सुनी। चीख में जो व्याकुलता और आतक था वह रात में उड़ने वाले पक्षियों का-सा नहीं लगता था। ऐसा लगता था कि इंसान चीख़ा हो।

इस क्षेत्र में कच्ची ईंटें धूप में सुखाकर खपरैल की छत डाल कर मकान बनाने से वह बहुत दिनों तक टिकता है और कोई गजू परिवार ऐसे घर में रहने वाला होने से जाति की नजरों में ऊँचा हो जाता है।

झालो ऐसे मकान में रहे, यह बिलकुल स्वाभाविक था। कुन्दन घर में आता-जाता रहता तो घर अच्छा होना ही चाहिए। कुन्दन का जाना-आना सुखिया या झालो की राय से था या नहीं, यह सवाल किसी ने नहीं उठाया। झालो के आगे और पीछे के उभारों का गैरवाजिब ढंग में ऊँचे और थिरकते होने से कुन्दन मिश्र दूसरों की नाँद में मुँह मारेंगे ही, ऐसा बड़ों का कहना है।

झालो का बड़ा लड़का एतोया कुन्दन की तरह था, यह झालो के लिए बहुत ही भाग्य की बात थी। कुन्दन की घरवाली के पेट से पैदा सन्तान बाप के कपूत थे। उनकी जैसी शक्ल थी, उसी तरह रोगी थे। स्कूल में पढ़ते तो पढ़ते ही, रगड़ते तो रगड़ते ही रहते, जरा भी अक्ल नहीं थी।

एतोया कहलाने को तो सुखिया का बेटा था। मगर वह कुन्दन को बहुत प्रिय था। कुन्दन उससे घोड़े की देख-भाल कराता था। उसे घोड़े पर चढ़ने भी देता था। साइकिल भी चलाने देता।

'इतने प्यार से वह बिगड़ जायेगा। गरीब दुखी का लड़का है...।' झालो कहती।

'तू एतोया को कुछ मत कह। मैं उसे बाद में बागीचे की देख-भाल के काम में लगाऊँगा।'

'उसे लिखना-पढ़ना नहीं आता है।'

'तो पलानी के स्कूल में जाये न।'

कुन्दन ने बात को उचित महत्व नहीं दिया। एतोया के बारे में उसके मन में बहुत दुर्बलता है। इस तरह का एक लड़का भी उसकी घरवाली के पेट से नहीं हुआ। ऐसी अक्ल, ऐसी तेजी और ऐसा दुःसाहस! इसे मर्द-बच्चा कहते हैं।

अभी एतोया को आते देखकर वह बड़े ताज्जुब में पड़ गया और उसने घोड़ा रोक दिया। प्यार से उसके बालों पर हाथ फेरकर बोला, 'दोपहरी में यहाँ क्या कर रहा है?'

सवेरा हुआ। दोपहर हुई। तीसरे पहर झालो ने पालानी जाने वाले ग्वालों से कह दिया कि एतोया चगा-चगा गया था, वह ख़बर ले आयें। ग्वालो ने सध्या के बाद लौट कर जो बताया उससे झालो के ननद-ननदोई बहुत चिढ़ गये। बस-स्टॉप पर उसे बैठा कर ननदोई दूकान चला गया था। आकर देखा कि कि लौडा गायब है। दूकान मे बैठने मे, चाय पीने मे, बात करने मे, बीडी पीने मे वक़्त जरूर लगा था, पर इतने मे लौडा बिना कहे चला गया? लडका टाहाड जरूर लौटेगा। झालो ने भोलापन कर उसे तलाश करने को क्यो भेजा?

अब झालो के मन मे ख़तरे की घटी बजी। किसी की बात न सुनकर उसने धुंधली लालटेन उठायी। सबसे कहा, 'लड़का छोटा है। अन्त में उसकी दूर जाने की हिम्मत नही हुई। शायद लौट न सका।'

सब लोग बोले, 'लौट नही सका तो गया कहाँ?'

झालो परेशान होकर पहले कुन्दन के पास गयी, लेकिन कुन्दन रामगढ से दो दिन बाद लौटकर तभी लेटा था। उसने झालो की परेशान प्रार्थना पर बिलकुल ध्यान न दिया और बहुत डाँटकर बोला, 'हरामी लौंडा, लिखने-पढने के नाम पर कहाँ भाग गया है, वह मुझे पता है? घर आकर बताया था? जूते को सहारा हो तो छाता बनकर सर चढ जाता है। देखता हूँ कि यह कहावत नहीं, सच बात है।'

तब झालो लालटेन लेकर अकेली ही निकल पडी। मैदान के अपवाद पर उसने ध्यान न दिया। लाचार और भी दो-चार लोग उसके साथ चले। चलते-चलते झालो व्याकुल होकर पुकारती, 'एतोया! बोलत काहे नहीं? कहाँ है एतोया?' और लालटेन को उठाकर चाँदनी की अस्पष्टता भेदती वह देखने का प्रयत्न करती। कोशिश करते-करते उसी की आँखों को उस अस्थिर प्यासे पत्थर के नीचे कुछ सफेद-सा दिखायी पडा। आदमी लोग प्रेत के डर से भागे, लेकिन झालो तेजी से आगे बढी, टीले पर चढ़ी, और आगे हाहाकार से मैदान के प्रत्येक सुषुप्त पत्थर की नीद को उसने चौंका दिया। भूगर्भ मे गड़े न रहने पर वे भी आगे-आगे आकर भारतीय दंड विधान की धारा 299 के अनुसार 'कल्पेबल होमिसाइड अमाउंटिंग टु मर्डर' का केस देखते।

'हुजूर के लिए खड़ा था।'

'क्यों?'

'मास्टर ने यह चिट्ठी दी है।'

'मास्टर ने? चिट्ठी?'

'हाँ हुजूर! मैं पास हो गया।'

'पास हो गया?'

'हाँ हुजूर, पाँच किलास हो गये। मालानोर जाकर पढ़ना पड़ेगा। और मुझे वजीफा भी मिलेगा।'

'किस बात का?'

'अछूत लोगों को वजीफा मिलता है।'

'वजीफा मिलता है?'

'हाँ हुजूर, अछूतों को वजीफा मिलता है।'

यहाँ तक कुन्दन ने एलोवा की बातें बहुत ध्यान से नहीं सुनीं। 'अछूत' शब्द उसके कानों को जा लगा, और तभी ध्यान आया कि उसके औरस से पैदा होने पर भी एलोवा 'अछूत' है। एलोवा उसका बेटा है, इस बात को सब सभी जानते हैं और वह खुद भी जरूर जानता है, लेकिन कभी भी उसे 'हुजूर' के सिवा कुछ और कहकर नहीं पुकारा। कुन्दन के अनेक बेटे के रूप में कभी भी उसे काफी प्रतिष्ठा मिली है। सबको अच्छा है। कुन्दन को अन-मन से नहीं डालता। गाँव में दूसरी तरह वह ही चलता है। लेकिन लोगों की नजरों की ओट करके दुलार से थोड़ा पास आ जाता है। अक्सर और ही रहता है, जैसे अभी था। कुन्दन घोड़े की पीठ पर चढ़ रहा था, और वह पैदल था। माँ के प्यार और देख-भाल से उसकी सेहत भी बिगड़ नहीं थी। जो बेटे कुन्दन जिस में बात को मालूम रखेंगे, व कुछ-भी से दूर रहकर भी दुबले-पतले और रोगी थे।

एतोया ने पढ़ना चाहा था, इसलिए उसकी लिखने वाली उँगलियाँ, तर्जनी और अँगूठा किसी ने काट दिये। खून बहने से उसकी मृत्यु हो गयी।

पुलिस-केस था। कुन्दन ही अपराधी की गिरफ्तारी के लिए प्रयत्नशील था। अज्ञात कारणों से नामालूम दुश्मन ने...जाँच चलती रही।

झालो रोती नहीं थी और गुमसुम रहती थी। उसके बाद मरघट से लौटकर बाल-बच्चों को लेकर पहले गंजू टोली चली गयी। फिर मरघट गयी। बहुत ही असम्बद्ध उसका आचरण था। उसके बाद गाँव लौटी। उसका अस्वाभाविक चलना-फिरना देखकर कुतूहल में भर कर गंजू मर्द-औरतें, लड़के-लड़कियाँ थोड़ा फ़ासला रखकर उसके पीछे-पीछे जाते। एतोया की मौत से गाँव में एक और ही परिवेश उत्पन्न हो गया। एक अस्वाभाविक मृत्यु दूसरे कई अस्वाभाविक सामाजिक अथवा समाज-विरोधी आचरणों को सक्रिय करती है। मिश्र-घराने के नौकर-चाकर भी मौन दर्शक बने देखते रहे। झालो अपनी सूखी लाल आँखें, भयंकर चेहरा लिये कुन्दन के घर की बैठक में घुसी और मुट्ठी-भर राख कुन्दन के चेहरे पर फेंकी। बोली, 'यह तेरे बेटे की राख है। बेटे को मार नंगा होकर दाई से नहाकर गद्दा पर बैठा है? सर नहीं मुंड़ायेगा? अशौच नहीं करेगा? नहीं किया तो तुझे निर्वंश कर दूंगी, तू वंशहीन हो जायेगा।'

गंजू की लाश की राख से ब्राह्मण का कमरा अपवित्र कर वह तेज़ी से चली गयी और मुँह फेरकर कह गयी, 'निर्वंश होओ! कोढ़ से सड़कर मरोगे! अपने बेटे को खाकर जो रक्त पिया है।'

इसके बदले में कुन्दन ने कोई बदला नहीं लिया और हनुमान मिश्र ने घोषणा की कि अब बड़ा पत्थर स्थिर रहेगा। अछूत जात के पापरहित बालक का रक्त शुद्धतम रक्त था। उससे एकाकार पत्थर, या मानव की बनायी मूर्ति, या सेतु-बंध वाली अनिच्छुक नदी—सभी तृप्त और शान्त होते हैं।

लेकिन पत्थर को खून पिलाना अच्छा नहीं। एक बार स्वाद मिल जाये तो पत्थर भी बाघ की तरह खून पीना चाहता है। आदमी का खून तलाश कर पीता है। बाघ झपट्टा मार सकता है। पत्थर आदमी को झुलसा-

पालानी के स्कूल मे एतोया के पास होने और वजीफा मिलने की
वातों की बड़ी प्रतिक्रिया हुई। यह बात इतनी दूर तक पहुँचेगी, यह कुन्दन
भी नही समझा था।

रात हुए विना कुन्दन घर के अन्दर नही जाता था। बाहर की बैठक
मे ही उसका रहना होता था। रात को एक बार अन्दर खाने-भर को जाता
था। उसी वक्त उसके साथ घरवाली की सारी बातें होती थी। इस व्यवस्था
से घरवाली भी खुश थी। सूक्ष्म नितम्ब, चिपटी छातियाँ और दुबला-
पतला शरीर लेकर पाँच बार सौर के लिए जाकर उसे आदमी से डर लगने
लगा था। उर्वरा लड़कियाँ उसे अच्छी नही लगती थी। बाल-बच्चो की
देखभाल कई बुढ़िया दाइयाँ और नौकर करते थे। वह ठाकुरद्वारे मे रहा
करती। बड़े जमीदार की पत्नी और पति के साथ वह काफ़ी रोब से
बातें करती। हनुमान मिश्र इस परिवार के बड़े थे। वे उसे 'साक्षात
लक्ष्मी' कहा करते थे।

कुन्दन को घरवाली की बातों मे एतोया की बात याद न रही। कपड़े
उतार, जवान दाइयो से तेल मलवा, नहा कर सोने के बाद शाम को वह
झालो के यहाँ गया। एक आटा-चक्की मोल लेकर बस-रूट पर तिजिहाट गाँव
में लगवा देगा, यह झालो को बताने और अपना प्राप्य सुख पाने वह गया।

हुजूर को आते देखकर झालो के बच्चे दादी की कोठरी में चले गये।
कुन्दन ने कुछ देर तक झालो के शरीर को उलटा-पलटा। उसके बाद आटा-
चक्की की बात कही।

झालो बोली, 'एक बात थी।'

'क्या ?'

'एतोया...।'

'क्या ?'

'वह पढ़ना चाहता है।'

'पढ़ेगा ? बहुत-सी पढ़ाई तो कर चुका। जितना पढ़ा है, हिसाब रख
सकता है ?'

'वह पढ़ाई करना चाहता है।'

'अरे, छोटी जात का लड़का पढ़कर क्या करेगा ? एतोया था, इसलिए

झुलसाकर अपना काम पूरा कर लेता है।

जिस तरह झुझार और टाहाड की दो घटनाएँ समय की धारा में फेंके डाइनामाइट की चार्जर बन गयीं, उसी तरह समय के निम्न स्तर पर बहुत-सी एक-दूसरे को काटती धाराएँ बहती रहीं। जिस तरह सत्तर का दशक आ पहुँचा और तीन बरस बीत गये, उसी तरह घटनावली भी नये-नये रूपों में प्रगट होती रही, विकसित होती रही।

बुरुडिहा के पार जंगल था। जंगल के पूरब में केनान्द्रा गाँव और पहाड़ था। हर दीवाली को आदिवासी लोग अपनी नि.शोषित सत्ता लेकर प्रेत भगाने का उत्सव करते। इस दिन केनान्द्रा पहाड़ के ऊपर समतल लम्बे-चौड़े पत्थर के मैदान पर मेला लगता। आदिवासी लोग प्रेतात्माओं की ध्वजाएँ लाते। उनको पत्थरों की दरारों में खोंसते। उसके बाद एक सुअर के बच्चे को घास की रस्सी से बाँधकर क्षेत्रपाल देवता और सूर्यदेव को को निवेदित कर पहाड़ के किनारे भाग जाते। नीचे, बहुत नीचे एक बड़ा-सा पत्थर था। वह जैसे कछुए की पीठ हो। वह साल-भर पत्थर ही रहता। किन्तु इस सवेरे क्षेत्रपालों और सूर्यदेव का प्रतिनिधि बन जाता। प्रतिनिधि बनकर पत्थर बलि लेता।

तिहत्तर के साल में इन सब जगहों और जीवन में पुलिस घुस गयी। मामले को बहुत ही उलटा कहना होगा, क्योंकि अवल ऐसा था कि वहाँ टाइम, स्पीड, मोशन इत्यादि चीजों के कोई माने नहीं होते थे। प्रान्तर-पहाड़-वृक्ष-वन आदिवासियों के अन्न या धाटो के लिए आदिम संग्राम-पत्थर के पहरुए होते। रास्ता कहने को बस के कई रास्ते थे। नहीं तो सब पैदल चलने के रास्ते थे। गाँव बहुत जन-विरल, ऐसे दूर-दूर थे कि चारों ओर सन्नाटा-ही-सन्नाटा था। 'समय' शब्द यहाँ आकर रुक गया था। सवेरे के नौ बजे, या दोपहर के दो, शाम के सात या रात के दस, सोचने पर यह लगता कि मानो यहाँ रहने पर समय खो गया हो। जीवन-मानव-प्रकृति—यहाँ सब कुछ ज्यों आदिम स्वरूप में ठहर गये हों।

पुलिस बिलकुल मानव-निर्मित चीज थी। यह ऐसे परिवेश में बूट-वर्दी-हेलमेट-बन्दूक के साथ घुस पड़ती और उग्रपंथी पलातकों की तलाश

मैंने उसे पालानी के स्कूल में जाने दिया। इसके आगे किस गंजू, किस दुसाध, किस धोबी के लडके को स्कूल में जाने दिया ?'

'मास्टर कहता था कि उसका दिमाग बहुत अच्छा है।'

'किससे कहा ? तुझसे ?'

'हां, उससे बाप को भेजने को कहा था। सो उसने कह दिया कि पिता जेल मे है। मास्टर ने कहा, तब माँ को भेजो।'

'तू गयी थी ?'

'हाँ।'

'कब गयी थी ?'

'कल।'

'न, न। और मत बोल। इस मास्टर को भी भगाना होगा। गंजू-दुसाध सब पढेंगे, तो फलों के बगीचे और खेतो पर काम कौन करेगा ?'

'सरकार, मैं आप से कुछ नही माँग रही हूँ। बिना माँगे आपने सब दिया। इस बार मैं यह भीख माँग रही हूँ। मैंने भी उसे बहुत समझाया-बुझाया है। वह नही मान रहा है। बहुत जिद्दी है। आप जानते है कि वह किस तरह और क्यो ऐसे करता है। दुलार करके आपने उसकी आसाओ को बढ़ा दिया है।'

'जा, जा, मैं बाद में उसे एक साइकिल खरीद दूंगा। अभी वक्त खराब है। अरे जानती नही ? जो मास्टर इस तरह गंजू-दुसाध को पढने के लिए भड़काता है वह जरूर नक्सल होगा। पुलिस को भी बता दूंगा।'

झालो चुप हो गयी। उसके बाद बोली, 'ऐसा ही कह दूंगी। गंजू लड़का, पढ़कर वह भी मास्टर बन जायेगा, बड़ी बातें कर रहा था।'

'न, न, यह ठीक नहीं है। पता होता कि इस तरह दिमाग बिगड़ जायेगा तो मैं क्या उसे स्कूल जाने देता ? उसके सिवा यहां सबको मालूम है कि वह किसका बेटा है, मेरे डर से कोई कुछ कहता नहीं। भालातोड़ में उसे पढने देने पर सब कहेंगे कि कुन्दन मिश्र अपने गंजू बेटे को पढाकर ऊपर उठाना चाहते हैं। सब लोग वहां मजाक उड़ायेंगे। चारों ओर मेरे जितने दुश्मन हैं सभी को तुरुप चाल मिल जायेगी। वह पत्री, बहुत पचड़ा है, मुझे...।'

में गाँव-के-गाँव तहस-नहस कर देती। यह चलता रहता। कोम्बिंग ऑपरेशन चलता ही रहता। इसके कारण तरह-तरह के रहते। सत्तर-इकहत्तर का सहारा लेकर जमीदार-महाजन के अत्याचार बहुत अधिक हो गये, प्रशासन की नजर में जमीदार-महाजनो पर अत्याचार और कष्ट होते। आर्गुमेंट होता, कहा जाता—क्यों? उग्रपंथियो का निशाना क्या जमीदारी और महाजनी नही है? तर्क बहुत विश्वास योग्य था। उससे होता यह कि पुलिस जमीदारो-महाजनों को बहुत मदद देती। जमीदार-महाजन अत्याचार करेंगे, बेगार लेंगे, दिवालिया बनाकर छोड देंगे—आदिवासियों के जीवन मे यह नयी बात नही थी। वे लोग इस सबको न्याय और प्रचलित देनदारी के हिसाब से समझते, लेकिन सत्तर-इकहत्तर मे अत्याचार और शोषण अपनी हद पार कर गये। उसके परिणामस्वरूप जब-तब जमीदार-महाजन काट डाले जाते, बन्दूक वालो की बन्दूकें छीन ली जाती और बन्दूकों के छिनने के साथ नक्सलियों को नही जोडा जा सकता, क्योंकि तमाम क्षेत्रो मे बंदूकें तोड उनके टुकडे कर छीननेवाले दल उसे फेंक जाते। जिससे होता यह कि भडकाने वाले लोगों को तकलीफ होती। यह क्या जंगलीपन और बेवकूफी है? बन्दूक क्यों तोड डाली? बन्दूक का बिक्री-मूल्य बहुत होता है। फिर कोम्बिंग चलती। धीरे-धीरे चारों ओर की छिटपुट होने वाली घटनाओं से बुरुडिहा के आसपास के आदि-वासियों की मानसिकता मे एकआश्चर्यजनक उपलब्धि पैदा होती। वे समझते कि जमीदार और महाजन भी गला काटने पर मर जाते है, डरते है।

वे बातें करते। छिपकर, अंधकार की भाषा मे। अब मन की पृष्ठभूमि में बुड्ढे-बुढ़ियों से सुना कोल-विद्रोह-खरुआ का विद्रोह, हूल, उलगुलान वाला बिरसा मुंडा[1]—ये सब कहानियाँ मानो सच हो उठती। नतीजा होता गुलबदन साहू।

गुलबदन साहू बड़े महाजन थे। केनान्द्रा-केंद्रित सारी भूसपत्ति की वे साल-भर बँधुआ मजदूरों से खेती कराते। लेकिन इस कारण से उनकी मृत्यु नही हुई।

---

1. लेखिका की पुस्तक 'जगल के दावेदार' मे वर्णित घटना और उसका नेता।

व्रजभूषण खत्री उनका विरोधी था। जो हनुमान मिश्र के कारण ब्राह्मण धर्म में श्रेष्ठता पा रहे है, उनका ही चचेरा भाई कुन्दन है। झालो के पेट से कुन्दन को सन्तान पैदा करने का अधिकार है। लेकिन उस सन्तान को स्कूल में पढाकर सिर चढाने का अधिकार नही है। कुन्दन को नीचा दिखाने का मौका मिलने पर व्रजभूषण उसे छोड न देगा। कुन्दन का भाग्य ही कुछ ऐसा है कि हनुमान मिश्र उसकी बात से ज्यादा व्रजभूषण की बात पर विश्वास करते थे। एतोया को किसी तरह भालातोड़ जाकर ऊँचे क्लास मे न पढने देगा, इस बारे मे कुन्दन का मन अडिग है। लेकिन एतोया के संबंध में बातें करते-करते कुन्दन के मन मे कई बातें असबद्ध-रूप से उठकर पानी की तसवीरो की तरह एक-दूसरे मे घुल-मिल गयी, जैसे—

वह एतोया को बहुत अधिक प्यार करता है। केवल जबरदस्ती या जोर लगाकर नही, उसके साथ ही सन्तान के प्रति उसे तीव्र स्नेह और ममता थी। सभव होता तो वह शायद एतोया को पढ़ने देता। लेकिन क्या यह सभव था?

झालो उसके लिए बहुत जरूरी थी और झालो के चुप हो जाने मे, कुन्दन का हुक्म मान लेने मे यह भाव स्पष्ट था कि झालो हुजूर-सरकार का हुक्म बहुत खुशी से नही मान रही है। स्वगत सोचकर भी झालो उसके विरुद्ध जा सकती है। सोचने से भी अधिक असहनीय और निष्फल क्रोध होता है। झालो को भी वह बहुत प्यार करता था, बहुत ही चाहता था।

एतोया की पढ़ने की इच्छा और पालानी के मास्टर के इस मामले मे मदद देने मे जैसे एक बदली हवा की आँच हो। क्या कुन्दन को सावधान हो जाना चाहिए! सावधान? किसके विरुद्ध या किस बारे मे? मन में डर क्यों पैदा हुआ? कल ही कुन्दन दोनो बन्दूकें साफ करेगा।

कुन्दन झालो से बोला, 'इस अचल के छत्तीस गाँवो में हमने किसी दिन गंजू-दुसाध को सरकारी स्कूल मे पढ़ने नही दिया, न पढने देंगे। वह बेकार बात भूल जा, गजू पढ़ेगा। तब तो जूतो का छाता बनेगा और आदमी के सर पर लगेगा।'

तभी बन्द दरवाजे के बाहर अजीब-सी आवाज हुई, जैसे कि बहुत देर तक किसी ने साँस रोकने के बाद साँस ली हो। नन्हे-नन्हे पैरों की आवाज

इस बार साल 1973 के अगहन में अचानक भालातोड़ थाने और रामगढ़ आर्मी कैम्प की सहायता से केनान्द्रा में पुलिस और सेना का एक अड्डा खोलने का ऑफर होता है। बँधुआ मजदूर जान भी नहीं पाते कि वे जंगल काटकर क्यों साफ़ कर रहे है, एक के बाद एक मकान बना रहे हैं, सड़कें बना रहे हैं, कुएँ खोद रहे है !

उसके बाद थाने के दारोगा और आर्मी अफसर मौके का मुआयना करने आये। वे लोग देखकर सन्तुष्ट हुए और जो बातें की उसे कई पोरम ओरांव जैसे का तैसा बताते।

'इन्तजाम तो अच्छा है। लेकिन शराब ?'

'बार खोल दूंगा।'

'अगर एक रंडी-भट्टी खोल देते...।'

'इनके बाल-बच्चे हैं। देखिये, सेंटर खोलने में खर्च है। उसे हम उनसे वसूल कर लेंगे। यहाँ एक सेंटर होने से मेरी तरह के महाजनों की जान बचेगी। कुछ हो जाता है तो भालातोड थाना जाने के सिवा और कोई चारा नहीं है।'

आदिवासी लोग सब जानते है। इसके बाद सब सोच-समझकर उन लोगों ने कई हाट के दिनों गुलबदन के देनदार दूसरे गाँव वालों के साथ बातें की। तय हुआ कि त्योहार-पर्व के दिन वे लोग गुलबदन साहू को निमन्त्रण देंगे।

गुलबदन निमन्त्रण पाकर खुश ही हुआ। इससे यह समझा गया कि उनको कुछ भी पता नहीं। यह भी समझा गया कि वे गुलबदन पर विश्वास करते हैं। गुलबदन की भी इच्छा उनसे अच्छे संबंध रखने की थी। वह हँस कर बोला, 'आऊँगा, आऊँगा। मेला देखने को, पूजा देखने को चला आऊँगा तुम लोग नशा करोगे न ? जाओ, उस दिन के लिए मैं तुम लोगों को एक पीपा शराब दूंगा। लकड़ी का पीपा, सिपाहियों की रम। वैसी चीज़ तुम लोगों को नहीं मिलती।'

केनान्द्रा पहाड पर दीवाली के सुन्दर सवेरे दस के लगभग तमाम गाँव के नर-नारी, शिशु, बालक-बालिकाएँ, बूढ़े-बूढ़ियाँ साफ़ कपड़े पहन कर प्रेतों के निशान वाली झंडियाँ लेकर आते है। वे लोग खूब शराब पीते है। भयानक कसमें खा-खाकर कठोर चेहरे से सूर्य की ओर छलांग लगाकर

नाचते, ध्वजाओं को विशेष अस्त्रों से काटते हैं। इसके बाद एक आदमी पहाड़ के ऊपर झूल जाता है और बलिदान रुक जाता है।

वह झूल जाता है। एक सूखा दुबला-पतला वृद्ध खड़े होकर हाथ उठा चुप रहता है और हिलता जाता है। गुलबदन साहू कहता है, 'ले बाबा, आ गया, पूजा देखी। इस बार तो तुम लोग सुअर की बलि दोगे? वह नहीं देखा।'

कर्जदार लोग आर्मी रम पीकर नशे के आनन्द में क़रीब आ जाते हैं और कुछ बोलते नहीं। गुलबदन को कॉर्डन कर लेते हैं—चारों ओर से घेर लेते हैं।

'ले, सर तोरा...।'

गुलबदन की बात पूरी नहीं हो पाती। पहान को आकाश से कुछ आदेश मिलता है और वह चिल्लाता है। 'राहो राहो रा...हो' कह कर पत्थर पर से उतरता है। घबराये चौकन्ने गुलबदन को सब दबाये रहते हैं, नंगा करते हैं। घास की रस्सी से उसे घेरकर बाँधते हैं, उसके सिर पर शराब उँडेलते हैं, माथे पर सिन्दूर लगाते हैं। उसके बाद उसे ऊपर उठाकर पहाड़ के किनारे चले जाते हैं। पहान चिल्लाकर कहता है, 'सूर्यदेव! क्षेत्रपाल! अबकी बड़ी बलि लाया हूँ, बड़ी बलि!'

वे लोग गुलबदन को सूर्य की ओर फेंक देते हैं। नीचे पत्थर उत्सुकता से उसकी राह देखता है। धप्प! एक भयकर आवाज हुई। सब लोग झुक कर देखते हैं। गुलबदन का नौकर भाग खड़ा होता है।

आदिवासियों को जिस आर्मी और पुलिस के जीवन में घुस आने का डर था, उसी आर्मी, उसी पुलिस ने पहान और उन छह आदमियों जिन्होंने गुलबदन को पकड़ा था, की खोज में गाँव-के-गाँव उथल-पुथल किये, घर रौंद डाले, उपद्रव-दंड लगाया, जवान लड़कियों को रंडी बना डाला।

सात ओराँव भागे, बस भागे ही। उन्हें केनान्द्रा केंद्रित जंगल ही सबसे निरापद जगह लगी। पहान बोला, 'पानी है। चल, खोज लेंगे।'

'कहाँ?'

'जंगल के भीतर।'

जंगल के बीच कहीं पानी है, यह जान कर वे भागे और अँधेरे में कल-

कल आवाज सुनकर समझे कि पास में झरना है। पानी तक पहुँचकर वे झुक कर लुढक गये और पानी पिया कि तभी क्रुद्ध फुफकार सुनी। सिर उठा कर देखा कि पानी पीता हुआ हाथी है।

'हाथी, हाथी !'

बहुत डर से बिना पानी पिये वे उठे और तभी सुना—'डरो मत। हाथी कुछ नहीं करेगा। जगमोहन है। और लोग भी पानी पियेंगे। हट के आओ, भैया !'

आदमी की आवाज से भगोड़े लोग और भी डर गये और छींकते-छींकते पानी से निकलकर भागे। बुलाकी बहुत ताज्जुब में पड़ गया। उसने जगमोहन को शान्त किया और सोचने लगा कि बात क्या हुई ? रात घनी होने पर आदिवासी लोग जंगल में से होकर शार्ट-कट रास्ता ले सकते थे। लेकिन उनके हाथों में लालटेन और गले में बातचीत होगी या गाना होगा। इस तरह से वे लोग चुपचाप क्यों आये, और बुलाकी की आवाज सुनकर डर क्यों गये ?

सवेरा होने पर बुलाकी ने पेड़ पर चढ़कर दूर बुलडिहा गाँव के शिवमन्दिर की ध्वजा देख कर जाने की बात सोची थी।

लेकिन सवेरे उसने देखा पुलिस। जंगल में पुलिस को देखकर वह घबरा गया और पुलिस भी उसे देख कर घबरा गयी।

'तुम कौन हो ?'

'बनारस के महन्त का महावत। यह हाथी भी महन्त महाराज का है।'

'सरकारी जंगल में कैसे घुसे हो ?'

'पता नहीं, हुजूर !'

'सात ओरांव को देखा है ?'

मुसीबत का संकेत लगा था। बुलाकी अब उस मुसीबत को देख रहा था।

'नहीं, हुजूर !'

'सही कह रहे हो ?'

'सही कह रहा हूँ। महन्त का हाथी लेकर मैं बहुत दिनों से वनों-

अंधे हुए आदमी की तरह टटोलता-सा राह पहचान कर सही राह पर आगे चला। वह डरा हुआ था। विचलित था। डरी हुई जनता कुछ दूरी रख कर उसके पीछे-पीछे चली।

वन का अचल समाप्त हुआ। गजू टोली आयी। फिर खेत। जगमोहन ने हवा में सूंड घुमायी और आगे चला। सोमरा की जमीन आयी। नागफनी का घेरा पार किया। कोई भी जंगली हाथी काँटेदार तारों को या नागफनी के बेड़े को होश में पार न करता। बेतला के जंगल में काँटेदार तारों का घेरा देख कर जंगली हाथी अगर पागल न हो तो कभी उसे पार न करता, न खूंटे उखाड़ता। वह बहुत ही समझदार और सेन्टिमेन्टल पशु होता है। लेकिन जगमोहन तो जंगली या बिगड़ैल हाथी की परिभाषा से बाहर का हाथी था। जंगली वह था नहीं और पालतू होने पर भी उसे बनवासी बन कर रहना पड़ता था। अब तो वह यही सोचकर चला था कि वह सारी परिभाषाओं के बाहर चला जायेगा।

सोमरा की जमीन। जगमोहन रुका, हिला-डुलाकर, सूंड को आसमान की ओर उठाया। उसे दोनों ओर हिलाया। उसके बाद एक आर्त निष्फल चिंघाड़ हवा में छोड़ डगमगा कर घुटने मोड़ कर पहले तो बैठ गया, फिर लेट गया।

जगमोहन की चिंघाड़ के बाद के सन्नाटे को टुकड़े-टुकड़े करती बुलाकी की चीखें थीं, 'ज—ग—मो—ह—न !'

बहुत गड़बड़ी थी। जनता की चीख-पुकार थी। सोमरा विमूढ़-सा दर्शक बना था। हनुमान मिश्र आगे बढ़े। शून्य में दोनों हाथों को उठाकर धरती को साष्टांग प्रणाम किया।

'जगमोहन ! जगमोहन !'

रोते हुए बुलाकी को हनुमान मिश्र ने ठोकर लगायी। बोले, 'हट जा अविश्वासी ! छूना मत। आकाश में ज्योति देख रहा है !'

जगमोहन ? हाथी ? वह हाथी नहीं था, किसी दिन भी नहीं था। कलियुग में ब्राह्मण और देवता का माहात्म्य लौटा लाने के लिए दो महापुरुषों ने गजरूप धारण मात्र किया है। वे हैं तैलंग स्वामी और काठियाबाबा। एक शरीर और दूसरा मन। आज कार्य समाप्त कर वे स्वर्ग

जंगलों में घूम रहा हूँ। सब लोग जानते हैं। झूठ क्यों कहूँगा ?'

'जंगल से निकल जाओ।'

बुलाकी बहुत डर गया और वह 'कोमांडो-कोमांडो जगमोहन' कह बुरुडिहा पीछे छोड़ कर चला गया। उसने सोचा कि वह तीसरी महत्वपूर्ण घटना की छाया में आ पड़ा है। वह और जगमोहन। और यह सोचते ही वह आदमी की बनायी पुलिस और फ़रार होनेवालों की घटना को पीछे छोड़ फिर किसी मंज़िल की ओर चल पड़ता है। बुरुडिहा और जगमोहन का मेल इस बार भी न हुआ।

सात ओराँव भागे, और बस भागते रहे। पाँच दिन बाद भूखे, प्यासे, परेशान साँझ के समय बुरुडिहा में घुस गये। डर के मारे चुपचाप रहे और रात होने पर पानी की तलाश में गाँव में घुसे। चूँकि लाला लोगों से गुलबदन की बहुत दिनों की दुश्मनी थी और तमाम बहुत दिनों से चले आ रहे मुकदमे थे, इसलिए बुरुडिहा निरापद लगा। उन्होंने सोमरा गंजू को बुलाया और पानी माँगा। सोमरा ने घड़े में ठोकर मारी और देखा कि पानी नहीं था। वह बोला, 'घड़ा और डोर ले रहा हूँ। चलो, पानी दूँगा।'

वह फ़रार लोगों को हनुमान मिश्र के शिवमंदिर के सामने ले आया। लेकिन डर के मारे पहान चिल्ला पड़ा, 'देउता का कुआँ हम नहीं छुयेंगे।'

'चुप, चुप !'

'न, तू पानी ला दे।'

'अरे, मैं तो गंजू हूँ।'

'हम नहीं छुएँगे।'

'पानी चोरी से पियेंगे। डरने की क्या बात है ?'

'न।'

आवाज़ सुनकर मिश्रजी निकल आये। उनको बुलाया। बैठने को कहा। अपने हाथ से पानी निकाल उनके छूने से बच कर उन्हे अँजुली से पानी दे दिया। उसके बाद बोले, 'रात मे जगल मे रहना। सवेरे भाग जाना।'

रात में ही उन्होंने थाने में ख़बर दी, इमर्जेंसी आउटपोस्ट मे। बोले, 'बहुत पानी पिया है। भाग न सकेंगे। ज़रूर सो रहे होंगे।'

देवता की बात झूठ न हुई। वे लोग पकड़े गये। हनुमान मिश्र की दिली

लौट गये। यहाँ इस गजरूप का मन्दिर बनेगा, और जब तक धरती रहेगी तब तक मनुष्य उस मन्दिर को देखकर समझेगा :

ब्राह्मण कितना भी भ्रष्ट
तीनों भुवनों मे श्रेष्ठ ।
ब्राह्मण कितना भी निकृष्ट
तीनो भुवनों मे श्रेष्ठ।

चार

सवेरा होते-होते सैंकड़ों लोग दावा-कुदाल लेकर आ पहुँचे और जगमोहन के शव को काट कर देह के टुकड़ो को लेकर अपने घरो मे वेदी बनाने के लिए चले गये। मृतवात्सा स्त्रियाँ जगमोहन के नाखूनों को तावीज बनाने के लिए ले गयी। अधे और लगड़े ने उसका शरीर छुआ। कोढ के रोगियों ने जगमोहन की चर्बी वदन पर मली। लाला बाबू लोगो ने पुरपांग ले उसकी भस्म बना घी मे खायी।

मन्दिर के लिए सारा रुपया देने के लिए लाला राजी हुए और मास-लगे ककाल को सोमरा की जमीन में विशाल चिता मे भस्म कर उसकी राख जमीन पर ऊँची की गयी। सोमरा का घर भी जलकर राख हो गया।

सोमरा ने बड़ी भाग-दौड़ की। एम० एल० ए०, बी० डी० ओ०, ट्राइबल वेलफेयर ऑफिसर, थाने के ओ० सी०—सभी के पास गया।

कोई भी ठिकाना नही मिला। सब लोगो ने जो कुछ कहा, या नही कहा, उसका साराश यो है :

हनुमान मिश्र अगर सोमरा की जमीन पर कब्जा करते तब तो आदमी के लिए बने कानून के शिकजे मे आते और सोमरा को न्याय मिलता। हरिजन की जमीन ब्राह्मण ले ले, इस बात को सरकार किसी तरह वरदाशत नही करती।

जो हुआ है, वह कानून के या पुलिस के अधिकार की बात नहीं है।

कोशिश से भी सोमरा को उनके साथ नही जोड़ा गया। लेकिन अछूत होकर मन्दिर के कुएँ से पानी चुराने की नीयत हुई थी, इसलिए दारोगा ने सोमरा को बहुत भला-बुरा कहा।

इसके बाद माघ के महीने में सोमरा ने शिवरात्रि का प्रसाद लेने से इकार कर दिया और महुआ पीकर चीखते हुए बोला, 'ब्राह्मण, देउता! उन्होंने मन्दिर मे आश्रय लिया था। उन्हे पकड़ा दिया। यह देउता का काम हुआ?'

बात हनुमान मिश्र के कानों में पड़ी। वे गुस्से से भर गये। लाला लोगो से बोले, 'छोटी जात की जमीन मन्दिर के पड़ोस में है। उसके पास अदालत का कागज है। उसे लिये बिना मुझे शान्ति न मिलेगी।'

लाला लोगों के बस की बात न थी। माँ से वादा किया हुआ था।

आपातकाल का वक्त अच्छा था। उस समय सोमरा को जमीन से हटाया जा सकता था। लेकिन यह बरस-भर से ज्यादा वक्त मिश्रजी ने आर्मी की ठेकेदारी मे रामगढ और राँची में बिता दिया। आपातकाल निकल गया। भारत के मुक्तिसूर्य को राजनारायण ने होम कांस्टिट्यूएँसी में लँगड़ी मार कर गिरा दिया। अचानक हनुमान मिश्र के पैरों के नीचे से जमीन खिसक गयी। नयी सरकार आयी। पुराने प्रशासन के लोग शुरू में कुछ दिनों तक यह नही समझ पाये कि क्या हो गया, लेकिन अचानक सब घबरा गये, क्योंकि ज़िला के कमिश्नर-मजिस्ट्रेट से लेकर मालातोड थाने के ओ० सी० तक सबकी बदली होने लगी। इस तरह के समरी ट्रान्सफ़र से थाना, बी० डी० ओ० दफ्तर, कृषि ऑफिस—सब जगह लोग मुसीबत में पड़ गये। ब्रजभूषण खत्री तक घबरा गया, क्योंकि अचानक चुन-चुनकर अनुसूचित जाति का एक आदमी इन सब बेल्टों मे आता रहा। स्कूल-इंसपेक्टर ब्रजभूषण से कह गये कि आदिवासी और अनुसूचित बेल्ट में आदिवासी और अनुसूचित लड़के-लड़कियाँ अगर स्कूल में नही आते, तो स्कूल का पपंज बेकार है। सरकार ऐसे स्कूल नहीं रखेगी। समझे?

'हमारे लड़के-लड़कियाँ?'

'आप हुए सुपरमैन। तीन गाँवों में तीन औरतें, ग्यारह लडके, पाँच लड़कियाँ। आपके लड़के-लड़कियाँ तो पढ़ेंगे ही। उसके लिए क्या नीच

भारतवर्ष अलौकिकता का देश है। हर युग में अविश्वासी लोगों को शिक्षा देने के लिए महापुरुष मानव-रूप में अवतीर्ण होते हैं। आजकल भी साईंबाबा, बाल ब्रह्मचारी, माँ आनन्दमयी, मोहनानन्द इत्यादि संस्थाएँ विद्यमान है। महापुरुषों की लीला समझना कठिन है। तैलंग स्वामी बहुत अधिक मोटे थे। काठिया बाबा बहुत दुबले। लेकिन पलामू बेल्ट में अविश्वासी ब्राह्मणों को शिक्षा देने के लिए वे एकरूप हो गये और गजरूप धारण किया। चरणदास भी महापुरुष हैं। उसे मालूम था कि जगमोहन दो महापुरुषों का महाकाय—पैकिडर्म—संस्करण है। महापुरुष हवा खाते हैं। जगमोहन को भोजन देना अन्याय करना होता, इसीलिए उसने हाथी को जीवन-भर अनाहार रखने की व्यवस्था की थी। बुलाकी को भी। महापुरुष जब प्रायः अनाहारी रहते हैं, तो उनके सेवक को भी अनाहारी रखना ही धर्म है।

यह स्पष्ट है कि जगमोहन का मन्दिर बनने से पामरों तक लोग ब्राह्मण और देवता की महिमा समझेंगे। इसमें प्रशासन का कोई भी अफसर बाधा नहीं दे सकेगा। उसके बाद जो धर्म की महिमा स्थापित होती रहेगी उसमें वे बाधा नहीं देंगे।

सोमरा बोला, 'हमनी के काँय होगा ? जमीन चली गयी।'

'तोर जमीन ! तू तो धन्य हो गइल रे।'

सोमरा रोते-रोते चला गया। अब धार्मिक विश्वास की पवित्र अग्नि में प्रज्ज्वलित चेहरे से दारोगा बोले, 'ब्राह्मण सबसे बड़ा है। ये, छोटे लोग भी कुछ नहीं हैं, यह प्रमाणित हो गया ! सुनने में आ रहा है कि अनुसूचित जाति के लिए जॉब रिजर्वेशन होगा। इसके बाद वह करने से आग लग जायेगी। जो सरकार ईश्वर की महिमा, ईश्वर का उद्देश्य देख कर भी नहीं देखती, वह आगामी चुनाव में हार जायेगी।'

'कौन आयेगा ?'

'मत पूछिये बी० डी० बाबू !...जिसका चुनाव होने से धर्म रहेगा, ब्राह्मण रहेगा। अछूत फिर पैरों की जूती बनेंगे, वही सरकार आयेगी। यह तो सीधी बात है।'

'कब ?'

जात, ट्राइबल लड़के-लड़कियों के नाम स्कूल के रोल मे नही रह सकेंगे ?'

'यह क्या कह रहे हैं ?'

'पसन्द न हो तो सरकार से कहकर ऊँची जात के लिए स्कूल बनवा लें। हमारे अंडर जो सब स्कूल है, मैं उनमे उनके नाम देखना चाहता हूँ। नही तो मेरी नौकरी चली जायेगी। आपके लिए क्या मैं नौकरी खो दूंगा ?'

'वे स्कूल मे आ सकते हैं।'

'आपके और आपके देवता के रहते ? एतोया गजू की बात क्या सब भूल गये है ?'

'यह देखिये ! उसमे मुझको मत फँसाइयेगा।'

'जो कहना था कह दिया। आपका बहुत-सा फल-दूध-घी खाया। अच्छी बात कह दी।'

'आपकी भी बदली हो रही है ?'

'होने मे कितनी देर लगती है ? नया एम० एल० ए० है, नया एम० पी० है। इनके साथ मेलजोल की लाइन निकालने का टाइम भी नही मिलता। सब गड़बड़ हो गया है।'

'तब ?'

'आयेंगे, लाइन पर आयेंगे। लेकिन टाइम तो लेंगे न ? जनता की भलाई करने के पागलपन मे कितने दिन लगेंगे, यह सब समझकर लाइन लगाऊँगा। आपका भालातोड थाना है, आपकी ससुराल तो गयी। सब नये लोग है। पूरा खचडापन है।'

'अफसर ?'

'जो भी है। थाना अफ़सर जब लाला लोगों के फलों की भेंट लौटा देगा, तो पता चलेगा कि लक्षण बहुत ख़राब है। बहु—त खराब !'

धीरे-धीरे दिखायी दिया कि सब गड़बड़ है। और-तो-और, मिश्रजी के फलो के बगीचे पर बकाया लगान बैठा दिया गया। बी० डी० ओ० बुरुडिहा पर, गजू लोगों को सड़क बनाने के काम मे लेबर के लिए भरती लिए दबाव डाला गया। उससे गंजू लोगो के मन मे अकारण विश्वास उत्पन्न हुआ कि उनके लिए भी राज आया है।

इस वक़्त हनुमान मिश्र का दिमाग ख़राब हुआ। अब डबल फैनेटिक

'वह कौन कह सकता है ? जगमोहन को लीजिये। बन गया, वह एक दर्पण बन गया। उस दर्पण मे आप, जो होने वाला है, उसे देखने की कोशिश कीजिये।'

'एक हाथी आया, और मर गया...।'

'हाथी नही।'

'तो चमत्कारों का युग अभी समाप्त नही हुआ है ?'

'होता तो आप खुश होते ? जिसे आप चमत्कार कहते है, वह भी जरूरी चीज है न ? वेतन से क्या होता है ? मुझे पैसा चाहिए, आपको पैसा चाहिए, सबसे गरीब एम० एल० ए० और एम० पी० लोग हैं। पाँच बरस में जीवन-भर की कमाई होनी चाहिए। चमत्कार होते रहने से सबको सुविधा है।'

बड़े जोर-शोर के साथ जगमोहन का मन्दिर बना। चरणदास महन्त भी बनारस से आये और हनुमान मिश्र को एक लाख रुपये मन्दिर बनाने के लिए दिये। उनका कलेजा जल गया। जगमोहन महापुरुष था—इसका यू० पी० में पता नही चला, उसको खोजा बिहार ने। सारा फ़ायदा इन मिश्रजी को हुआ। बुलाकी भी लापता था। वह मिलता तो बाकी दो महावतों को ट्रेनिंग दिलाते और बुलाकी के साथ वे दोनो और तीन हाथियो को बिना खाने के घुमा-घुमा कर मार सकते। उनमें सोइ स्वामी—भोला-गिरि, अनुकूल ठाकुर, बरदा योगी—दूधिया बाबा—तुलसी गिरि जो जिसे पसन्द होता जोड़ा-जोड़ा कर रहते और निकलते। ठंडी साँस लेकर चरणदास ने मिश्रजी से कहा कि 'मन्दिर के उद्‌बोधन के समय जरा सूचना दीजियेगा।'

'जरूर।'

'कौन उद्‌बोधन करेगा ?'

'हिमालय से सारस्वत स्वामी आयेंगे।'

'वे उतर आयेंगे ?'

'इस बार आयेंगे।'

महन्त चरणदास चले गये।

बुरुद्दिहा में जगमोहन की मृत्यु की खबर अब पूरे भारत की घटना

होकर उन्होंने घोषणा की कि जो हो रहा है सब झूठ है। कलियुग का मेल है। उन्होंने अगर सचाई से ईश्वर की सेवा की है, तो सत्य की विजय होगी।

यह कहकर वे सहसा बोल पड़े, 'सोमरा को यह जमीन छोड़नी पड़ेगी। मन्दिर की हद में गजू के घर नहीं रहेंगे।'

सोमरा बहुत घबराया और बी० डी० ओ० बाबू के पास चला गया। बी० डी० ओ० नया छोकरा था। उसने सोमरा का केस सुनकर कहा, 'कागज-पत्र रहने से तुमको कौन उठा सकता है?'

'मिश्र जी।'

'न, न, वे महात्मा हैं।'

'तो मेरी जमीन के लिए बुरी नीयत क्यों है?'

'बुरी नीयत होने से ही क्या जमीन ले ली जाती है?'

'अगर...।'

'क्या?'

'बाड़ा तोड़कर ले लें?'

'अदालत जाना।'

सोमरा की छाती पर उड़ती हुई परी का गोदना होने से क्या होता है, उसका कॉमनसेन्स धरती पर आधारित था। वह बोला, 'गजू लोग मुकदमा कर सकते है?'

बी० डी० ओ० को उसके केस में उत्सुकता हुई और वे बोले, 'तुम्हारी बात सच है, इसका क्या सबूत है?'

सड़क पर मजदूरी करने वाले गंजू लोग खुशी के साथ काम छोड़ बीड़ी सुलगा, आकर बैठ गये और बड़े विस्तार से समझा दिया, 'मिश्रजी बहुत ज़माने से सोमरा की जमीन लेना चाहते है। खरीदना नहीं चाहते, लेना चाहते है।'

'वह कैसे?'

'सच बात है, हुजूर!'

सोमरा का केस ट्राइबल वेलफेयर अफसर को भी बताया गया। गजू भी एक ट्राइब है। अफसर बोले, 'मैं थाने को कह दूँगा। कोई भी अत्याचार

थी। किसी विदेशी स्टार के जगमोहन बनकर अभिनय करने को राजी होने से घटना अंतर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि पायेगी।

उस अंचल में अलौकिकता का प्रभामंडल विराजने लगा। गुलबदन की विधवा ने सपने में जगमोहन से सुना कि मिश्रजी के शिव को हर रोज दस लिटर दूध से नहलाये बिना गुलबदन की मुक्ति न होगी।

बुलाकी और सोमरा दोनों ही कहाँ चले गये, किसी को पता नहीं। वे लोग गजू टोली में भी नहीं रह पाये। बुलाकी का पाप था कि उसने जगमोहन को हाथी के सिवा और कुछ नहीं समझा।

सोमरा का पाप था कि चमत्कार के बाद भी उसने जमीन वापस चाही थी।

इन लोगों को रहने देने से गजू टोली पर मिश्रजी का शाप पड़ता।

गोमो स्टेशन के प्लेटफार्म पर दो नये आये शरणार्थी दिखायी दिये। दीन-दुखी, दुबले-पतले, सूखे। आँखें पीली पड़ गयी थी। उनको रोज कुली का काम भी नहीं मिलता था और वे भूखे पड़े रहते।

बीच-बीच में जब कुली का काम मिल जाता, उस दिन वे दोनों आठ आने के टिकट में 'हाथी मेरा साथी' फ़िल्म देखने जाते।

तसवीर समाप्त होने पर देखा जाता कि उनमें से एक बेतहाशा रोता और दूसरा उसकी पीठ थपक-थपक कर सान्त्वना देता।

उसके बाद पैसा रहने पर वे शराब पीते, या प्लेटफार्म पर आकर लेट जाते। एक की छाती पर दिखायी पड़ा कि उड़ती परी की तसवीर का गोदना गुदा था। दोनों एक-दूसरे का हाथ थाम कर प्रेमियों की तरह लेटते, जैसे कि दोनों का एक-दूसरे के सिवा और कोई, या कुछ न हो। उनका नाम न तो किसी को मालूम था, न किसी ने जानने की कोशिश ही की। जिनका एकमात्र ठिकाना स्टेशन का प्लेटफ़ार्म हो, उनका नाम बिना जाने भी भारतवर्ष में चलता है, क्योंकि वे बहुत ही एक्सपेंडेबल—उपेक्षा-योग्य थे।

होने पर तुम्हें न्याय मिलेगा।'

थाने के अफ़सर बोले, 'जरूर मिलेगा। जबरदस्ती जमीन लेने से वह सब पुलिस-मैटर बन जायेगा। अब सरकार बहुत सख्त है। हरिजनों के मामले में...तुम क्या हरिजन हो?'

'हाँ हुजूर!'

'ट्राइबल नहीं हो?'

'हाँ हुजूर!'

'गंजू जात के हो न?'

'हाँ हुजूर!'

'वह क्या?'

'कुछ नहीं, हुजूर! मैं गंजू हूँ, सब जानते हैं कि गजू अछूत होते हैं। जिसे कोई न छुए वह अगर हरिजन होता है, तो मैं गजू भी हूँ, हरिजन भी हूँ। वह मूंछ वाला अफ़सर, ट्राइबल अफ़सर बोला—'गंजू लोगों का नाम उनके रेकर्ड में है, तो देखते क्यों नहीं, मैं ट्राइब भी हूँ!'

'ओफ! क्या मुसीबत है?'

'क्या करूँ, हुजूर! देउता खफा हो गये हैं। आँखें निकाल कर फेरते हैं। धूनी का पात्र लेकर नाचते हैं और कहते हैं कि सात दिन में धरमराज-करम होगा। वह मेरी जमीन ले लेंगे।'

'लेने से हो गया? अदालत नहीं है?'

'गंजू मुकदमा-कचहरी नहीं करते।'

'सरकार तुम लोगों को वकील देगी।'

'एँ?'

'वकील, वकील—मामला-मुकदमा करने वाले।'

'तो डर नहीं है, हुजूर?'

'नहीं।'

'देउता को देखकर डर लगने लगता है। वे हर समय शिव को पुकारते रहते हैं।'

'वह तो पुकारेंगे ही।'

'आपको नहीं मालूम, हुजूर! देउता के चचेरा भाई कुन्दन है, उसके

शिकार

जगह है गोमो—डाल्टनगंज लाइन पर पड़ता है। कभी इस स्टेशन पर ट्रेन ठहरती थी। कई ट्रेनों के रुकने का खर्च पूरा नही पड़ता था। इसीलिए स्टेशन का कमरा, रहने के क्वार्टर और कुली-बस्ती की कोठरियों मे बीच-बीच मे गाय और बकरियाँ दिखायी पड़ती थी। 'कुरुडा आउट-स्टेशन, एबैनडन्ड' का बोर्ड लगा था। यहाँ आकर ट्रेन की गति धीमी पड़ जाती थी। हाँफती हुई ट्रेन ऊपर चढ़ती थी। थोड़ा-थोड़ा कर यही से ट्रेन कुरुडा पहाड़ चढ़ती। पहाड़ ढालू था। कुछ दूर चढ़कर ट्रेन एक पहाड़ी घाटी मे घुसती थी। आधा मील लबी पहाड़ी घाटी के दोनो ओर ब्लास्ट किये हुए पत्थर थे। पहाड़ के ऊपर बाँस के जगल थे, और बीच-बीच में बाँस के पेड हवा से झुक ट्रेन की छतो पर थपेडा मारते। उसके बाद ट्रेन ढलान पर उतरती और उसकी रफ़्तार बढ जाती। अब तोहरी स्टेशन आता। यह इस अचल का सबसे अधिक व्यस्त स्टेशन था। तमाम बस के रास्तो का जक्शन था। तोहरी कोल-हाल्ट भी था। ट्रेनो मे कोयला लादा जाता था। चारों ओर सरफेस कोलियरी थी। इस अचल मे ज़मीन के करीब-करीब ऊपर ही घटिया किस्म का कोयला मिलता था। लेकिन तोहरी की असली संपत्ति ठेकेदार थे। साल का अचल था। ट्रकों मे रात-दिन साल के लट्ठे आते। लकड़ी के कारखानो मे उनकी चिराई होती और वे चारों ओर चले जाते। कुरुडा के सन्नाटे के बाद तोहरी की चहल-पहल अपने-आप मे एक तरह का अनुभव था।

गजू बेटे एतोया को...।'

'मालूम है, मालूम है। जो तुम्हारे अख्तियार में नही है, उसे लेकर बकवास मत करो। पुलिस है, थाना है। अफ़सर किसलिए है ?'

सोमरा कहने वाला था—घूस खाने और गरीबों को ठगने के लिए। लेकिन यह बोला नही। पूछा, 'देउता मेरी जमीन नही लेंगे न ?'

'न, न, न।'

इसके बाद सोमरा टाहाड़ गया। लड़की के घर। उसका दामाद गजू सम्प्रदाय मे इलमदार युवक था। स्थानीय जनता एम० एल० ए० को अच्छी तरह पहचानता था। भालातोड मे एक ठेकेदार के माल पर पहरा देने का काम मिला था।

उसने ससुर का मामला ध्यान से सुना और बोला, 'मेरा घर टाहाड मे है, और जमीन लेने से मुझे कोई खास फायदा नही है। फिर भी आपके हक की जमीन किसी बाँभन-आँभन को नही लेने दूंगा। इतने दिनों तक बाँभनो का बहुत तमाशा हुआ। अब जनता राज है, हमारा सवाल भी सुना जायेगा।'

बाद में पता चला कि एम० एल० ए० खुद अनुसूचित जाति के थे। उन्होंने ध्यान से सब सुना और सोमरा से कहा, 'पहले मेरी जान लेगा, बाद में तुम्हारी जमीन। इस अंचल को मिश्रो के पजों से छुडाना होगा। क्या तुम अकेले हो ? ऐसे सैकडो गजू है...।'

अब एम० एल० ए० ने सोमरा को ही एक भडकता हुआ भाषण सुना कर और आश्वस्त कर लौटा दिया। इससे सोमरा की छाती की परी के पंखो में हवा लगी। वह घर लौट गया।

अभी भी जोश मे होने से उन्होंने जनश्रुति पर निर्भर कर झुझार के बालकृष्ण मास्टर की मौत, टाहाड के एतोया की मौत—दोनो को जोड़ा। जवाब मिला गुलबदन साहू की मृत्यु।

एम० एल० ए० खुद एक बार अचल मे भ्रमण पर गये और जीप से घुआँधार भ्रमण के बीच ही वुरुडिहा के हनुमान मिश्र को देख आये। ऋषि-तुल्य, मुंडा हुआ सिर, बलिष्ठ शरीर मिश्रजी को देखकर उन्हे अन्दर-ही-अन्दर डर लगा। इसीलिए उन्होंने खखार कर हाट मे एकत्रित हुई

दूर-दूर के गाँवों से पहाड़ों के ऊपर से ट्रेन जाने का दृश्य एक अनुभव था। ग्रामवासी रोज देखते, फिर भी उनका आश्चर्य समाप्त नहीं होता था। ट्रेन जा रही है, चली जा रही है, इंजन हाँफ रहा है; अब घाटी ने ट्रेन को निगल लिया। दौड़ कर आगे जाने पर दिखायी पड़ेगा कि कहाँ पर ट्रेन को उसने उगल दिया। एक दिन पहाड़ के ऊपर कई हाथी भी दिखायी पड़े थे। बाँस के पेड़ों को खाते-खाते हाथी खड़े हो गये। दूर से वे खिलौनों-से दिखायी दे रहे थे। ट्रेन के आते ही वे सूँड़ उठाकर चिल्लाते हुए भागे थे।

कुरुडा गाँव स्टेशन के बहुत पीछे है। दो पहाड़ और एक मैदान पार कर। स्टेशन के थोड़ा और नजदीक होने से हो सकता था कि गाँव के आदमी ही इन खाली पक्के मकानों मे रहने लगते।

कुरुडा के-से गाँव में जो लोग रहते हैं, उनके जीवन मे साल मे आने वाले पूजा-पर्व के सिवा बहुत ही कम वैचित्र्य रहता है। इसीलिए कुरुडा पहाड़ के ऊपर के दृश्य इस तरह उनकी आँखों को भुलाये रहते।

मेरी ओराँव जब आयी तो वह ट्रेन को जिस तरह देखती थी, यात्री भी नजर पड़ने पर उसे देखते थे। उसकी उम्र अठारह थी, दीर्घांगी थी, चेहरा और नाक चपटे, रंग ताँबे के रंग-सा साफ। सामान्यतः वह सफ़ेद साड़ी पहनती थी। दूर से वह बहुत मोहक लगती थी, लेकिन पास जाने पर समझ में आता था कि उसकी आँखों की भाषा में बहुत कठोर उपेक्षा है।

उसे देखकर कोई उसे आदिवासी नहीं कहता। लेकिन वह आदिवासी थी। कभी कुरुडा में अँग्रेजों का टिम्बर प्लांटेशन था। स्वतंत्रता के बाद अँग्रेज धीरे-धीरे चले गये। डिक्सन के बँगले और घर की देखभाल मेरी की माँ करती थी। डिक्सन का बेटा 1959 मे आकर घर, जंगल सब-कुछ बेचकर चला गया। जाने के पहले भिकनी के गर्भ मे मेरी को दे गया। वह आस्ट्रेलिया चला गया। मेरी का नाम गिरजा के पादरी ने रखा। उस समय भी भिकनी क्रिस्तान थी। उसके बाद जब राँची के प्रसादजी डिक्सन के बँगले में रहने आये तो भिकनी को काम में फिर से लेने को राजी नहीं थे। भिकनी ने फिर क्रिस्तान धर्म छोड़ दिया। मेरी प्रसाद की गाय-भैंस

जनता से वर्तमान सरकार की अस्पृश्य, अनुसूचित जातियों और आदिवासियों के संबंध में नीति की ज्यादा व्याख्या न कर सिर्फ भरोसा दिलाया। अपने-आप सोमरा की जमीन पर जाकर खड़े हुए और बोले, 'अब सरकार गजू दुसाध या रैदास पर अत्याचार होने से किसी को माफ़ न करेगी। तुम्हारी जमीन कोई नही ले सकेगा, बेफ़िकर रहो।'

हनुमान मिश्र ने मन्दिर के छज्जे पर खड़े होकर बातें सुनीं।

धीरे-धीरे अक्टूबर आया। सतहत्तर का अक्टूबर। इस बरस अचानक नवंबर के शुरू में ही काफ़ी बरसात हुई थी। उससे अब हवा में ठंडक थी। इस बार सोमरा को मक्का की अच्छी फ़सल मिली थी। मक्का को बोरो में भर कर रखा था। काफ़ी दिनों तक देवता की ओर से कोई उत्पात नही हुआ। एक संध्या को सोमरा ने घर लौटकर घाटो खाया और सोने को कहकर चबूतरे पर बोरा बिछा ड्योढ़ी पर बैठ कर बीड़ी सुलगायी।

'सोमरा !'

सोमरा ने चौक कर सिर उठाया। थोड़ी ही दूर पर हलके अँधेरे में मिश्रजी थे।

'देउता ! गोड़ लागों देउता !'

सोमरा ने जमीन पर झुक कर प्रणाम किया। देवता की शकल, उनका चेहरा बहुत ही अनचीन्हा लगा। आवाज में भी दीन याचना थी।

'सोमरा, तू मुझे जमीन दे दे। मैं देउता के नाम पर तुझसे माँग रहा हूँ।'

'देउता !'

'मैं देउता नहीं हूँ, सोमरा ! मैं तो मामूली आदमी हूँ। देउता होता तो बगीचे पर लगान लगता? कंट्रैक्टरी छूट जाती? लड़की विधवा हो जाती?'

'मैं क्या करूँ, देउता ?'

'देउता मैं नही। उस मन्दिर में जो हैं, वही देउता है। मैं उनके नाम पर माँग रहा हूँ, तू जमीन दे दे। मेरी इज्जत रख लो।'

'आपकी इज्जत ? मैं रखूँ ?'

'दे दे।'

चराती थी। गाय चराने में वह बहुत होशियार थी। उसके अलावा फलों के थोक ख़रीदारों और कुँजड़ों आदि से वह सारे संभव-असंभव यत्न कर फलों के बगीचे के शरीफे और अमरूद बेचती थी। खेत की सब्जी लेकर ट्रेन से तोहरी चली जाती।

सब लोगों का कहना था कि प्रसादजी बड़े भाग्यशाली हैं। मिश्रजी से उनका वेतन का हिसाब था। मेरी के साथ खाना-पीना, कपड़े-लत्ते का करार था। डिक्सन-बँगला अँग्रेज़ों के रहने के लिए बना था। भिकनी का कहना था कि साहब लोग आया-नौकर-जमादार—सब मिलाकर बारह लोगों को रखते थे। अब प्रसादजी के जमाने में इस विशाल बँगले को मेरी ही साफ़-सुथरा रखती थी।

तोहरी के बाजार में मेरी के अनगिनत भक्त थे। वह रानी की तरह स्टेशन पर उतरती थी। बाजार में अपने अधिकार से जाकर अपनी जगह बैठ जाती। बाजार के दूसरे लोगों से बीड़ी लेती, उनके पैसों से चाय और पान लेती, लेकिन किसी को मुँह नहीं लगाती थी। बाजार वालों का सरदार जालिम गुंडा उसका प्रेमी था। जालिम या उसके—किसी एक के पास सौ रुपये जमा हो जाने पर वे शादी कर लेंगे।

शादी करेगा—इसी बात के आधार पर उसने जालिम को नज़दीक आने दिया था। ओराँव माँ की लड़की, देखने में और तरह की, लंबी भी ज्यादा थी। इसीलिए उसकी जात में उसके लिए लड़का नहीं मिला। आदिवासी युवकों के लिए मेरी के शरीर का रंग एक रुकावट की दीवार था। प्रसाद की पत्नी ने लड़का देखा था। उनके माली का लड़का था। बोली, 'यहीं रहना।' भिकनी खुश हो जाती। मेरी कहती—'नहीं। माँजी ने इसलिए यह सब कहा है कि उनके काम के लिए आदमी लगा रहेगा।'

'रहने को कोठरी देंगी।'

'झोंपड़ी।'

'लड़का अच्छा है।'

'न, झोंपड़ी में रहूँगी, धाटो खाऊँगी, मर्द शराब पियेगा, तेल-साबुन नहीं मिलेगा, साफ कपड़े पहनने को नहीं मिलेंगे। मैं ऐसा जीवन नहीं चाहती।'

'हम का खायेगा ?'

'तुझे रोज परसाद भेज दूँगा। तेरा नाम रह जायेगा, सब नाम लेंगे।'

'मैं...मैं कुछ नही कह सकता। अपने जमाई से बिना पूछे...।'

'नही देगा ?'

सोमरा ने हिम्मत बटोर कर कह ही दिया कि जमीन देने से दूसरे राजू लोग उसे मारेंगे, मार डालेंगे। 'एतोया के लिए सबके मन में दाग है, गहरा दाग है। आप सब जानते थे, फिर भी कुछ नही बोले। मन्दिर में जो बात उठायी...माँ का दुलारा, दुधमुँहा बच्चा मर गया...।'

हनुमान मिश्र अस्वाभाविक आवाज में तीखे स्वर से हँसे। बोले, 'तू नही मानता, मैं दिव्य आँखो से सब देख रहा हूँ।'

'हम क्या जाने, देउता !'

'सब देख सकता हूँ। यह सारी जमीन छोडकर तुझे कुत्ते की तरह भाग जाना पडेगा।'

गहरी बेचैनी के साथ सोमरा सोने गया। इसके कई दिन बाद बुलाकी और जगमोहन बुरुडिहा के जगल मे घुसे।

तीन

बुलाकी और जगमोहन सध्या के समय जंगल में घुसे। जगल के पूरब की ओर एक बरगद का पेड़ है, यह बुलाकी ने राह में ही पता लगा लिया। जगल मे घुस कर बुलाकी जगमोहन को उस ओर ले जाने लगा।

जगमोहन अचानक रुक गया। उसका शरीर थर-थर काँपने लगा।

बुलाकी के मन मे अज्ञात भय था। मानो सब अशुभ हो। जगमोहन रुक क्यो गया ? ? और रुक ही गया तो काँप क्यों रहा है ? उसने जगमोहन से से कहा—'कोमान्डि, कोमिन्डि जगमोहन ! भुरकुडा बेटा ! हेहेगड़ा, हेहेगडा, मेरे लाल !'

जगमोहन का काँपना थम गया। वह फिर चलने लगा। जगल अँधेरा था। मानो अलौकिक क्षमता से रास्ता पकड़कर जगमोहन बरगद के पेड़

मेरी राजी नही हुई। गाँव-समाज उसे मानता था। औरतों से उसकी दोस्ती थी, तीज-त्योहार में वह नाचने मे बेजोड़ थी। इसीलिए उन लोगों के जीवन से वह अलग नही होना चाहती थी।

बहुत लोगों ने बहुत बार उसका प्रेमी बनना चाहा था। मेरी ने दाब उठा कर उन्हे दिखाया था। वे लोग बाहरी आदमी थे। भिकनी की तरह उसके पेट में भी बच्चा देकर वे भाग खड़े नही होगे, यह कौन कह सकता था ?

उसके लिए एक बार तो तोहरी बाजार मे दगा हो गया था। टिम्बर लॉरी का ड्राइवर रतनसिंह शराब पीकर उसे उठाकर लिये जा रहा था। तभी जालिम ने आकर रोका और रतनसिंह के साथ उसकी मारपीट हो गयी। उसके बाद ही देखा गया कि मेरी जालिम के पास बैठ कर सब्जी या चीनाबदाम या भुट्टा बेचती थी। वह किसी दिन भी जालिम के घर नही गयी। न, पहले शादी होनी चाहिए। जालिम उसे बहुत मानता था। हाँ, मेरी में सचाई है, आस्ट्रेलियन खून का तेज है।

मेरी में कहीं-न-कहीं अविश्वास था। वह जालिम पर भी पूरी तरह विश्वास नही करती थी। सौ रुपये जमा होते ही वे शादी कर लेंगे, यह तोहरी के बाजार वालों को भी मालूम था। जालिम का कहना था कि सौ रुपये वही जमा करेगा। मेरी कुछ ले आये तो अच्छा ही है। इसीलिए उसने रुपये जमा करने की जिम्मेदारी जालिम पर ही छोड़ दी थी। जालिम के लिए यह काम आसान नही था। गाँव मे उसके माँ-बाप, भाई-बहन हैं। यहाँ किराये का मकान लेना होगा, बर्तन-भाँडे मोल लेने होंगे। सारा खर्च पूरा न पड़ेगा। उसके सिवा मेरी को कपड़े-लत्ते-साबुन देने की तबीयत होती।

मेरी ने उसे पहले एक उपहार जरूर दिया, रंगीन सूती बनियान।

'तू ही दे रही है ?' जालिम बहुत खुश था।

'न। तेरी भौजी ने भेजी है।'

इसके बाद जालिम ने उसे यह दिया, वह दिया। साड़ी-आड़ी मेरी पहनती न थी। ब्याह के बाद पहनेगी।

मेरी जानती थी कि जालिम रुपये इकट्ठा करने के लिए बहुत मुसीबतें

उठाता है। समझकर भी कुछ नहीं कहती थी। सौ न सही, बानवे रुपये उसके इकट्ठा हैं।

रुपये उसकी कमाई थे, प्रसाद के घर से। सरकारी कानून था कि जंगल के अंचल में किसी के घर में भी अगर महुआ का पेड़ हो तो उसे जो ले, महुआ के पेड़ पर उसका अधिकार हो जाता है। महुआ नकद पैसे दिलाने वाला फल होता है। महुआ से शराब बनती है, महुआ के काले बीजों के तेल से गदे कपड़े धोने का साबुन बनता है। प्रसाद के घर के चारों महुआ के पेड़ों के फल मेरी बटोरती थी। गाँव में कोई और मज़ाक में भी फलों को हाथ नहीं लगा सकता। मेरी दाब उठा लेती। वह उसके हक की चीज़ थे। इसी के लिए वह प्रसाद के घर बिना वेतन के ही इतनी मेहनत करती थी।

प्रसाद की पत्नी को यह काम बहुत अच्छा नहीं लगता था, लेकिन लछमनप्रसाद कहते, 'उधर मत देखो। कौन इस तरह मकान साफ़ करेगा, गायें चरायेगा? तोहरी जाकर फ़ायदे से फल, सब्ज़ी, बदाम कौन बेच आयेगा?'

मेरी भूत की तरह मेहनत करती थी, लेकिन प्रसादजी से वह कोई अंतरंगता बरदाश्त नहीं करती थी।

'क्यों रे मेरी, महुआ बेचकर कितने रुपये हो गये?'

'आपको जरूरत है?'

'महाजनी कारोबार शुरू कर दे।'

'हाँ, वही करूँगी।'

'देख, मैं इसीलिए तुझे महुआ लेने देता हूँ। नहीं तो सरकारी हवा है। नौकर लगाकर उठवा सकता था। नहीं लेता हूँ न?'

'नौकर आकर देखें तो। दाब नहीं है?' मेरी की आवाज़ बहुत रूखी और गंभीर हुआ करती थी।

प्रसादजी कहते, 'होगा न? साहबी खून है।'

प्रसाद-पत्नी मेरी से तेल मलवा कर बदन दबवाती। चर्बी छाये शरीर से मेरी का चिकना और कठोर शरीर देखतीं। कहतीं, 'क्यों रे, शादी कितनी दूर है? जालिम क्या कहता है?'

लाना चाहता है ? फिर बदमासी करेगा तो नाक काट लूँगी।' हाथों को हिलाती हुई वह गर्व के साथ निकल गयी।

उन लोगों के सामने तहसीलदार का चेहरा उतर गया। कहने वाला था कि अच्छे मन से एक चीज दी थी।

गाँव के बूढ़े बोले, 'फिर मत देना।'

'क्या कहा ?'

'फिर मत देना।'

'ऊ का अच्छा औरत है ? कोई अच्छी औरत मुसलमान के साथ सादी करेगा ?'

'फिर मत कहना।'

सहसा तहसीलदार की समझ में आया कि वह और उसके आदमी संख्या में कम है। यही लोग ज्यादा है। सबके पास बलोया, कुल्हाड़ी या दाव है। वह चुप रहा।

रात को ड्राइवर ने भी उससे कहा, 'यह सब बेकार बात मत उठाइयेगा। ये आदिवासी लोग खचड़े होते हैं। कोई थाने में पता करे तो मुश्किल होगी।'

ड्राइवर को मालूम था कि तहसीलदार के घर में पत्नी और बेटा थे। जानता था कि इसके बावजूद तहसीलदार औरतों के लिए मरता था। मेरी बहुत मोहनिया जरूर थी। लेकिन उसके कारण आदिवासी लोगों को बिगाड़ कर थाना-पुलिस करना बेवकूफी थी। मेरी अगर राजी होती तो कोई बात ही न थी। पर मेरी राजी न थी। तहसीलदार को यह ध्यान में रखना ही होगा।

इसके बाद प्रसादजी भी गंभीर हो गये। भिकनी चाय लाने लगी। तहसीलदार ने उस घर में जाना छोड़ दिया। लेकिन मेरी की बात न छोड़ी।

मेरी जब गाय चराकर लौटती, तोहरी से लौटती, तोहरी वाले को कहकर तीन मील दूर मुरहाई स्टेशन जाती, हाट करने घूमने जाती तो तह-सीलदार दूर-दूर रहकर उसका पीछा करता।

लड़कियाँ कहतीं, 'मेरी, वह ठेकेदार तुझे प्यार करता है।'

'आप गरीब आदमी की बात सुनकर क्या करेंगी ? आप शादी करा देंगी ?'

'राम-राम ! मुसलमान के साथ ? मैं शादी कराऊँगी ?'

'क्यों ? मुसलमान ने तो शादी करने को कहा है। आपके भाई ने तो रखैल बनाकर रखना चाहा था।'

मुँह पर सीधे जूता खाकर मालकिन चुप हो गयी। जो लड़की भूत की तरह मेहनत करे, आधे मन का बोरा पीठ पर लादकर ट्रेन पकड़ कर चली जाये, आधा घंटे में पूरा मकान साफ कर दे, उसकी बात तो बरदाश्त करनी ही पड़ेगी।

मेरी से सभी डरते थे। मेरी अपना अच्छा स्वास्थ्य, असीम कार्यक्षमता, तेज बुद्धि लेकर घर साफ़ करती, गाय चराती। चराते-चराते भुना मक्का खाकर कलेवा कर लेती। खड़े-खड़े फल तोड़ती। कुँजड़ों को खुद तौलकर देती। चिड़ियों और चमगादड़ों के खाये फल बोरे में उठाकर ले जाती और अपनी माँ की पाली हुई मुर्गियों को खिलाती। वर्षा आने पर बीजों से उत्पन्न चारे को उखाड़-उखाड़ कर रोपती। चारों ओर उसकी कड़ी नजर रहती। प्रसाद की जरूरत के चावल-तेल-घी-मसाला तोहरी बाजार से ख़रीद लाती। खुद ही कहती, 'आपका जितना पैसा बचाती हूँ, और फ़ायदा करा देती हूँ, उसके आपका बरस मे कितना रुपया जमा हो जाता है, माँ-जी ? सस्ती-साड़ी क्यों लूँ ? अच्छे कपडे पहनूंगी, तेल-साबुन लगाऊँगी, सब-कुछ देना होगा।'

प्रसाद-पत्नी लाचार उसे अच्छे कपड़े पहनाती।

बीच-बीच मे वह गाँव में अड्डा मारने जाती। अबेर-सबेर। वहाँ जाकर पेट में कपडा लपेट कर प्रसाद-गिन्नी बनती, एक पैर लँगडाकर प्रसादजी बनती, और सबको हँसाती। वहाँ वह बहुत सहज हो जाती थी। जवान लड़के जब कहते, 'मुसलमानी बीवी यहाँ ?'

'तुममें किसी ने ब्याह किया है ?'

'तूने किया ?'

'मेरी तरह लंबा होकर, इतना गोरा होकर क्यों नहीं आया ?'

'तू तो साहब की लडकी है।'

'हाथ नहीं आ रही हूँ, इसलिए। पाते ही प्यार उठ जायेगा। मेरी माँ से भी तो साहब ने प्यार किया था।

'तुझसे सादी करेगा।'

'उसकी औरत है।'

'तो उससे क्या ?'

'छोड़ो उसकी बातें।'

पेड़ों की कटाई चलती रही। धीरे-धीरे जाड़ा कम हुआ। यहाँ ढाक के पेड़ मीलों में थे। पेड़ों में नयी कोंपलें फूटी थीं। उसके बाद एक दिन पहान के घर नगाड़ा बजा। पता चला कि होली के दिन आदिवासियों का जो शिकार खेलने का नियम है, इस बार वह शिकार औरतें करेंगी। बारह बरस तक आदमी लोग इस शिकार पर जाते रहे। उसके बाद आती है औरतों की पारी। आदमियों की तरह उन्होंने भी बलोया निकाले और तीर-कमान लिये। जंगलों और पहाड़ों पर गयीं। साही-ख़रगोश चिड़िया—जो मिलता वही मारतीं। उसके बाद सब मिलकर वन-भोजन करतीं, शराब पीतीं, गाने गातीं, शाम को घर लौटतीं। मर्द लोग जो कुछ करते, वे भी बिलकुल वही करतीं। बारह बरस में एक दिन मिलता। तब होली की आग जलाकर वे बातें करने बैठ जातीं। बुधनी ने कहा, 'उस बार हमने गुलदार मारा था। उन दिनों मैं जवान थी।'

बूढ़ियाँ गप्पें सुनतीं, प्रौढ़ाएँ खाना पकातीं, जवान लड़कियाँ गाना गातीं।

वे शिकार क्यों करती थीं, यह उन्हें पता न था। मरदों को मालूम था। हज़ारों-लाखों सालों से वे इस दिन शिकार खेलती थीं। एक दिन वन में जानवर थे, जीवन वन्य था, शिकार खेलने के अर्थ थे। अब वन शून्य है, जीवन का क्षय हो गया है और वह समाप्त हो गया है। शिकार खेलना अर्थहीन है। सचमुच, केवल एक दिन का आनन्द रह गया है।

तहसीलदार के बराबर एकाग्र पीछा करने से मेरी का धीरज छूट जा रहा था। जालिम को भी पता चल सकता था। पता चलने से वह बिगड़ उठेगा। हो सकता है कि मौका मिलने पर तोहरी बाज़ार में तहसीलदार को मार बैठे। तहसीलदार के पास बहुत रुपये हैं, बहुत आदमी हैं। शहरी

'बड़ा साहब ! औरत के पेट में बच्चा देकर चूहे की तरह भाग जाये। मेरी माँ तो बदमाश थी। जब देखा कि लड़की गोरी है, तभी मार डालती। तब क्या इतना शोर होता ?'

'मार डालती तो तेरा क्या होता ?'

'मैं रहती ही नहीं।'

'बेकार की बात छोड़। मुसलमानिन बनेगी तो बनेगी। बनने के पहले हमें किसी दिन...।'

'क्या ?'

'भात-मुर्गी-खमी और मद।'

'खिलाऊँ। खू---ब खिलाऊँगी। कब नहीं खिलाया ? बताओ न ?'

'सो तो खिलाया।'

जो मेरी प्रसादजी का फ़ायदा कराने के लिए मन-मन भर का बोझा उठाती, फल बेचकर कुँजड़ों से झगड़ती, एक चौनावदाम किसी को न देती, वही मेरी घर से चोरी कर मूँगफली का तेल, आटा, गुड़, नमक और मसाला ले आती।

टोली में सारे ओराँव घर में बैठकर मिट्टी की कड़ाही में आटे के पीठे तलते। सब के साथ खाते। जिस तरह यह मालूम था कि जालिम से शादी करेगी, उसी तरह यह भी मालूम था कि यदि वह देखने में ओराँव की किसी भी लड़की की तरह होती और कहीं जो उसका पिता सोमरा या बुधना या मगला ओराँव होते---तो ओराँव यह ब्याह न होने देते। श्वेतरंग पिता की जारज बेटी होने से ओराँव लोग असली खून न मानते थे और अपने समाज के कड़े रीति-रिवाज उस पर आरोपित नहीं करते थे।

करने पर वह विद्रोह करती। नहीं करते, इसलिए उसे दुख होता था। उसके अन्तर्मन में बहुत गहरे कहीं मानो ओराँव समाज का आदमी होने की आकांक्षा थी। वह बहुत खुश हुई होती, अगर तेरह-चौदह बरस की उम्र में कोई साहसी ओराँव लड़का उसे खींच ले जाकर शादी कर लेता ! मेरी ने तोहरी में दो-तीन हिन्दी फ़िल्में देखी थीं। आमन---जड़हन---की फ़सल में तोहरी में चलता-फिरता सिनेमा आता। वे खुले मैदान में सिनेमा दिखा थे। कुरडा गाँव की औरतें ही क्यों, लड़कों में से भी किसी ने सिनेमा

तिकड़में। कोई चोरी का मामला वना कर अन्त मे जालिम को फँसा सकता है।

इसके साथ ही तहसीलदार भी धीरज खोता जा रहा था। पेड़ों की कटाई जल्दी ही हो जायेगी। कारोवार समेटकर चले जाना होगा। तव क्या होगा ? तहसीलदार ने एक दिन मेरी का हाथ पकड़ लिया।

अवसर अनुकूल था। इस बार मरदों को शिकार खेलना नहीं था। मर्द शराब पियेंगे, होली के नये-नये गाने बनायेंगे। साथ होकर गाने निकलेंगे, पैसे लेंगे। तहसीलदार ने उन्हें होली के लिए शराब देने को कहा था।

पेड़ काटने की जगह से घर लौटते हुए गाना, रोज गाना। एक-रस वैचित्र्यहीन सुरों में। मेरी वही सुन रही थी। हाट से लौटी थी। सुनते सुनते शाम हो गयी। वह घर की ओर चली।

तहसीलदार जानता था कि वह आयेगी। उसका हाथ पकड़कर तहसीलदार बोला, 'आज नहीं छोड़ूंगा।'

मेरी पहले तो घबरा गयी। धरपकड़ में दाव अलग जा पड़ा। बड़ी कोशिशों से, चुपचाप बहुत धक्कामुक्की के बाद मेरी छिटक कर अलग हो सकी। दोनों ही उठकर खड़े हो गये। तहसीलदार की आँखो पर इस वक़्त काला चश्मा नही था। लम्बी जुल्फ़ें, लम्बे बाल, टेरीक्लाथ की पैंट, नुकीले जूते, बदन पर गहरे लाल रंग का कपडा। होली-गान की पृष्ठभूमि में मेरी को वह जानवर लगा। जा—न—व—र ! इस शब्द ने मन में कहीं आघात किया। अचानक मेरी हँस पड़ी।

'मेरी !'

'बस वहीं खडा रहा। आगे न बढना।'

'क्या देख रही है ?'

'तुझे।'

'मैं तुझे...।'

'मुझे तुम बहुत चाहते हो। यही न ?'

'बहुत।'

'अच्छा।'

'अच्छा क्या ?'

देखा था। सिनेमा नहीं देखा, अच्छे कपड़े नहीं पहने, न कभी भरपेट खा पाये। इनके ऊपर देवी का एक प्रकार का आकर्षण भी था।

इसी तरह मेरी का जीवन चल रहा था। एक दिन अचानक ट्रेन रुकने पर प्रसादजी के बेटे के साथ ठेकेदार तहसीलदारसिंह उतरे, और मेरी के जीवन में उलट-पुलट हो गयी। कुरुडा के शान्त और दरिद्र अस्तित्व में तूफ़ान उठ आया।

दो

प्रसादजी के बँगले से लगी जमीन पचहत्तर एकड़ या दो सौ पच्चीस बीघा थी। उस अंचल में कोई सीलिंग नहीं मानता था। दूर-दूर पर कभी टिम्बर-प्लांटरों के जो बँगले थे सबके साथ लम्बी-चौड़ी ज़मीनें थीं। डिक्सन साहब ने पचास एकड़ में साल के पेड़ लगाये थे। उस अंचल के बौने साल नहीं थे, वे जायंट साल थे। कुछ दिनों में पेड़ लंबे महीरुह बन गये। कटने के लिए तैयार। साल के पेड़ न होने पर प्रसादजी इस ज़मीन पर क्या-क्या उगा सकते, इस पर बहस करते। अब साल के पेड़ों की कीमत जानकर अच्छे दामों पर पेड़ों को बेचना उनका लक्ष्य था। इस प्रस्ताव पर लालचन्द और मुलतीजी, अंचल के दूसरे दो जंगल-मालिक भी खुश हुए। प्रसाद का लड़का बनवारी सक्रिय हुआ और डाल्टनगंज-छीपाडोर में खेती करने लगा। सुनने वाले थे तहसीलदारसिंह।

तहसीलदारसिंह ने आते ही पहले कटने वाले पेड़ों को देखा। उसके बाद मौके की बहस शुरू हुई। प्रसाद बोले, 'इस तरह की साल की लकड़ी ! इन दामों पर बेची जायेगी ?'

'क्यों बेची जाये ? जहाँ नफ़ा मिले, वहीं बेचिये।'

'कुछ दाम की तरह दाम कहिये।'

'प्रसादजी, बनवारी मेरा पक्का दोस्त है। वह छीपाडोर में सर्विस करता है और मैं ठेकेदारी करता हूँ। झूठ नहीं कहूँगा। पेड़ मँच्योर और लकड़ी भी पक्की है।'

'समझ गयी कि सचमुच चाहते हो।'

'सचमुच चाहता हूँ। तुझ-सी लड़की मैंने नही देखी। तू लाख टके की है। वह बाजारी आदमी तेरी कदर करेगा? वह मुसलमान?'

'तुम तो करोगे?'

'ज़रूर। कपड़े दूँगा। गहने दूँगा...।'

'अच्छा।'

'सब-कुछ दूँगा।'

मेरी ने बहुत ज़ोर से साँसें ली। फिर बोली, 'आज नही। आज मैं अशुच हूँ।'

'कब, मेरी, कब?'

मेरी की आँखें और चेहरा कोमल पड़ गये। बोली, 'होली के दिन। तुम उस टीले के पास रहना। सब औरतें शिकार खेलने दूर-दूर जायेंगी। मैं तुम्हारे पास आऊँगी। तुम्हे पता तो है टीले का! तुम उसी पत्थर की ओट से मुझे देखा करते हो।'

'समझ गया।'

'तो उस रात ठीक रहा?'

'हाँ, मेरी!'

'लेकिन किसी को बताना मत। मरद को तो दोष नही लगता, औरत को दोष लगता है। मैं तो दूसरे बाप से हूँ। इसीलिए मुसलमान से सादी कर रही थी।'

'अब तो नही करेगी?'

'अब करूँगी? तुम भी थोड़ा धीरज रखो। इस तरह मेरे पीछे मत घूमो।'

'तेरे लिए बहुत तकलीफें उठायी...।'

'सब ठीक कर दूँगी। होली के दिन।'

मेरी ने उसके गाल पर हाथ फेरा। बोली, 'तुम बड़े अच्छे हो, पहले नहीं समझी थी।' झूमती हुई मेरी चली गयी। उसे मालूम था कि आज तहसीलदार दूसरी बार उसे पीछे से नही दबोचेगा।

'साहब लोग लगा गये हैं।'

'हाँ, पर यहाँ पेड़ कटाने पर टुकड़े कराने होंगे। ट्रक यहाँ तक नहीं आ पायेगा। साहब लोगों का जमाना नही है कि फ़ारेस डिपाट से हाथी ले आये और तोहरी तक लकड़ी घसिटवा कर ले गये। हमे मुरहाई तक ले जाना पड़ेगा। कच्चे रास्ते मे ट्रक के टायर फँस जायेंगे। उसके पहले पेड़ कटायें। अब सोचिये, मेरा कितना ख़र्च होगा?'

'फ़ायदा तो होगा?'

'जरूर, फ़ायदे के बिना कोई काम करता है? फिर भी नफ़ा आपका ज्यादा है। पानी के भाव बँगला मोल लिया, लगा-लगाया साल का फ़ारेस मिला। जो होगा, वह सारा फ़ायदा ही होगा, क्योंकि इसके लिए तो आपकी कोई लागत नही आयी है। मकई नहीं है कि भैंसे ने पूँछ खीच ली, नौकर काटकर ले गये। शरीफ़ा या अमरूद भी नही कि चिड़िया-चमगादड़ भगायें। फ़ारेस एरिया, साल एरिया, पेड़ हैं, फटाफट बेच दें।'

लालचन्द और मुलनी भी बोले, 'इतनी तकरार न करो, भैया! उनके चले जाने पर क्या करेंगे? साल गाछ मे जब बतास चलती है, दरिया गरजता है, तो वही सुनेगा। फूल होते हैं, फल नही होते। वही देखेगा। ख़रीदना चाहे तो बेच दूँगा।'

ठेकेदार भी यही चाहता था। साहब कैसे पेड़ लगवा गया था! सिरे आसमान मे जा रहे हैं, तने रेल के इजन की तरह मोटे हैं। सिर्फ़ प्रसादजी के पेड़ ही क्यो ख़रीदे जायेंगे? इस अंचल के सारे पेड़ वह ख़रीदेगा।

हर पाँच-सात बरस मे कुछ पेड़ तैयार होंगे, और मैं ही ख़रीदूँगा। फटाफट। जो अभी तक वर्जित एरिया है, हम ही मानोपली गाछ फ़ॅलिंग करेगा। पेड़ों के काटने का मेरा ही एकाधिकार होगा।

ठीक वही हुआ। प्रसादजी ने बाद में समझा कि पेड़ों की ढुलाई के ख़र्च की बात पूरी-पूरी सच नही थी, क्योंकि मुरहाई के बाद ट्रक कुरुडा के नज़दीक चला आया। उधर की ओर भूमि समतल और पथरीली थी। ट्रक आने मे रुकावट न थी। वहाँ ठेकेदार का तम्बू लगा। पेड़ों को काटने के लिए दो होशियार आदमी आये।

ठेकेदार आदमियों की भरती करने बैठ गया। कुरुडा, मुरहाई, सिद्दो,

तीन

पिछली रात आग जली थी। आज भी जलेगी। कल रात होली की आग बहुत ऊपर उठकर बड़ी देर तक आकाश लाल किये रही। आज सवेरे से ही मर्द लोग मद मे, गान मे, अबीर मे मत्त हो रहे थे। जो बहुत बूढ़े थे, उन्होंने रखवाली के लिए कुछ बच्चो को ले लिया था।

सब औरतें जगल चली गयी थी। सब आदमी अपने-अपने घरों के आगे बलोया, कुल्हाडी, तीर-कमान लेकर जोश मे तने खडे थे। पहान के नगाडे पर चोट मारते ही वे कुलकुली की तीखी आवाजों से आसमान चीरते हुए भागे। भिकनी प्रसादजी की एक कमीज और उनकी पत्नी का साया पहन कर भागी।

बुधनी, मुंगरी, सोमरी, सनीचरी—इनकी भागदौड का जमाना बीत गया था। वे शराब की बोतल, पकाने को दाल-चावल, बर्तन, नशे की चाट, मकई की खीलें, प्याज-मिर्चा लेकर खाली पडे बम्फील्ड बँगले मे गयी। वहाँ कुएँ का पानी था। मर्द भी शिकार के बाद वहीं पकाते-खाते थे। बुधनी ने औरतों से कहा, 'अपने जमाने में हम खरगोश-साही-तीतर कुछ-न-कुछ लिये बिना नहीं लौटते थे। देखें, तुम क्या करती हो ? कैसा शिकार करती हो ?'

मेरी ने आज जालिम की दी हुई नयी साड़ी और पोत की माला पहनी थी। नाचते-नाचते बुधनी को पकड़कर वह बोली थी, 'सिकार खेलकर आने बाद तुमसे सादी कर लूंगी। तब मैं बर और तू बहू बनेगे।'

'ऐसा ही होगा।'

'तुझे नचाऊँगी।'

'नाचूंगी।'

मेरी आज खुशी के मारे उछली पड रही थी। माँ के हाथ पर नकद दस रुपये रखकर उसने माँ की पाली हुई चार मुर्गियाँ मोल ली थी। इस समय मुर्गियाँ सनीचरी के हाथों मे थी। मेरी ने दो बोतल शराब भी दी थी। यह अलग से था। औरतों ने पहले ही तहसीलदार से शराब माँग ली थी। तहसीलदार ने आदमियों को शराब के सिवा एक बकरा भी दिया था। कहा था, 'वह शाम को आकर सबको शहर का ट्विस नाच दिखायेगा। बोतल-

यपारी, घूमा, चीनाटोहा—छह गाँवों के ओरॉव मुंडा औरत-मरद आये।
विश्वास करने योग्य बात न थी। घर बैठे पैसा। गाछ काटेंगे दूसरे लोग,
उनके डाल-पत्तों की छँटाई, कटे पेड़ों के टुकड़े करने के बाद उन्हें उठाकर
ट्रकों में लादना। आदमियों को दिन में बारह आना, औरतों को आठ आना।
उसके बाद दोपहर को मकई के सत्तू का टिफ़िन। सारा अविश्वसनीय!
सत्तू के साथ नमक और मिर्चा। ग्राम पहान और गाँव के बूढ़े औरत-मरद
खायेंगे। गाँव पीछे हर हफ्ते एक बोरा नमक। गाँव के बूढ़े बोले, 'औरतें
सिरम करेंगी, तो उनकी इज्जत?'

ठेकेदार बोला, 'हर कोई हरएक की माँ-बहन हैं। जो गलती करेगा
उसे भगा दूँगा।'

ट्रक की गतिमयता, ठेकेदार की बातचीत की स्पीड, फौरन काम की
व्यवस्था की तेजी—इन सबसे गाँव के बूढ़ों का दिमाग चकरा गया। इससे
उनको लगा ही नहीं कि ठेकेदार की बात ठीक नहीं है। सब हरएक की माँ-
बहन नहीं हो सकती। बात पक्की होते ही ठेकेदार ने गाँव के बुजुर्गों के हाथ
में एक नम्बर की चुआई दो बोतलें पकड़ा दीं। कुरुडा गाँव के बुजुर्गों ने और
लोगों से कहा, 'गाँव जाकर पहान से कहकर थान पर पूजा देना। हमारे
अच्छे दिन आ गये हैं।'

ठेकेदार ने ट्रक के ड्राइवर से भी बातें कर लीं। मुरहाई पर ट्रेन पक-
ड़ते हैं। वहाँ के लिए बात कर ली, जरूरत होने पर कुरुडा में गाड़ी पकड़ी
जायेगी। वैगन मिलेगा। ठेकेदार ने ड्राइवर को भी बोतल दी। साल के
एक-एक पके पेड़ का दाम वह पन्द्रह रुपये दे रहा था। किसी भी खर्च से
उसका बेतहाशा मुनाफा कम नहीं हो रहा था। वह घनफुट के हिसाब से
बेचेगा। उसने बनवारी को एक ट्रांजिस्टर दिया। बनवारी न बताता तो
उसे पता भी न चलता कि कौने साल के देश में इस क्वालिटी के साल के
पेड़ हैं। सारा रोजगार बड़े फ़ायदे का है।

ठेकेदार ने अपनी जात के प्रसाद और मुलनी और लालचन्द की बर्बर
अशिक्षा और अज्ञता की तारीफ की। बेचारों को पता ही नहीं, क्या माल
दिये दे रहे हैं! बनवारी को उसने पेड़-पीछे एक रुपया चुपचाप दे दिया
था। उसके बाद भी उसे काफ़ी मुनाफ़ा था। बहुतेरे पेड़ पाँच-सात बरस में

पर-बोतल शराब पियेगा।' उसकी पेड़ो की कटाई हो गयी थी। कटे पेड़ के टुकड़े पड़े हुए थे। बहुत थे। तहसीलदार ने बड़ी उदारता से उन्हें कुरुडा के लोगों को ईंधन के लिए दे दिया था। कहा था, 'फिर आऊँगा, तुम्हीं लोगों से पेड कटाऊँगा। उस वक्त तुम्हे शराब में डुबो दूँगा।'

बुधनी आदि के साथ चुहल करके मेरी भी भाग गयी। सनीचरी बोली, 'ओः, आज मेरी कैसी लग रही है ! जैसे मुलनीजी के बेटे की बहू हो।'

बुधनी बोली, 'वह ब्याह कर चली जायेगी तो कुरुडा अँधेरा हो जायेगा।'

मुंगरी बोली, 'टोली में कभी खाली हाथ नही आयी। तुमने उसे देखा था, भूल गयी, जवानी मे मिकनी कैसी सुन्दर थी !'

सोमरी झूम रही थी और चल रही थी। सहसा वह आँखें मूँद कर गा उठी :

होली मे अगिन रे होली मे अगिन।
तुम देख-देख घर आना, भूले न रहना...।

औरो ने उसके साथ टेक पकड़ी। विगतयौवना, प्रौढा, चार पिलंक बूढ़ियाँ प्रेम के गीत गा रही थी, धूप तेज़ हो रही थी, नशा जम रहा था। दूर-दूर पर नगाड़े और भोंपू की आवाजें थी।

मेरी भाग चली। औरतें कुरुडा पहाड़ पर चढ़ रही थी, जगल में घुस रही थी, नाले के किनारे जा रही थी। मेरी मुस्करायी। उन्हें शिकार नही मिलेगा। सारे खेलो की तरह शिकार के भी नियम होते हैं। साही-खरगोश-तीतर मार कर क्या होगा ? चारा फेंककर बड़ा शिकार मारना होता है।

रगीन साड़ी और लाल कुर्ती मे मेरी इस समय चलते हुए पलाश-गाछ-सी लग रही थी। जैसे हवा में पलाश के ढेर सारे फूल भागे जा रहे हो। चारों ओर पलाश-ही-पलाश थे। सारे लाल-लाल हो रहे थे। एक खरगोश भागता हुआ निकला। मेरी हँसी। उसे पता था कि वह किस भिटे में रहता था। भाग जा। डर मत। मेरी ने हँसकर कहा, 'ओः शराब के नशे में कैसी मस्ती है ! तहसीलदार, तहसीलदार, मैं आ गयी।' स्वर ऊँचा होकर तेज़ प्यास में नाच रहा था। तहसीलदार उसे बहुत चाहता था। इस समय उसके निकट जालिम कुछ न था। तहसीलदार उसे कितनी उग्रता से चाह सकता

काटने लायक हो जायेंगे। प्रसाद को हाथ में रखने की जरूरत है। जल्द ही यह सब अंचल उधर तोहरी में और इधर निरला घाट मे जुड़ जायेंगे। सड़क बन रही थी। सड़क बन जाने पर भविष्य में ट्रांसपोर्ट का ख़र्च बच जायेगा।

कुछ दिनों के वाद ठेकेदार तोहरी से एक डिब्बा मिठाई, एक हाँडी घी लेकर प्रसाद के घर आया। प्रसाद बोले, 'मेरी, मेहमान आये हैं। कुछ चाय-वाय ले आ।'

मेरी आज ही नहायी थी, जिससे खूब रगड़-पोंछ कर साफ़ की हुई शक्ल चमक रही थी। वालों में तेल डालकर चोटी की हुई थी। छपी साड़ी आगे पल्ला डालकर पहनी हुई थी। हाथों और कानों में पीतल के गहने थे। ट्रे में चाय और खाने की चीज लेकर मेरी आयी। तहसीलदारसिंह सीधा होकर बैठ गया। 'अरे बाब्बा! यह क्या लड़की है! इस जंगल में?'

प्रसाद जी समझ गये। मेरी के वाहर जाते ही वे बोले, 'मेरी नौकरानी की लड़की है। उसकी माँ जब उसकी तरह जवान थी, उस समय...।'

मेरी के रूप का गोपनीय रहस्य बताकर वे उपसंहार में बोले, 'मेरा परिवार उसे बेटी मानता है, हम पर वह माँ-बाप की तरह भक्ति करती है।'

'सो तो होगा ही,' तहसीलदारसिंह बोला, 'नही तो सब लोग आपको बड़ा आदमी कैसे कहते हैं? बड़ा वही होता है जिसका कलेजा बड़ा हो।'

उसने मन-ही-मन सोचा कि इस जगल मे पेड़ काटने का रोजगार बड़े फ़ायदे का है। मेरी उसके जंगल-प्रवास को और भी लाभप्रद बना सकती है।

मेरी तोहरी, कुरुडा और बाहर की दुनिया के नियमित मेल-जोल का सेतु थी। रात मे जब प्रसादजी को वह दवा के लिए गरम पानी देने आयी तो बोली, 'इस हरामी ने तो आपको धोखा दिया है। नफ़ा पीट लिया। तोहरी से छीपाडोर तक सब हँस रहे है।'

प्रसादजी ने नकली दाँतों की पट्टी निकालकर पानी मे रख दी। उसके बाद दवा खायी। थोड़ी देर बाद बोले, 'क्या करें, मेरी? रोड है न'... हमारी क्या सामर्थ्य है कि हम मुनाफे पर किसी को बेचें? जंगल

है ? कितनी डिग्री फ़ारेनहाइट ? मेरी की तरह उसका वन्य रक्त है ? ऐसा साहस ?

एक साही निकली। जा, चली जा। आज का दिन न होता तो मेरी उसे मारती, उसका मांस खाती। आज अधिक छोटे से उसकी तबीयत नहीं भरेगी। शिकार चाहिए, बड़ा शिकार ! मानुस चाहिए, तहसीलदार। दूर से टीला दिखायी दिया। सीधा, खड़ा पत्थर। ऊपर से कानिस की तरह निकला हुआ पत्थर। वहाँ से गिटगिन्दा लता ने उतरकर लता-जाल बना लिया था। जालों के ऊपर पीले गिटगिन्दा के फूल थे। जाल के पीछे ओट थी। उसे सोचते ही मेरी का खून चौंक उठा। उसके बाद आगे बढ़कर लता-जाल के पीछे गड्ढा था, गड्ढे के किनारे अलग पत्थर था। गड्ढा कितना गहरा था, यह किसी को मालूम न था। किसी ने उसमें उतरकर नहीं देखा था। उसी अतल और शीतल अंधकार में अगर उतरा जाये ? वह तहसीलदार है। तहसीलदार की गहरे लाल रंग की शर्ट दिखायी दी।

विलायती शराब, सिगरेट, तहसीलदार।

'चलो जी, अन्दर चलो।'

'अन्दर कहाँ ? तेरे अन्दर घुसें ?'

'हाँ जी, हाँ।'

'गड्ढे के किनारे। लताजाल की ओट।'

'पहले दारू पियो।'

'खाली दारू क्यों ? सिगरेट दो।'

'कैसी लगी ?'

'बहुत बढ़िया।'

'इतनी जल्दी-जल्दी मत पी।'

'नशा चाहिए न !'

'कितना ?'

'बहुत-बहुत नशा चाहिए। और मद।' नशा हो रहा है। दिमाग़ में तारे चमक रहे हैं, बुझ रहे हैं। आः, नशे से आँखों के आगे झालर हो रही है। झालर झिलमिली है। झालर के उस पार तहसीलदार का चेहरा है। और मद। बोतल लुढ़क गयी—गड्ढे की गहराई में—आवाज़ भी नहीं हुई।

पर यही होता है। बनवारी उसे ले आया। बनवारी गँवार है, बिलकुल अपनी माँ की तरह है। मैंने पहले 'न' कह दिया। उस पर लालचन्द और मुलनी गुस्सा हो गये। घर में भी बहुत आपत्ति हुई।'

'बनवारी ने भी रुपये लिये हैं।'

'तुझे पता है?'

'हुमनी के मालूम है।'

'देख, कैसे दुख की बात है!'

ठंडी साँस लेकर प्रसादजी ने उसे एक रुपया दिया। इस तरह वे बीच-बीच में कुछ पैसे देते रहते थे। बोले, 'मेरा एक फल, भुट्टे का एक दाना न जाये उसके लिए तूने कितनी तकलीफ़ उठायी और अपना बेटा कुछ नहीं समझता। बता तो क्या किया जाये? मैं क्या जानता नहीं हूँ? मेरे मरने पर बेटा यह सब बेच-बाच कर भाग जायेगा।'

'बाद में जब पेड़ बेचेंगे, तो उतने दिनों में रोड बन जायेगी। उसको मत देना। खुद छीपाडोर जाना। बड़ी कम्पनी से बात कर काम कीजियेगा। उस समय नरम मत पड़ियेगा।'

'ठीक कह रही है।'

मेरी ने कुरुडा में गाँव के बुजुर्गों से कहा, 'बारह आना और आठ आना! इतनी मजदूरी पर लोहरी या छीपाडोर में कोई कुली बाबू लोगों के बैग भी नहीं उठाता।'

गाँव के बूढ़े बोले, 'का करें, मेरी? मेरे ना कहने से गाँव के लोग बिगड़ जाते। कहते, कौन हमें यह पैसे देगा?'

मेरी बोली, 'उसे लालच हो गया है। पाँच-सात बरस में वह फिर आयेगा। तब भाव कस के तीन रुपये, दो रुपये लेना। उसे देना पड़ेगा। नहीं तो यहाँ बाहर के आदमी वह कहाँ से लायेगा?'

'रोड नहीं है। काम मिलता नहीं, सब-कुछ जानती तो है।'

मेरी को लगा कि ठेकेदार की लोलुप नजर के हिसाब से उसने भी अपनी अक्ल के मुताबिक सब लोगों को उसका असली रूप बता दिया है।

लेकिन तहसीलदारसिंह उसकी बात नहीं भूला। कई दिन बाद मेरी जब भैंस की पीठ पर बैठ दूसरे जानवरों को हाँकती घर लौट रही थी, तब

गड्ढा कितना गहरा है ? अब चेहरा, हाँ अब बिलकुल शिकार की तरह हो रहा है।

मेरी ने दुलार से तहसीलदार के चेहरे पर हाथ फेरा, ओठों पर चुम्मी ली। तहसीलदार की आँखों में आग थी, मुँह फैला हुआ था, ओठों पर लार थी, दाँत झलक रहे थे। मेरी ने देखा। देखा, अब चेहरा बदलने लगा! अब! हाँ, जानवर हो गया।

'अब मुझको ले।'

मेरी ने हँसकर उसको जकड़ लिया, जमीन पर लिटा दिया। तहसील-दार हँस रहा था। मेरी ने दाव उठाया-नीचा किया, उठाया नीचा किया।

कई लाख चाँद बीत गये। मेरी उठ खड़ी हुई। खून? कपड़ों पर? कपड़े? नाले में धो लेगी। तेजी की होशियारी से उसने तहसीलदार की जेब से पर्स लिया। बहुत रुपये थे। बहुत-से रुपये थे। कमर की गुथनी खोल अपने जमा किये रुपयों में उन रुपयों को रख लिया।

उसके बाद पहले तहसीलदार को गड्ढे में फेंका, उसका पर्स सिगरेट और रूमाल भी। एक के बाद एक पत्थर। खून की गन्ध से रात को ही लकड़बग्घा चला आयेगा, भेड़िया। या न आये।

मेरी निकल आयी। नाले की ओर चली। नाले में उतर नंगी होकर नहाते-नहाते उसका चेहरा गहरे संतोष से भर गया। मानो पुरुष-संग करने के बाद उसे अन्तहीन तृप्ति मिली हो।

औरतों में सबसे अधिक मद मेरी ने पी थी, गान गाये, नाची, सबसे ले-लेकर मास-भात खाया। शिकार नहीं मिला, इसलिए पहले तो सबने उसे चिढ़ाया। उसके बाद बुधनी बोली, 'देखो, कैसे खा रही है? मानो उसने सबसे बड़ा शिकार मारा हो।'

मेरी ने जूठे मुँह से ही बुधनी की एक चुम्मी ली। उसके बाद दो खाली बोतलें हाथ में ले उन्हें बजा-बजा कर नाचना शुरू किया। शाम की हवा ठंडी थी। सनीचरी ने आग जलायी।

मद और गान, मद और नाच। सभी जब आग को घेर कर चक्कर लगा-लगा कर नाच रहे थे, जब गा रहे थे—

हे हरमदेउ,

तहसीलदार आकर खड़ा हो गया। बोला, 'कैसी खूबसूरत है रे! तू तो हेमामालिनी-सी लग रही है।'

'का बोला?'

'तू तो हेमा मालिनी-सी लग रही है।'

'तुम उल्लू की तरह लग रहे हो।'

तहसीलदारसिंह को इस वात से जैसे बडा सहारा मिला हो और वह नजदीक आया। मेरी ने भैंस को रोका नही। चलते-चलते उसने एक तेज किया हुआ दाब तेजी से निकाला और अलस स्वर में बोली, 'तुम्हारी तरह तंग पैंट, काला चश्मा लगाये ठेकेदार तोहरी की सडकों पर रुपये मे दस मिलते है। उनको मैं यह दाब दिखा देती हूँ। विश्वास न हो तो जाकर पता लगा लो।'

तहसीलदार को उसके बात करने का ढग बहुत आकर्षक लगा।

रात को खाने के लिए बैठने पर बनवारी बोला, 'मेरी ने मेरे दोस्त का अपमान किया है।'

बात कही भी बाप से, जवाब दिया मेरी ने, 'क्या अपमान किया तुम्हारे दोस्त का?'

'गुस्से में बात की थी।'

'इस बार बात कहकर छोड़ दिया। बाद में उस तरह की बदमाशी पर नाक काट लूंगी।'

बनवारी भी घबरा गया। बोला, 'क्या कोई बुरा किया?'

'मेरे लिए वह बुरी बात है। तुम्हारे लिए वह अच्छी बात हो सकती है।'

प्रसादजी बोले, 'तू उसे रोक देना। पेड़ ख़रीदने आया है। यह सब झगड़ा ठीक नही।'

मेरी ने भी तोहरी के बाजार में साल-गाछ बेचने की बात नही कही। घर की जमीन होने पर भी साल के पेड़ बेचना गैर-कानूनी था। साल सर-कारी पेड़ हैं।

'रख अपना कानून। कानून के हिसाब से कौन जमीन रखता है, इस अंचल में साल-गाछ कौन नही बेचता?'

ऐसन होली वरिस-वरिस होय—
ऐसन सिकार वरिस-वरिस करी—
मद देहौ तोय,
मद देहौं...।

तब नाचते-नाचते मेरी पीछे हटने लगी। पीछे होते-होते अँधेरे में। वे लोग नाच रहे थे, खूब नाच रहे थे। मेरी अँधेरे में भाग चली। रास्ते उसके नाखूनों पर थे। कुण्डा पहाड़ पर होकर वह आज रात को पैदल सात मील तोहरी जायगी। जालिम को बुलायेगी। तोहरी से बस जाती थी, लकडी के ट्रक जाते थे। वे लोग कहीं चले जायेंगे—राँची—हजारी बाग—गोमो—पटना। आज बड़े शिकार के बाद, उसे जालिम की जरूरत है।

दूर-दूर होली की आग थी। अँधेरे में, तारों की छाँह में रेल-लाइन देखकर राह चलते-चलते मेरी के मन में कोई डर न आया, किसी जानवर का डर। आज उसने सबसे बड़ा जानवर मारा है, इसलिए जंगली चौपायों के बारे में उसका रोज का, मन में समाया डर निकल चुका है।

मेरी ने बनवारी से सीधे-सीधे कहा, 'मैंने तुम लोगों की पेड़ों के बेचने की बात तोहरी बाजार में कही है।'

'कह रही है कि कही है ? कहने को मना किया था ?'

'मुझे होशियार करना पड़ेगा न।'

मेरी चली गयी। प्रसादजी बोले, 'यह अच्छी बात नहीं है। अपने दोस्त से कह देना। घर पर लड़की की तरह रहती है। उससे उसका कुछ ऐसा-वैसा कहना मेरा अपमान है।'

बनवारी ने तहसीलदार से कहा, 'यह बहुत खचड़ी और गुस्सावर लड़की है। किसी को हाथ नहीं रखने देती।'

'कौन हाथ रखना चाहता है ?'

'उसके सिवा उसकी शादी भी ठीक हो गयी है।'

'कहाँ ?'

'मुसलमान के घर।'

'राम, राम ! क्या समाज में लड़का नहीं है ?'

'उसकी पसन्द।'

तहसीलदार को यकीन ही नहीं हुआ कि कुरुडा से जंगली गाँव की मेरी ओराँव उसे उड़ा दे सकती है। पेड़ों पर निशान लगाना और कटाना, उनके टुकड़े करवाना और चालान करने के साथ-साथ ही वह मेरी के साथ लगा रहा। मेरी उसे हाथ नहीं रखने देगी, मुसलमान से ब्याह करेगी—इससे उसकी ज़िद बढ़ गयी।

इसके बाद ही वह डाल्टनगंज से मेरी के लिए एक नाइलॉन की साड़ी खरीद ले आया और प्रसादजी के लिए मिठाई। प्रसादजी से बोला, 'बहुत आता-जाता रहता हूँ। चाय पिलाती है। एक कपड़ा दे रहा हूँ।' प्रसादजी लेने को राज़ी नहीं हुए, लेकिन तहसीलदार माना नहीं। मेरी तोहरी गयी हुई थी। लौटकर उसने कपड़े की बात सुनी। पहले उसने प्रसादजी को पैसों का हिसाब समझा दिया। उसके बाद साड़ी लेकर निकली।

तहसीलदार तम्बू में बैठा आदमी-औरतों को पैसे बाँट रहा था। काफ़ी लोगों की भीड़ थी। उसी के बीच मेरी घुस गयी और गन्दी गाली देकर साड़ी फेंक दी। बोली, 'मुझे सहरी रंडी समझ लिया है ? कपड़ा देकर फुस-

शिशु

उस जगह का नाम है लोहरी और वह जगह राँची-सरगुजा और पलामू—इन तीन जिलों की सीमा-रेखाओं के मिलन-बिन्दु पर बसी है। सरकारी कागजों के मुताबिक़ वह राँची मे ही है। लेकिन सारी जगह एक ख़ास तरह का झुलसा हुआ मैदान है, मानो यहाँ भूगर्भ मे भयंकर गर्मी हो। इसीलिए पेड़ बौने-बौने, नदी का कलेजा श्मशान और गाँव तक धूल से पटे पड़े है। जमीन का रग अजीब-सा है। लाल जमीन वाला देश भी ऐसा गाढा, बादामी-लाल-सा नही दिखायी देता। सूखने के पहले खून इस तरह का फीका लाल पड़ जाता है।

यहाँ आने के पहले रिलीफ़ अफ़सर को ब्रीफ़ कर दिया गया था, समझा दिया गया था। यह अफ़सर बहुत ही भला और दयावान था! बहुत कुछ जाँच कर उसे निर्वाचित किया गया था। उसको बता दिया गया था कि यह जगह बहुत ही खचड़ी है। वहाँ के रहने वालों का, आदिवासियों का कोई ऑनेस्ट वे ऑफ़ लिविंग—जीवनयापन का कोई ईमानदार ढग—नही था।

'क्यों?'

'खेती नही करते।'

'क्यों? जमीन है?'

रिलीफ़ अफ़सर और बी० डी० ओ० बँगले में बैठे बातें कर रहे थे। बाहर अभी भी ठंडा नही हुआ था। रात मे चौकीदार बँगले के अहाते में

निवाड़ का पलँग डाल देगा। इतनी गर्मी में यहाँ कोई कमरो मे नही सोता। रिलीफ़ अफ़सर कुल तीन महीने के लिए इस काम के लिए नियुक्त हुए थे। खाद्य-विभाग ने उन्हें उधार दिया था। जिन्दगी मे उन्होंने ऐसी धूप से तपती, निकम्मी ज़मीन नही देखी थी। उनके पास जो लोग मदद लेने आते उन लोगों के लगभग नंगे, सूखे, कीड़ों और तिल्ली से फूले पेट देखकर उन्हें बहुत गंदा लगता। उनकी धारणा थी कि आदिवासी मरद बाँसुरी बजाते हैं और आदिवासी स्त्रियाँ फूल पहन कर नाचती है। गाना गाते-गाते वे एक पहाड़ से दूसरे पहाड़ों को जाती है।

जीप नीचे खड़ी कर टीले के ऊपर चढते हुए समझा था कि तेजी से पहाड पर चढना सभव नही है। कलेजा हाँफने लगता है। आदिवासी जीवन में वे गाने की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण समझते थे। अब उनके गीत सुनते है। वे एकरस, बूढ़ी डाइन के अकेलेपन की रुलाई की तरह थे। उनकी जानकारी बडी निराशाजनक थी। रिलीफ अफसर ने फ़िल्मो को, विशेष रूप से हिन्दी फिल्मों को देखकर आदिवासियों के जीवन के सबंध में कुछ धारणाएँ बनायी थी। अगर यही उनका गाना है, तो मरने पर कैसे रोया जाता है? यह गाना ही तो रोने की तरह है। राम! राम!

'वे लोग गाते क्यों है?'

'जंगली लोग है। सब कुछ भूत-प्रेत का खेल समझते है। गीत गाकर भूत भगाते हैं।'

'भूत' शब्द ही अशुभ है। बी० डी० ओ० देखते रहे और हँसते रहे। बोले, 'डर गये?'

'नही, नही।'

'यह सूखा और अकाल भी उनके लिए भूत-प्रेत का अभिशाप है।'

'ओ!'

'बहुत खराब जगह है। अच्छी जगह हिन्दू लोग रहते है, महावीरजी की ध्वजा फहराती है, यहां तो कुछ नही है। न जाने, कब मेरी बदली होगी!'

'कल मैं कहां जा रहा हूँ?'

'लोहरी। बडी खचड़ी जगह है। सालों का जमीन देने पर भी महाजन

गयी थी।

रात में स्टोर के तम्बू के सामने खाट डालकर लेट गये और सोचने लगे, रिलीफ़ दोनों हाथों से चोरी करते थे, इसीलिए प्रेतों की चोरी करने की बात सबने उड़ा दी। लोहरी के इन आगरिया लोगों का भाग्य बदला जा सकता है या नहीं, यह बात भी सोची। ईमानदार और मेहरबान अफ़सर की ज़रूरत है। उस तरह के लोग इनकी खेती के काम को बदल सकते हैं। राँची पहुँचते ही नोट देना होगा। हर बरस रिलीफ़ देकर इतने लोगों को ज़िन्दा रखना सम्भव नहीं है। ये बातें सोचते-सोचते सो गये। निश्चिन्त नींद। आगरिया युवक तंबू के चारों ओर सो रहे थे। उन लोगों ने उन्हें 'देउता' कहा था। उससे लगता था कि उनकी बड़ी जीत हुई थी। जो अपने को छोड़ किसी पर विश्वास नहीं करते, उनके मुँह से 'देउता' सुनना बड़ी भारी जीत ही तो है।

युवक दस थे, लेकिन सोये नहीं। जागकर कान लगाये रहे। इस बार कैम्प बहुत बड़ा था। शोरगुल बहुत ज़्यादा था, क्या इसीलिए ?

एक दिन उन्होंने मिले हुए पैरों की आवाज़ें सुनीं। चौकन्ने जंगली जानवर कई जोड़े पाँव बढ़ा रहे थे। दबी सीटी-सी थी। जवाब में सीटी। मानो किसी ने तंबू की डोरी खोल दी हो। उसके बाद बहुत जल्दी और खामोश ऐक्टिविटी। युवक उठे और तंबू का परदा उठाया। गहरी रात में कृष्णपक्ष का चन्द्रमा था। चावलों का बोरा उतरा, माइलो का बोरा भी। कई छोटे-छोटे हाथ थे।

रिलीफ़ अफ़सर की नींद पल-भर में टूटी। टार्च लेकर उठते ही उन्होंने देखा, आगरिया युवक नहीं है। तेज़ पाँवों से तंबू के उस पार गये। युवक डोरी खींचकर खूँटे से बाँध रहे थे। क्यों ? तंबू का परदा खुला क्यों था ? विमूढ़ और आहत, विश्वासघात से आहत अफसर ने उनकी ओर देखा। अनजान, अपरिचित चेहरे थे। वे ही थे। किन्तु उनके साथ उनके मन के व्याकुल प्रश्न का कोई भी संचार नहीं हुआ। क्रूर और विजयी हँसी हँसकर युवक पल-भर में अँधेरे वन में गायब हो गये। भागकर अफसर ने तंबू का चक्कर लगाया और अंदर घुसे। दो बोरे नहीं थे।

बाहर आये और भागे। छोटे-छोटे पैरों की आवाज़ें थीं। वन के बीच

आयरन ओर की तलाश करो। कुमा गाँव के लोग थे खबड़ा आगरिया। उन्होंने कहा, उस टीले पर हमारे तीन असुर देवताओं का वास है। वहाँ तलाश मत चलाना। दो पंजाबी अफ़सर मद्राजी जियोलॉजिस्ट थे, वे क्या जगली असुर देवता की बात मानते? ब्लास्टकर टीला उड़ा दिया।'

'उसके बाद ?'

'कुमा गाँव से आगरियों ने आकर सबको काट डाला। उसके बाद जगल मे घुस गये?'

'घुस गये ?'

'हाँ। वो जो घुस गये, यह समझिए मिस्टर सिंह, वो जो घुस गये, बस! एकदम खो गये। फिर किसी ने उन्हें नही देखा। सौ-डेढ़ सौ आदमी।'

'कह क्या रहे हैं ?'

'यही तो ताज्जुब की बात है।'

'बस, लापता ?'

'लापता। गायब।'

'गौरमेंट ने पता नही लगाया ?'

'ब्राह्मन की विधवा जैसे चावलों मे से कीड़े चुनती हैं, उस तरह जंगल छान डाला।'

'तब भी नही मिले ?'

'न।'

'उसके बाद ?'

'गौरमेंट ने बहुत तलाश किया। कुमा गाँव के अलावा किसी गाँव के लोग गायब नही हुए। इसी से मालूम हुआ कि और कोई अपराधी नही है। एक महीना तलाश चली। उसके बाद कुमा गाँव जलाकर खतम कर दिया, गाँव की जमीन में निमक मिलाकर पुलिस चली गयी। और तब सारे आगरिया गाँवों मे पुलिस ने बडा जुलुम किया।'

'उनका पता नही मिला ?'

'न।'

'कहाँ गये ?'

'जंगल में। जंगल मे कितने टीले, कितनी खोह हैं, कहाँ गये कौन जाने ?'

से जल्दी-जल्दी बोरे चले जा रहे थे। प्रेत नही, आदमी थे। इतने छोटे-छोटे कि बच्चे ही कहा जा सकता था। निश्चय ही बालक-बालिकाएँ थी। इधर रिलीफ लेते थे, उधर आठ-दस बरस के बच्चों से चोरी कराते थे। लोहरी के आगरिया चोरी-राहजनी-लूटखसोट नही जानते। कभी झूठ नही बोलते। उन्होंने तो उनका भला करना चाहा था। युवको ने उन्हें 'देउता' कहा था। सब धोखा था? लगता है कि कोई उन्हें धोखे से सब लूटकर चला गया हो। रिलीफ अफ़सर परेशान हो उठे। वे अच्छे आदमी है, ईमानदार हैं, घूसखोर नही हैं। आदिवासियो के लिए ममता है। इन तमाम कारणो से अपने चुनाव की मर्यादा उन्होंने रखी थी। जान देकर रिलीफ का काम किया। इन लोगो को रिलीफ़ से बरस में एक बार जिन्दा न रहने वालों को पक्के तौर पर ज़िन्दा रखने की बात सोची थी। उसके बदले में यह व्यवहार? छोटों को भेजकर रिलीफ़ चोरी करवाना? वे उनको पकड़ेंगे। चोरी का फैसला करके रहेगे।

ज़िद मे आकर वे दौडते रहे। वे लोग भी भागे। जगल तग होता गया। छितरी घास के जंगल थे। सूखे मैदान। यही वह मैदान है जहाँ सूर्य और ज्वालामुखी ने युद्ध किया था। यहाँ पहुँचकर लड़कों ने माइलो और चावल के बोरे उतारे।

अवश्य ही वे थक गये थे। रिलीफ़ अफसर पास गये, बोरों के पास। बोरों को घेरकर वे खड़े है। खड़े होने का ढग सिकुड़े हुए जानवर की तरह था। उनके ढंग से लग रहा था, चोट करेंगे, मानो उछल पड़ेंगे। एकटक, मौन नज़र उन पर रखी। कृष्णपक्ष की चाँदनी मे सब अस्पष्ट था।

अचानक वे लोग उनके पास बढ़ आय। लड़के नही, औरतें भी है। अचानक कलेजे मे डर समा गया। डर, भयानक डर। बढते-बढते उन्होंने उन्हें घेर लिया। रुक क्यों गये?

वह उन्हें देख रहे थे, वे थोड़ा और आगे आये, फिर रुक गये। रिलीफ अफ़सर ने गरदन घुमाकर देखा। घेरा पूरा था। भागने की राह नही थी। भागेंगे नहीं। भागें क्यो? यह तो इसान है, इसान के बाल-बच्चे। प्रेत नही है, प्रेत चावल और माइलो नही चुराते है। 'यह एक अभिशप्त भूमि है'—किसने कहा था? 'थोड़ी दारु-आरू पिऊँगा'—किसने कहा था?

'सारे लोहरी ?'

'हां।'

'आप बन्दूक क्यों लिये जा रहे हैं ?'

'डर लगता है। इतने लोग हैं ! कहां छिपे हैं, अगर आ जायें ?'

'इसीलिए ?'

'न।'

'तब ?'

'रिलीफ़ जब पहुँचती है, तो चोरी होती है। पहले चार बोरे-पांच बोरे चोरी होते थे। कुछेक बरसों से दो-तीन बोरा चोरी होते हैं। जगह भी बहुत ख़राब है। पता नहीं, धरती में क्या है ? कुछ होता ही नहीं। हमारे भतीजे ने भी एक बार खेती करने की चेष्टा की। कुछ नहीं हुआ। न धान, न जुआर, न मड़ुआ, न भुट्टा। हल चलाने पर नीचे मानो लोहा हो। जैसे एक शाप-लगी जमीन है। देखते ही पता चलता है।'

'अभी भी चोरी होती है ?'

'हां, सभी कहते, छोटे-छोटे लडके-लड़कियां झुटपुटे में आकर चोरी करते हैं। मैंने सोच लिया, रिलीफ का माल तो रिलीफ बांटनेवाले लोग चोरी करते रहते हैं। चोरी करते हैं, किसी को बेच देते हैं। गौरमेंट को कुछ पता नहीं। जाड़ा-गर्मी में रिलीफ़ भेजेंगे कम्बल, कपडा-लत्ता। जाली लोग क्या करेगा धारीवाली कम्बल और अच्छा कपड़ा और चीनी देकर ? सब तो वे भी बेच देंगे, और महाजन-बनिया टार्चबत्ती, दियासलाई, या आईना देकर सब ख़रीद लेंगे। वह जानता है, इसीलिए रिलीफ बांटने वाले आदमी सब बेच देते हैं। इसमें मैं कोई दोष नहीं समझता।'

'लेकिन यह तो ठीक नहीं है।'

'ऐसा बेठीक काम तो होता ही है। देखिये न, उस बांगला देश के युद्ध के टाइम में गौरमेंन्ट ने कलकत्ता से जितनी रिलीफ भेजी, तमाम दुनिया से कपड़े-लत्ते-कम्बल-मसहरी-बर्तन, स्टोव, जूता—सब हमने रांची बाजार में खरीदे न !'

'वह भी है।'

'उसे छोडो ! मैंने सोचा, खुद रिलीफ चोरी करें और गप् उड़ाते हैं

रिलीफ़ अफसर ने अपने चोट खाये, आहत कलेजे को क़ाबू में किया। वे बढ़े।

डर, भयानक डर। भयानक, भयानक भय था। वे बहुत डर रहे थे। चुपचाप क्यों बढ रहे थे? बोल क्यों नही रहे थे? उनके बदन साफ दिखायी दिये। वे यह क्या देख रहे है? न, यह क्यो? सिर पर बाल इतने बड़े-बड़े क्यों है? बच्चे, बच्चे, अगर इनका लड़कपन है तो इनके सर के बाल सफ़ेद क्यों है? औरतों की, लड़कियों की छातियों मे लटके हुए सूखे स्तन क्यों हैं? वे आगे क्यो बढ़ रहे है, जिनके बाल सफेद हैं? पास मत आना। उनका आर्त चीत्कार मौन रहता है, उसे शब्द-रूप मिलता है, 'और मत आओ !' जिनके बाल पके हैं, वे पास आकर उन्हें क्या दिखा रहे हैं? वीभत्स, वीभत्स दृश्य है, अपने पुरुषांग दिखा रहे है, सूखे, सिकुडे लटकते हुए।

शिशु नही, एडल्ट—वयस्क हैं। रिलीफ़ अफ़सर के मुँह से आवाज नही निकल रही है। लेकिन उपलब्धि के आघात से मस्तिष्क हिरोशिमा-नागासाकी बना जा रहा है।

वृद्ध समझे कि वे समझ गये है। वे हँसते रहते हैं। खी-खी-खी वह हँसी अमानवी थी। हँसी बिखर गयी। अफसर को घेरकर सब हँस रहे थे। हँसते-हँसते उन्होने शून्य मे छलांग लगायी, कोई-कोई सिकुड कर बैठा था। अफ़सर क्या करें?

'हम लडके नही हैं। हम कुमा गाँव के आगरिया है। कु—मा। मालूम है?'

'न! न! न!' अफ़सर आँखें बन्द करना चाहते है। हाथ नही उठ रहा है। तेज़ चोट से दिमाग फट गया है। दिमाग हाथ को उठने का आदेश नही देता है। 'पाकिट मे महावीरजी का परसाद'—किसने कहा था?

'हम अपने पूजा के टीले का मान रखने के लिए तुम्हें काटकर वनवासी हो गये। कोई हमें पकड नही सकता। तमाम पुलिस, सिपाही, कोई नही पकड़ सकता।'

वृद्ध हँसा। सब हँसने लगे। 'खी-खी-खी !'—प्रेतों की हँसी बिखर गयी।

'न! न! न!'

कि बच्चा लोग चोरी करता। सो मैं उस बार खुद गया। साथ में बीस हजार रुपयों का माल था, सिपाही भी माँग लिया। कैम्प होगा लोहरी में। सब आयेंगे, लेंगे, किंतु रात भी खूब काली थी माथा के बालों-सी। गरम भी खूब था। मैं बाहर लेटा था। अचानक कैसी आवाज ! उठकर देखता हूँ कि बोरा लिये छोटे-छोटे आदमी, बच्चे ही होंगे, भाग रहे हैं।'

'आपने क्या किया ?'

'आसमान में बन्दूक छोड़ी। क्या करता ! बच्चों को मारता ? किन्तु सब लोग भाग गये। नंगे थे, बच्चे ! गोली मारता ?'

'वह तो है।'

'और सोचा, रिलीफ का माल तो तमाम चोरी होता है, तमाम लोग मुनाफा करते हैं, बच्चों ही ने ले लिया।'

'ठीक बात।'

'लेकिन...।'

'क्या ?'

बी० डी० ओ० भौंह सिकोड़कर कुछ देर अँधेरे की ओर देखते रहे। अँधेरा बहुत गरम और पिघला देने वाला था। संसार के सब कोने-कतरों को मानो अँधेरे ने भर दिया हो। जमीन से उठती धूल और भाप से हवा धुँधली थी। इसी से आकाश के तारे वैसे चमकते न थे। चाँद बड़ी रात को उठेगा।

बी० डी० ओ० बोले, 'किसी से बताया नहीं। किंतु आप भले आदमी हैं। राज के मंत्री आपके मौसा लगते हैं, आपको आज जो बात बताऊँगा वह अब तक किसी को नहीं बतायी। किन्तु आपको बताऊँगा, उस विपद की आसानी भी दे दूँगा।'

'क्या बात ?'

'पता है मिस्टर सिंह, वह जगह बदनाम है ? असुर-बोंगा-भूत है, सब कहते हैं। मैंने देखा था, जो बच्चे बोरे लेकर भाग रहे थे, वे आदमी के बच्चों-से नहीं थे।'

'क्या कहा ?'

'हाथ-पाँव सब दूसरी तरह के-से थे।'

'आगरिया जिन्दा रह गये। भाग-भागकर रहते, बिना खाये सब मर गये!'

'न! न!'

घेरा छोटा हुआ। वे लोग और समीप आये।

'पास मत आओ।'

'क्यों न आयें? इतना चावल, इतना माइलो, दो बोरों के पीछे तू क्यों आया? जब आया है तो अच्छी तरह देख। हे, तुम दिखा दो!'

मर्द पुरुषांग दिखाने लगे, औरतें स्तन।

बुड्ढा अब बहुत पास आ गया। अफसर के शरीर में पुरुषांग छू रहा था। साँप की सूखी केंचुल-सा। सूखा और गंदा।

'मरते-मरते हम यह चौदह जने बचे हैं। खाने को मिलता नहीं, इसी से शरीर सूखकर छोटा हो गया है। मर्द बस मूतते है, रात का काम नहीं कर पाते। औरतों के पेट में बच्चा नहीं आता। इसी से हम रिलीफ़ चुराते हैं। खा-खाकर फिर से बड़ा होना होगा कि नहीं, बता?'

'न! न! न!'

'आगरिया हमें मदद देते है। कुमा के बलोया से हमारा यही हाल है। कुमा का बलोया।'

'न! न! यह नहीं हो सकता।'

अगर यह सच है तो सब झूठ है। कोपर्निकस की संसार की रचना, विज्ञान, यह शताब्दी, यह स्वाधीनता, यह प्लानों के बाद प्लान—योजनाओं पर योजना। इसीसे रिलीफ अफ़सर कहते रहे, 'न! न!'

''न' कह देने से 'न' हो जायेगा? तब यह कैसे हुआ? यह गड़बड़ देखकर नहीं समझता, हम लड़के-बच्चे नहीं हैं?'

वे पैशाचिक आनंद से, प्रतिहिंसा के उल्लास से खी-खीकर हँस रहे हैं। उसके बाद वे उन्हें घेरकर दौड़ने लगे, हँसते-हँसते बीच-बीच में उनके शरीर पर रगड़कर पुरुषांग दिखाते, समझा देते कि वे पूर्ण वयस्क भारतीय मर्द हैं।

आकाश में चाँद है। कैसा विवश चाँद का चेहरा है! कैसा निर्वीर्य उसका प्रकाश है! सूर्य और ज्वालामुखी के युद्ध की आग में जले मैदान में

'कैसे ?'

'वह बता न सकूँगा। कैसे लम्बे बाल, और कैसे हँसते हुए चले गये।'

'मुझे डर लग रहा है।'

'आपको कोई डर नहीं है। यह बात बताना थी, इसलिए आज लौट कर टाहाड़ नहीं गया। रुक गया। आपके मौसा राज्यमन्त्री हैं, आपकी जान की ज़िम्मेदारी मुझ पर है। मैं यह महावीरजी का प्रसाद लाया हूँ। पाकिट में रख लीजिये। यह जिसके पास रहेगा उसे कोई डर नहीं।'

'बन्दूक नहीं है ?'

'उससे क्या ? साथ में आदमी रहेगा।'

'बन्दूक-सिपाही या पुलिस...!'

'अब तो माँगने का कोई उपाय नहीं है। ठीक है। आप तो कल जा रहे हैं। इसके बाद जो जायेंगे, उनके साथ पुलिस भेजने की कोशिश करूँगा।'

'चलिये, खा लें।

'पहले नहा लीजिये।'

कुएँ के ठंडे जल में स्नान हुआ। मौसा राज्यमन्त्री हैं। उसका परिणाम हुआ कि मेज़ पर बढ़िया चावल का भात था। भात में मटर डाली गयी थी। मांस, गुलाबजामुन और अचार था।

रात में बाहर खाट पड़ी। ज़मीन पर पानी छिड़का गया था। उससे मामूली-सी ठंडक आयी।

लेकिन नींद कहाँ ? सूर्य और एक बालक का युद्ध था। एक टीला था। अन्धकार में बलोया चमकने लगता। कई मृत शरीर थे। विधवा, ब्राह्मण की विधवा जिस तरह चावल में से कीड़े चुनती है उसी तरह पुलिस जंगल छानती है। रिलीफ़। अंधकार में अलौकिक बच्चे चावल चोरी कर रहे हैं। एक के बाद एक तसवीर बदलती जा रही है। चेहरे पर गर्मी लगी तो रिलीफ़ अफ़सर ने समझा कि बहुत सोये। तान कर सोये। अब चेहरे पर सूरज की गर्मी लग रही है।

सवेरे रिलीफ़ अफ़सर रवाना हुए। बी० डी० ओ० टाहाड़ लौट गये। रिलीफ़ का सामान ट्रक में चला। साथ में तंबू था।

कई बालक-बालिकाओं के-से पूर्ण वयस्कों का भयानक उल्लास है। शत्रु का सिर बलोया के फल से उतारने का उल्लास, प्रतिहिंसा, प्रतिशोध है।

किसके विरुद्ध ?

उनके नाचते शरीरों पर लंबी पड़ती हुई उनकी छायाएँ है। छायाएँ बता रही हैं वे किसके विरुद्ध हैं।

उनकी पाँच फुट नौ इंच की ऊँचाई के विरुद्ध।

रिलीफ़ अफ़सर के दिमाग मे तरकीबों की बातों के मोटर रेस करते चल रहे हैं। कहना चाह रहे हैं, यह बदला किसलिए ? मैं एक सामान्य भारतीय हूँ। रूसी-कनाडियन-अमरीकनो की तरह हमारे शरीर की वृद्धि नही है, लबाई-चौडाई नही है। हम जीवन मे वह खाना नही खाते जिसकी कैलोरियाँ मानव-शरीर की वृद्धि के लिए आवश्यक है। वर्ल्ड हेल्थ आर्गेनाइजेशन की राय में जिस खाने को न खाना अपराध है।

कुछ बोल नही पाते। चाँद के नीचे खडे उनके देखते-देखते, उनकी हँसी सुनते-सुनते, उनके पुरुषांगो की रगड़ को सहते-सहते भारत के सामान्य मनुष्य की अपुष्ट देह और हास्योत्पादक दीर्घता से लगता कि यह सभ्यता का जघन्यतम अपराध हो, अपने को प्राणदंड का असामी महसूस करते हुए और उनकी बौनी आकृति के कारण रिलीफ़ अफ़सर ने खुद ही अपने को प्राणदंड दे दिया और चाँद की ओर गला उठाकर मुँह फाड दिया। वे नाच रहे थे, हँस रहे थे, उनके शरीर से रुखड़े और सूखे पुरुषाग को रगड रहे थे, पागल कुत्तों के-से मैदान फाड़ने वाले आर्तनाद करते हुए। पागल हुए बिना उनकी मुक्ति नही है। लेकिन मस्तिष्क गले को आर्तनाद में फट पड़ने का आदेश क्यों नही दे रहा है ? उनकी आँखों से आँसू बहने लगे।

कुछ दूर बाद ही रास्ता कच्चा था। गर्मियाँ थी, इसलिए उस रास्ते जाया जाता था। बरसात मे राह अगम्य थी। मिशन-हाउस मे मिशनरियों ने रिलीफ-सेंटर खोला था। झुड-के-झुड आदमी थे—काले सूखे और चुप-चाप।

जीप के ड्राइवर ने थूकते हुए कहा, 'सारे जानवर हैं! अकाल होने पर बाल-बच्चो को मिशन के दरवाजे पर छोड कर चले जाते हैं। कहते हैं, वे लोग फेंक नही देंगे। कुछ-न-कुछ देकर जान बचायेंगे। हमारे साथ रहने पर मर जायेंगे।'

'ये लोग इंसान नही है।'

'मिशन के साहब लोग इन्हे क्रिस्तान बनाते हैं—धरम नाश कर दिया। पर यह भी खचड़ा ही है। क्रिस्तान भी बनते हैं, अपने देवी-देवता भी पूजते हैं।'

'मिशनरी लोग नही जानते ?'

'जानते है। फिर भी उनको दवाई देते हैं, देखभाल करते हैं। वह गोरी-गोरी मेमे जानवरो के बच्चो को गोद मे बैठायेंगी। मुँह से मुँह लगाकर प्यार करेंगी।'

'राम! राम!'

'वह गाना सुनिये न। कोई अच्छा आदमी ऐसन टाइम मे ऐसा गाना गायेगा?'

गाने के नाम पर लम्बा-सा प्रेत-विलाप इस समय सारे टीलों और जंगलों से गुजरती हुई जीप को ढकेल रहा था।

'क्यो गा रहे है ?'

'ये ऐसे ही हैं। जो चल सकेंगे, वे फिर रिलीफ़ लेने आयेंगे। जो चल न सकेंगे, जो बहुत बुड्ढे है, वे जमा होकर उसी तरह गाना गायेंगे। गायेंगे, गायेंगे, गाते-गाते मर जायेंगे। एक गाँव मे गाना होगा तो दूसरे गाँव मे मरने के वक़्त बूढियाँ, जवानों को रिलीफ लाने भेज देंगी। वे खुद गाना गायेंगी।'

रिलीफ अफसर का दिल बैठता जा रहा है। राँची मे रोशनी की चमक—टैक्सी-मोटर, वहाँ जिन्दगी चल रही है। वे किस देश में जा रहे है ? जहाँ

नमक

'हाथ से नही, रोटी से नही, निमक से मारेगा'—उत्तमचन्द बनिये ने कहा था। वह बनिया है, महाजन है और कई पीढियों से उसके वंश ने ही झुझार बेल्ट को अधिकार मे रखा है। स्थानीय उराँव और कोल किसी दिन उसकी बात पर 'न' कहेंगे, यह उसने नही सोचा था।

वही अशोचनीय घटना हो गयी। इस सरकार के राज में। इसके पहले सरकारें आयीं, सरकारें गयी, ऐसा कभी नहीं हुआ।

पलामू अभय वन के पास आदिवासी गाँव झुझार है। गाँव के निवासी जंगल मे गाय-बकरी-भैंस चराते, गिरे हुए काठ से ईंधन जमा कर सकते थे। घर छाने के लिए पत्ते भी ले सकते थे, इसके सिवा वे बाँस के अंकुर, कन्द और इमली के पत्ते भी चुराते थे। जंगल-विभाग आँखें मूँदे रहता। साही, ख़रगोश और चिड़ियों को भी मारते। इन सारे जगली प्राणियों और पक्षियों की मर्दुमशुमारी सही-सही और बिलकुल ठीक न थी। इसी से वन-विभाग इस मामले मे भी आँखें बन्द किये रहता। पर शिकार करने से इनको मास कम ही मिलता था, क्योकि जगल के प्राणी भी होशियार हो गये थे। वे आसानी से फँसते नही थे।

अभय वन के पास गाँव था। कोइल नदी से लगती हुई साधारण-सी नदी थी। लेकिन जमीन उत्तमचन्द की थी। 1831 ई० के कोल-विद्रोह के बाद इस अचल मे हिन्दू बनिये नये सिरे से आये। उत्तमचन्द के पुरखे उनमे से ही थे। जगल मे आबादी वाली आदिवासियो की ज़मीनो को

अतिप्राकृत शिशु बन्दूक की आवाज के जवाब में प्रेत-हँसी हँस रिलीफ़ लेकर भाग जाते हैं ! जिस देश में जाने पर केवल मटमैले पहाड़ और जंगल ही दिखायी पड़ते हैं। लेकिन उनमें बैठकर बुढ़िया औरतें मौत पास देखकर जीने का प्रयत्न नहीं करतीं। प्रेतों के विलाप में गीत गाती हैं।

'बहुत-सी मर जाती हैं ?'

'तमाम। देखिये न, कितने चील-गिद्ध उड़ रहे हैं ! जिन्दा रहने पर भी गिद्ध बहुतों को खा जाते हैं। यह ताज्जुब देखो।'

'लोहरी कितनी दूर है ?'

'अब घुस रहे हैं। देखिये न, गाछ-माटी-पहाड़ सब कैसे हैं ! मानो ताँबे के बने हों, कैसे लाल-लाल हैं ! यही है लोहरी। यहाँ की माटी विष है।'

दूर पर कई पहाड़ दिखायी पड़े। ड्राइवर बोला, 'वहाँ आपका कैम्प पड़ेगा।'

कुछ देर बाद ड्राइवर फिर बोला, 'एक बात है हुजूर, बुरा मत मानियेगा। लोहरी में क्या है पता नहीं, किन्तु मन में बड़ा डर भर जाता है। रात में हम थोड़ी दारू-आरू पियेंगे। कैम्प के पास ही। नहीं तो डर लगेगा। बहादुर तो पागल हो गया।'

'कौन बहादुर ?'

'ड्राइवर ? क्यों ? उसकी बात अफ़सर साहब ने नहीं बतायी ?'

'नहीं।

'यह ठीक नहीं किया।'

'बहादुर को क्या हुआ था ?'

'वह अभी तक किसी को नहीं मालूम। उसके साथ जो लोग थे, वे कहते हैं। उस रात को सब सो रहे थे। बहादुर अचानक 'चोर ! चोर !' कहकर जिनका पीछा करने भागा, वे अँधेरे में खो गये। जो उसे खोजने गये वे अँधेरे में किसी की हँसी सुन कर डरके मारे चले आते। दूसरे दिन सवेरे देखा कि बहादुर बेहोश पड़ा है। होश हुआ, लेकिन चेतन नहीं हुआ।'

'उसके बाद ?'

'बौरा गया। अभी तक बौराया है। राँची में है। लीजिये, लोहरी पहुँच गये।'

उन्होंने खुले हाथों मोल लिया था। जमीन ख़रीदकर आदिवासियों को उखाड़ फेंकना उन दिनों बहुत सहज था, आजकल की ही तरह। उन दिनो के आदिवासी भी हिसाव-दस्तावेज-पट्टा-कानून—सब से डरते थे। आज-कल के ही आदिवासियों की तरह। उसके परिणामस्वरूप अब झुझार के आदिवासी जानते भी नही कि कभी उनकी अपनी जमीन थी। कभी वे मेहनत की फ़सल को अपने घरों में रखते थे।

इसी उत्तमचन्द के पास बेगारी की डंडाबेडी में सारा गाँव बँधा था। कई पीढियों से। पुरखों का अलिखित ऋण चुकाने ये लोग हर बरस फ़सल के समय बारह मील पैदल चलकर उत्तमचन्द के गाँव टाहाड़ जाते, खुराकी और मामूली-सी फ़सल के बदले में बेगारी दे आते। जो फ़सल मिलती वह भी कर्ज के खाते में जुड़ जाती। बेगारी ग़ैरकानूनी है—इस बात को भी वे नही जानते थे। इसका पता चला था आदिवासी दफ्तर के इंस्पेक्टर के सौजन्य से। जानकर भी उन्होंने बेगारी बन्द नहीं की, क्योंकि बेगारी लेने वाले उत्तमचन्द के विरुद्ध अदालत में नालिश करना उनसे हो नही सकता था, इसे वे जानते थे। इसके लिए क्या डाल्टनगंज जाना संभव था? वकील कहाँ है? उनको समझ कर सलाह देने वाले कहाँ थे? आदिवासी-कल्याण दफ्तर भी उनकी पहुँच के वाहर था। दफ्तर शहर में था। वे गाँव में थे। रेल या बस-मार्ग पर पड़ने वाला गाँव नही था। केवल सत्रह परिवारों के छिहत्तर लोगो के आदमियों का गाँव था। स्वतन्त्रता के बाद तीसरे चुनाव तक तो उसके अस्तित्व का ही सरकार को पता न था। वे चौथे चुनाव से वोट दे रहे थे। चुनाव का समय अच्छा रहता। उत्तमचन्द कहता, 'जंगल के लिए वह वोट दे आयेगा। जाओ, एक-एक रुपया कर ले जाओ, सब बाप-माँ लोगो। मैं ही वोट दे दूँगा।'

चौथे चुनाव से यही व्यवस्था चल रही थी। इस सतहत्तर में सब उलट गया। झुझार गाँव मे निकटतम प्राइमरी स्कूल का एक मास्टर वालकिशन सिंह आता रहा। उसी ने उन्हे समझा-बुझा कर गाँव से तीन लड़को को स्कूल मे ले लिया। उसी ने समझाया कि छठा चुनाव बहुत महत्वपूर्ण है। वे खुद वोट दे आयें। हर एक का रुपया? उससे कही ज्यादा रुपयों का काम वालकिशन की मेहनत से हुआ। झुझार गाँव में पचायती कुआं वना। अच्छा-

कैंप लगाने की जगह साफ की हुई थी। एक छोटी झोंपड़ी से तहसील-दार निकल आये। बोले, 'चाय-चाय पी लीजिये हुजूर, पानी मौजूद है, नहा भी सकते है। पानी आधे मील से लाना पड़ता है।'

ड्राइवर बोला, 'वही कुंडी ?'

'यही।'

रिलीफ़ ऑफ़िसर की सवालिया निगाह के जवाब में तहसीलदार बोला, 'कुमा ग्राम के बलोमा के बाद टीला ब्लास्ट किया गया। उस ब्लास्ट में टीला उड़ गया, एक गहरा गड्ढा बन गया। उसमें पानी जमा होता है बरसात में, और साल-भर पानी रहता है। उसी का पानी है।'

चाय पीने के बाद तहसीलदार ने तंबू तनवा दिया। रिलीफ़ के समान के बोरे गिन कर सजा दिये। बोला, 'कुछ मत सोचिये। हर बरस मैं यही काम करता हूँ। गाँववार नाम की सूची भी मौजूद है। दस से चार तक रिलीफ़ बाँटियेगा। उसके बाद खेल खतम।'

'कितने लोग आयेंगे ?'

'हजार, दो हजार, कुछ ठीक नहीं है।

'मेडिकल यूनिट आ रही है।'

'यहाँ ?'

'हाँ। तम्बू चाहिए। तम्बू लगवाइये।'

'अच्छा हुजूर ! मेडिकल यूनिट तो कभी आयी नहीं !'

'इसके पहले तो कभी जनता सरकार भी नहीं आयी। और रिलीफ देने स्पेशल अफ़सर नहीं आया।'

तहसीलदार ने मन-ही-मन कहा 'सुअर का बच्चा' और मुँह से बोला, 'जो कहियेगा, वही होगा।'

'सरडोहा मिशन से जो लोग आये हैं, वे भी काम करेंगे।'

'वह लोग भी ?'

'हाँ, उनकी नर्सें है। डॉक्टर हैं।'

'बहुत अच्छा।'

'कैम्प में पानी लाने के लिए, कैम्प में सफाई रखने के लिए, खिचड़ी जिसमें चढ़ायी जायेगी उसका हंडा साफ करने के लिए आदमी चाहिए।

सा कुआँ था, बहुत पानी था। अब तक नदी से पानी लेना पड़ता था, और गर्मियों में पानी लाने में जान निकल जाती थी।

उत्तमचन्द पहले वोट के मामले में बिगड़ा।

चुनाव के बाद नया मंत्रिमंडल बना। पुराने दफ्तर और पुराने अफसरों को नयी भूमिका में आना पड़ा। झुझार गाँव तक पैदल रास्ता छोड़कर कोई रास्ता ही न था। उसी राह से संगठित युवकों का दल आया, और झुझार का कौन-सा परिवार क्या ऋण चुकाने के लिए बेगार देता है, उसने यह लिख लिया। पूर्ति मुंडा गाँव का सबसे अधिक बोलने वाला व्यक्ति और व्यक्तित्व था। गाँव-भर में वही एक आदमी था जिसने राँची और डाल्टनगंज देखा था और धनबाद में कुलीगीरी कर आया था। सब जगह उसकी आर्थिक अवस्था एक-सी ही रही, इसलिए वह बाहरी दुनिया पर थूक कर झुझार लौट आया।

वह बोला, 'हमसे पूछने से क्या फायदा? उत्तमचन्द के खाते में सब लिखा है। तुम लोग उससे पूछो।'

'बेगार गैरकानूनी है, यह मालूम है?'

'हमारे मालूम होने से क्या फायदा? बेगार न करने से महाजन उधार न देगा।'

'अबकी महाजन को पता चलेगा।'

'तुम लोग देखो।'

'तुम हमारे साथ चलो।'

'चलो।'

पूर्ति मुंडा के सामने उत्तमचन्द से लड़कों ने कहा, 'इस साल से इस अंचल में कोई आदिवासी बेगारी न देगा। अगर किसी को दबाया गया तो उसे कानून के मारफत कैसे छुटकारा मिले, वह हम देखेंगे।'

'वही होगा।'

उत्तमचन्द बोला, और काम में भी यह अनुशासन मानने पर लाचार हुआ। उसकी जमीन जोतने से भी झुझारवासियों को रोका नहीं गया। युवकों का दल कह गया, 'बारह बरस से ज्यादा समय से यह जमीन जोत रहे हैं। आधे हिस्से का इनका हक है।'



गाँव के दस लड़के चुन लीजिये। नाम लिख लीजिये। वे सब काम करेंगे, खाना मिलेगा, रोजाना एक रुपया मजूरी भी मिलेगी।'

'वे तो बस खाना मिलने से ही सब काम करते है।'

'आप बात करने आये है, या सुनने ? कैम्प मैं चलाऊँगा। आप रोज आयेंगे।'

'कितने दिनों तक कैम्प खुला रहेगा ?'

'अभी एक महीना। मैं यह कैम्प देखूंगा। बीस-बीस मील के अन्तर पर कैम्प पड़ रहे है। एक बात और है। स्टोर जहाँ रहेगा, मैं उसी तम्बू में रहूँगा। मेरी जिम्मेदारी है न !'

'यह बहुत ठीक बात है। मैं तो सौ रुपया देने पर भी स्टोर के तम्बू में न रहता।'

'क्यों ?'

'चोरी होती है। और जो चोरी करते हैं वे आदमी नही है।'

'वह सब बातें छोड़िये। कॉलिज के लड़के भी वालटियर बनकर आ रहे है। कह दीजिये, गाँव-गाँव में बूढ़े-बुढ़ियों को गान उठाने की दरकार नही है। गाँव में भी रिलीफ़ जायेगी। लड़के ले जायेंगे।'

तहसीलदार को ताज्जुब हो रहा था। वह हर साल रिलीफ़ में से चोरी करता और काम चलाता था। वह बहुत वदकार था, लेकिन बड़े काम का था। गाँव के दस आगरिया युवकों को अपने कैम्प की देखभाल और सफाई के काम में लगाया। चौकीदार ने दो को लेकर पेड़ के नीचे रिलीफ का माल लगा दिया। आज सूखा माल बाँटा गया। कल से खिचड़ी और बच्चों के लिए दूध बाँटा जायेगा।

रिलीफ अफ़सर से बोला, 'स्टोर के तम्बू में ये लड़के पहरा देंगे। हममें से तो कोई तो नही रहेगा, आप अकेले रहेंगे।'

रिलीफ़ अफ़सर आश्वस्त हुए। बहुत जल्दी-जल्दी बड़े ढंग से कैम्प चालू हो गया। दूसरे दिन से पकी खिचड़ी दी गयी। मेडिकल यूनिट ने कॉलरा और टाइफ़ाइड के इंजेक्शन दिये। उस जगह चहल-पहल हो गयी।

दूर-दूर से अन्न आदमी आते रहते। रात को भी दूर-दिगन्त पर चलती

'आधा भाग मेरा है।' in the year 4.01.1983

'फसल खड़ी होने पर आपके सामने हमारी समिति फसल का भाग कर देगी।'

'वही होगा।'

पूर्ति मुडा लड़कों से कह बैठा, 'दो रुपये दो। ताड़ी पीकर घर जाऊँ। यह कैसा दिन रहा? किसका मुंह देखकर उठा था?'

युवक बोले, 'नही। नशा करना छोडो। इस नशे से हम आदिवासियों का सर्वनाश हो गया है।'

पूर्ति मुडा ने लौटने के वक्त टैट म से आठ आने की ताड़ी पी और हँडिया मे हाथ डालकर बोला, 'सर्वनाश! बाबू लोग क्या समझें? इससे हम पेट की आग भूले रहते हैं!'

उत्तमचन्द हार मानकर भी कमर कस कर तैयार हो गया। बोला, 'उनको नोन से मारूँगा।'

उसकी ऐसी उद्धत घोषणा उसको ठीक ही थी, क्योंकि झुझार के लोग बाजार करने पलानी या मुरू आते। दोनों हाटों में परचून सौदे की दूकानें उत्तमचन्द की ही थी।

उत्तमचन्द बोला, 'नोन बिना घाटो-खाने में कैसा लगता है, देखो? इतने दिनों तक हमारा खा-पहिन कर ऐसी निमकहरामी!'

हाट मे नमक न मिलने की बात को पहले तो पूर्ति ने महत्व नही दिया। जब दिया, तब वे डाल्टनगंज भागे। युवकदल के ऑफिस मे। ऑफ़िस में बैठा एक युवक ट्रांजिस्टर सुन रहा था। उसने सब-कुछ सुनकर कहा, 'यह हमारे अख्तियार में नही आता। जिसकी दूकान है वह न बेचे तो बताओ, हम क्या कर सकते है?' अब चारों ओर भागना पड़ा। और भी बहुत बड़ी समस्या लेकर।

पूर्ति और बाबू लोगों के स्वभाव में कोई सवाद न था, हो भी नहीं सकता। पूर्ति किसी तरह समझा न सका कि नोन के बिना उनका जीवन बेकार है। नोन का सहारा लेकर ही वे घाटो खाते हैं।

जोश मे उन्होंने बस का किराया बचाकर दस किलो नमक ख़रीदा। फिर अठारह मील पैदल चलकर गांव लौटे। गांव में घर-घर नमक बाँट कर

हुई रोशनी दिखायी पड़ती। मशाल जलाकर लोग आते रहते और दिन में भीषण गर्मी की तपन रहती, इसलिए रात में राह चलने में सुविधा होती। कुछ दिनों में तहसीलदार भी बोला, 'न हुजूर, रिलीफ का काम कर आपने जानवरों के दिल में भी एक विश्वास ला दिया। पहले बुड्ढे समझते थे कि मर जायेंगे, गान उठाते थे। अब गाना भी बन्द। एक काम नहीं हो सकता है?'

'क्या?'

'गाँव में रिलीफ़ मत दीजिये। इस बार तो उन्हें ठीक से रिलीफ मिल रही है। वे ही बुड्ढा-बुड्ढी को उठाकर क्यों नहीं लाते?'

'न-न। लोग भूख से ममताहीन हो जाते हैं। जिनको नहीं लायेंगे वे तो मर जायेंगे। उठाकर लायेंगे कैसे? आते-आते सड़क पर गिरकर मर जायेंगे। ताक़त भी नहीं है।'

रिलीफ़ अफ़सर इस ऋण देने के काम में बुरी तरह लग गये। उस जगह की जली धरती की तरह का स्वरूप नाटे और धूल से भरे और बिना पत्तों के पेड़ों के घने जंगल थे, लाल और भयानक पहाड़ों में भयावहता भी खो जाती थी। निरन्न, भूखे आदमियों को टॉप प्रायर्टी मिलती। डॉक्टर लड़के टीका देकर चले जाते। मिशन के डॉक्टरों और नर्सों के मन में भी वे विश्वास उत्पन्न करते और यद्यपि कॉलरा और टाइफाइड के इंजेक्शन देने का नियम था, वे प्रोटोकोल की परवाह न कर काफ़ी ऐंटीबायेटिक, चोट की दवाइयाँ, बेबीफूड, न्यूट्रीनगेट आदि राँची से ले आते।

गाँव के बहुतेरे आगरिया उन्हें घेरे रहते। वे उन्हें टीले की ब्लास्ट की हुई कुंडी पर नहीं ले जाते। वह उनके लिए टैबू थी। लोहरी नदी की छाती में छिपी हुई कुंडी उनके पानी का स्रोत थी, वहाँ उन्हें ले जाते। स्नान करते-करते वे उनसे सूर्य और ज्वालामुखी की लड़ाई की कहानी सुनते। एक आगरिया लड़का ज्वालामुखी उनका हीरो था। उसके कारण ही आगरिया गरीब थे। और उसके अभिशाप से ही पूर्ण चन्द्रमा की रात के सिवा सूर्य अपनी पत्नी से मिलने नहीं आ सकते थे। लोहासुर, अगियासुर और कोयलासुर—इन तीन असुरों का आशीर्वाद नहीं मिला, इसीलिए आज आगरिया लोगों को कष्ट मिल रहा है। स्नान कर जब लौटे तो रात हो

कहा, 'बचा-बचा कर खाना।'

किन्तु दस किलो नमक अजर-अमर तो होता नहीं। अब की पूर्ति ने वन-विभाग के ठेकेदार को पकड़ा। 'हमें काम दो। पैसा मत देना, नोन देना।'

'नोन दूँगा ?'

अब भी इतना दाम बढ़ने पर भी चूँकि नमक ही आज भी भारत में सबसे सभी सस्ती चीज है, इसलिए नमक की मजूरी पर काम करने के प्रस्ताव पर ठेकेदार को चक्कर आ गया। तभी उसे लगा कि इन लोगों के बारे में जानना जरूरी है। उत्तमचन्द की जमीन जोतते है, इसलिए ठेकेदार उत्तमचन्द के पास ही गया। जाकर जो सुना उससे लगा कि ये लोग बिलकुल खचड़े हैं। शहर के झगड़ालू लड़कों के साथ होकर सदा के जाने हुए बनियें से झगड़े का फैसला कर बैठे हैं। इन्हे काम देने से ठेकेदार जरूर फँस जायेगा। इसलिए ठेकेदार ने पूर्ति आदि को भगा दिया और काले-काले आदमी सिर झुकाये सफेद बालू पार कर चले गये।

इसके बाद इन्होंने फ़सल के वक्त फसल से नमक खरीदने की कोशिश की। नतीजा हुआ कि फ़सल बीत गयी, नमक मामूली-सा ही मिला। अब पूर्ति को सभी ने दोषी बताया और कहा, 'महाजन के पास उनके कहने से तुम गये। अब हमें नमक दिलाने की व्यवस्था करो। उस समय तो अपने को मरद मान कर बहुत भरोसा दिलाने गये थे! लीडर बनने चले थे!'

'बिना गये बेगारी बन्द होती ?'

'नहो होती तो देते।'

'फसल में हक होता ?'

'नहीं होता तो उपवास करते।'

झुझार गाँव वालों को अब बेगार देने के फसल न मिलने के दिन बहुत सुख के दिन लगते थे। उन्होंने मन-ही-मन डंडी और पल्ले का हिसाब लगाया। काला-काला-सा ढेला नमक ही वजन में भारी पड़ा। उनके लिए बेगार के बन्द होने और फसल में हिस्से का अधिकार हलका पड़ गया।

गाँव के बूढ़े बोले, 'नहीं, अलोना घाटो खाया। लेकिन कलेजे में हँफनी क्यों होती है? हाथ-पाँव हिलना नहीं चाहते।'

सबको ही लगता कि इसका कारण नमक है, असल में देवी-देवता

रूठे हैं। गाँव के बुड्ढे साँस छोड़कर कहते, 'सबका ही हो रहा है। अबकी हरम् देव के थान पर पूजा देनी होगी। मेरी घर पत्नी दो मुर्गियां हैं, फारेस गाड के पास बेचकर नोन ले आ, पूर्ति ? किसी दिन हमें नोन का तो स्वाद मिले।'

फ़ारेस्ट गार्ड ऐसे आश्चर्यजनक प्रस्ताव से बहुत खुश हुआ। बोला, 'स्टोर से नोन ला दूंगा, ठहरो।'

'दो मुर्गी सस्ती भी खरीदने से आठ रुपये से कम मे नही मिलेंगी।'

'वह तो है।'

'आठ रुपये का कितना नोन होता है ?'

'सोलह किलो।'

'वही लाओ।

बहुत ही काला समुद्री नमक था।

'इतना काला ?'

'हाथी खाते है, हिरन खाते है, वे सफेद को काला समझते है ?'

'नोन खाते है ? नोन ?'

'हाँ रे बेटा ! उनके लिए नोनी माटी देनी होती है।'

'नही तो क्या हो ?'

'सूख जायेंगे।'

'कहाँ देते हो ?'

'जगह है।'

पूर्ति सोचते-सोचते नमक लेकर गाँव लौटा। हाथी और हिरन साल्ट-लिक से नमक खाते हैं। इस खबर से वह बहुत परेशान होने से समझ नही पा रहा था, पीठ पर के बोरे के नमक का वजन किसी तरह भी सोलह किलो नही है। पूजा के दिन खसी काट कर खूब खाना-पीना हुआ। बाद में पूर्ति आकर नदी के किनारे बैठ गया। अकेले मे वह शराब पीते-पीते जगल की ओर ताकता है। बड़े सवेरे और शाम को हाथी खाते-फिरते नदी की बालू पर घूमते हैं। दिन मे वे नही दिखायी देते। नोनमाटी वे कब खाते है और, कब ? जंगल बहुत बड़ा है। पूर्ति जगल को चीर-चीर कर देखेगा, नमक कहाँ मिलेगा ?

हाथी क्या खरगोश होता है ?'

'हाथी चींटी होता है—हाथी तितली होता है—हाथी हवा होता है। इतना बड़ा शरीर, जब चाहे तब अलखा बन आकर सिर-पैर रख सकता है, तुझे पता न चलेगा। अरे बुद्धू! अरे गू के कीड़े! तूने उसे देखा नहीं, उसने तुमको देख लिया है। नही तो आया क्यों ?

'जो हो गया हो गया, अब इलाज बताओ।'

'पूर्ति, तुझे कौन सी सजा देने से मन भरेगा, पता नही। गैर-आदिवासी कोयले के काम में, कुली के काम मे जो शहर जाता है, वह वही रह जाता है। तू नही रहा। लात खाकर चला आया। सोचा, बड़ा ज्ञानी बनकर आ गया है। उससे उत्तमचद से विवाद किया। वह बाघ है। उसके बाद हाथी बुलाकर गाँव में घुसा दिया।'

'इलाज बताओ।'

'कोई नोन लेने न जायेगा। अपने-अपने छप्पर मे बैठो। हाथी दिखायी पड़े तो भागो।'

पूर्ति बोला, 'काँटेदार झाड़ी काटकर बाड़ा बना लें? जगल में लगाते हैं। उससे हाथी डरता है।'

'हा-हा, पथरीला धरती का गाँव है! कहाँ बेड़ा लगायेगा? किधर से अटकायेगा ?'

'तब ?'

'नोन लेने मत जा। उससे शायद वह भूल जाये।'

पूर्ति ने गाँव के बुजुर्ग की बातें सुनी। फिर वे नमक लेने न गये। एक दिन पूर्ति ने जगल के बीट अफसर से कहा, 'अकेला उस दिन गाँव गया था। हम बहुत डर गये।'

'हमें भी डर लगा था। अब साला कही दिखायी नही पड़ता। लगता है, चला गया।'

सबको ही लगा कि वह चला गया। मानो हरे जंगल मे वह धूसर प्राणी गायब हो गया। जलाशय के पास जानवर के पैरों के छाप देखे गये, जीव-जन्तुओं की संगणना बनी। जलाशय या कमलताल देखकर या बिना देखे ही वन-विभाग ने कह दिया कि 'अकेला' ग़ायब हो गया।

हाट की दूकान उनको नमक नही बेचती। इस खबर को सगठित युवकदल ने एक दम छोड नही दिया। उनके मन मे यह बात कही लगी रह गयी और एक ने किसी मेडिकल रिप्रेजेंटेटिव को पकड कर पूछा, 'मानवदेह मे लवण कितना ओम्निपोटेंट है?' मेडिकल रिप्रेजेंटेटिव हाल ही में काम मे लगा था और जो सारा इल्म सीखा था उसे उद्धरण का कोई मौका नही मिल रहा था। उसने जो कुछ कहा, उसे सुनकर युवक को चक्कर आ गया।

वक्तव्य इस प्रकार था नमक और पानी शरीर के इनार्गेनिक या मिनरल्स उपादान है। जीने के लिए ये अनिवार्य है और शरीरकोष के फंक्शन मे यह विशेष भूमिका का पालन करते रहते हैं। प्रमुख लवण है क्लोराइड, कार्बनेट, वाइकार्बनेट, सल्फेट और फास्फेट। यह सोडियम, पोटाशियम, कैल्शियम, मैग्नेशियम, क्लोराइड के साथ लोहा, सी० ओ० टू, सल्फर और फ़ास्फोरस के यौगिक हैं। साधारण रूप से कहा जाता है कि लवण पूरे जीव-शरीर मे ये सब काम करते हैं—(1) शरीर की आस्रवण अवस्था को देखभाल कर ठीक रखना। (2) देह मे जल का सतुलन और रक्त का वॉल्यूम ठीक रखना। (3) शरीर का ऐसिड-बेस भार-साम्य ठीक बनाये रखना। (4) शारीरिक चुस्ती के लिए आवश्यक सामग्रियों को जुटाना, विशेष रूप से अस्थि और दाँतो को। मांसपेशी और नर्वमेल की प्रॉपर इरिटेबिलिटी के रख-रखाव के लिए भी लवण आवश्यक है। आवश्यक है रक्त संचन या कोआगुलेशन के क्षेत्र मे। (5) लवण कई एन्जाइम-सिस्टम श्वास-प्रश्वास के पिगमेंट और हार्मोन की आवश्यक सामग्री है। (6) लवण जीवदेह मे सेल-मेम्ब्रेन और कैपिलरी पर्मियेबिलिटी नियन्त्रण मे रखता है और उनको चलाता है।

इतनी कठिन बातें जानकर युवक और भी चक्कर खा गया और बोला, 'क्या यार, मैने क्या इम्तहान के लिए पूछा था ?

'तब क्यों पूछा ?'

'नमक न खाने से क्या-क्या नुकसान हो सकते हैं ?'

'नुकसान क्या होगा ? हाई कैलोरी मिला खाना मत खाओ, मामूली नमक से ही काम बन जायेगा।'

'अरे, ऐसे लोग भी तो हैं, जो किसी भी कैलोरी के पास नही फटकते!'

अकेला ने नदी के मोड़ पर जहाँ कि बाँसों का जंगल झुका पड़ा था, वहाँ से सब देखा था और समझने की कोशिश की थी। साल्टलिक पर अब किसी का हाथ न पड़े, आसपास आदमी की अपवित्र गंध न रहे। यह क्या कोई *नया आक्रमण-कौशल* है ? उसे मानो पता था कि आदमी बेसिकली इर्रेशनल प्राणी है। 'अकेला' को खफ़ाकर नोनीमिट्टी लेना इर्रेशनल काम था। न लेना रेशनल था। लेकिन आदमी बहुत दिनों तक अकल से काम नहीं कर सकता है। *पूर्ति आदि भी नहीं कर सकेंगे, इसे जैसे 'अकेला' जानता* था।

पूर्ति ने वही इर्रेशनल काम किया। सबसे बड़ी आश्चर्य की घटना हुई कि जब किया, तो उसके एक सप्ताह पहले से 'एनफ इज एनफ' स्थिर *कर उत्तमचन्द ने हाट में काफ़ी नमक बेचना शुरू किया था। पूर्ति को यह पता था या नहीं, यह भी मालूम नहीं हुआ। शायद पता न था। अगर* जानता, फिर भी विश्वास नहीं करता कि उत्तमचन्द उसे नमक बेचेगा। हो सकता है कि 'अकेला' की नाक के सिरे से या 'अकेला' को धोखा देकर उन लोगों की नोनीमाटी चोरी करने की तबीयत हुई हो। वे भी मर्द और काम करने वाले हैं, इसे प्रमाणित करने के लिए वही काम करना उनके लिए *बड़ी बहादुरी का काम लगा था। शायद! या वन-विभाग को छकाने की* इच्छा हुई थी। पूर्ति के मन में क्या आया था, उसका पता नहीं चला। पर बहुत जिरह करने के बाद पता चला कि भोर रात में पूर्ति और दो युवक बोरा लेकर निकले। कह गये, 'बहू, सावधान, सावधान, चिल्लाना मत। सावधानी से ही जायेंगे और आयेंगे। सूरज निकलने पर हाथी चले जायेंगे, *तब जायेंगे।'*

वे भी गये और 'अकेला' भी बढ़ा। हाथी विशालकाय भूमिचर प्राणी होता है। लेकिन खफ़ा हाथी जब आदमी के साथ अक़्ल की लड़ाई में उतरता है, तो चाहे तो चींटी से भी निःशब्द चल सकता है। हर सूखे पत्ते को हटाकर होशियारी से क़दम रखता है, अविश्वसनीय सतर्कता के साथ। इसीलिए गरदन घुमाते ही *पूर्ति आदि को लगा था कि शायद प्राचीन पलामू* का क़िला ही बढ़ आया है। हाथी जितना बड़ा होता है बहुत पास से उससे भी बड़ा दिखायी देता है।

'हाँ हाँ, भारतीय लोगो की फूड हैबिट ठीक नही है।'

'अरे, मैं जिनकी बात कह रहा हूँ... ।'

युवक समझ गया कि वह छाया के साथ कुश्ती लड़कर मन के शरीर मे दर्द पैदा कर रहा है। डाल्टनगंज की चाय की दूकान, झुझार गाँव से कोई लाखो योजन की दूरी पर नही है। लेकिन ये दो जगहे महान विश्व के या नक्षत्रों पर स्थापित है, और किसे नही मालूम, आकाश के तारो पर तमाम कविताएँ और गीत क्यों न लिखे गये हों, यह करोड़ों सूर्यो से भी विशिष्ट ताप है और उनका मध्यवर्ती काला आकाश वास्तव में करोडों मील के व्यवधान पर उक्त क्रुद्ध और घूमते हुए नक्षत्रो मे अन्तर रखा है। डाल्टनगंज गरम है, लकड़ी के रोजगार की गर्मी से। झुझार गरम है, अभागे और आधुनिक भारत से निर्वासित कुछ आदिवासियों की वचना के उत्ताप से। पूर्ति मुंडा की समस्या इस टेरीक्लॉथ और पाउडर से शोभित चटक-मटक वाले लडके को समझाना छायाचित्रो की-सी एक बेकार कोशिश है।

'किसकी बात कह रहे हो ?'

'वे लोग खाते है केवल घाटो या मड ्वा या उबाले भुट्टे। तरकारी या फल या मछली या मास...।'

'वे नमक नहीं खाते ? क्यों ?'

'मिलता नही।'

'गप है। नमक सबसे सस्ती चीज है।'

'उन्हें नमक नहीं बेचते...।'

'झूठ।'

'जो लोग लो कैलोरी के सिरियल खाते है, उनको नमक न मिले तो क्या होगा ?'

'किन्हें ? नयी फ़िल्म देखी थी ?'

'नही। बताओ न।'

'अरे, अनाड़ी को समझाऊँ कैसे ?'

'नही तो तुम पंडित क्यों हुए ?'

'लवण शरीर के फ्लुइड को कंट्रोल करता है, रक्त को भी। लवण न मिलने से खून का कोआगुलेशन—खून का जमना—बहुत गाढ़ा हो जायेगा।

हाथी ने बिना कोई आवाज किये सूँड़ और पैर चलाये थे, लेकिन तीन आदमी जोरो से, बड़े जोरो से चीखने लगे। उनके आर्तनाद से दूर-दूर के हाथियों के झुंड भी चचल हो गये, हिरन उछल कर भाग निकले। इंसान का आर्तनाद झटपट निकल कर चुप हो जाता है। उसके बाद हाथी प्रायः मानुषी उल्लास में तेज चीत्कार से आकाश फाड़ते हुए जंगल को रौंदता हुआ चला जाता है।

'ऐसा क्यो हुआ, इसका ठीक से पता नही चला,' पूर्ति का कहना था। दलित और पिसे मानव-शरीर कोई गवाही या इजहार नही दे सकते।

नोनीमाटी चुराने आकर मरे? नोनामाटी?

सबके मन में यही बात उठती और पूर्ति आदि का सारा आचरण बहुत दुर्बोध लगा। अन्त में दारोगा ने कहा, 'जरूर शराब के नशे में मतवाला रहा होगा।'

सवेरे शराब पीकर आदिवासियो का मतवाले रहने का समय होता है या नही, इस बात को उठाकर किसी ने मामले को उलझाया नही। यह नोनीमाटी की चोरी का मामला है, यह समझना मुश्किल है। नोन ऐसी सस्ती चीज है! *शराब पीकर मतवाले हुए बिना ऐसा इर्रेशनल—नासमझी का*—काम पूर्ति आदि क्यो करते?

हाथी की नोनीमाटी चोरी करने जाकर मरे! दारोगा की कुछ बातें पूर्ति आदि की एपिटाफ बन गयी और झुझारवासी किसी भी तरह विश्वास योग्य नही हैं, यह प्रमाणित हो गया। तृणभोजी जीवों को नमक की जरूरत होती है, और उस नमक को भी आदमी चुरा ले! मनुष्य के हाथों वन्य-प्राणियो का सरक्षण कितना कठिन होता है, वह जैसे पूर्ति आदि के अस्वाभाविक काम से फिर याद हो आया।

'अकेला' की जानकारी के बिना वह 'रोग' (बदमाश) डिक्लेयर कर दिया गया और इसलिए उसके मरने से हाथियों का झुड खफा न होगा। वह अकेला है, इसलिए कुछ कमीशन्ड शिकारी लोगो ने उसे गोली से मार डाला। घटना अख़बार में छोटा-सा समाचार बनी और मृत 'अकेला' को देखने *झुझारवासी भी आये। गाँव के बुजुर्गों को हाथी देखकर बुरा लगा* कि यह ठीक नही हुआ। प्रत्यक्ष सत्य था कि हाथी ने पूर्ति आदि को मार

हार्ट को गाढा रक्त पंप करने मे कष्ट होगा, साँस मे दवाव आयेगा। मसिल में—स्नायुओं मे—क्रैम्प यानी ऐंठन होगी। शरीर चलाने मे भी वहुत स्ट्रेन पड़ेगा। शरीर के हाड़ और दाँतों का क्षय तो होगा ही। बॉडी में जनरल डिके—सब तरह का क्षय—होगा। छोड़ो फ़िजूल बात। चलो फ़िल्म देख आयें।'

फ़िल्म मे दुर्धर्ष गनमैन, वदूकवाजी, उत्तुंग यौवना टाँगेवाली और अमिताभ बच्चन थे। किन्तु अमजद खाँ के क़ानून के हाथों सजा पाकर बनारसी पान खाकर घर लौटने के बाद भी युवक झुक्षार कर समस्या को उसके दिमाग़ से अलग न कर सका। दूसरे दिन वह टाहाड़ मे उत्तमचन्द के घर गया।

उसकी शिकायत सुनकर उत्तमचंद वोला, 'आदिवासी पहले झूठी बातें नही कहते थे। अब वहुत खचड़े हो गये हैं।'

'क्यो ?'

'मैं गदे लोगों को नमक नही बेचता।'

'नही।'

'अरे मैं किसी को नमक नही वेचता। नमक मे कुछ भी मुनाफ़ा नही है। मैं पिछले हाट से हाट में नमक नहीं ले जाता। इसके पहले उन्हें नमक नही बेचा ? कैसी अजीब बात है ! थोड़ा नमक नही बेचा ? क्या अजीब बात है ! थोड़ा नमक, शायद दूकान से उठ गया।'

'नमक नही वेचते ? क्यो ?'

'नफ़ा नही है।'

'यह क्या ठीक हो रहा है ?'

'मैं जब उत्तमचन्द हूँ, वनिया, जब पहले कांग्रेस को मदद दी थी, तब तो मेरी सब बात ही ख़राब है, सब काम ही ग़लत है।'

'उल्टा समझ रहे हो।'

'नहीं बाबू साहब ! कांग्रेस को मदद दी, जब जो सरकार चलाये, उसे मदद न देने से हमारी तरह गरीब गाँव का वनिया जिन्दा नही रह सकता। आप लोगों ने कहा, मैंने वेगार वन्द कर दी, फसल में हक़ भी छोड़ दिया। कांग्रेस के लड़कों ने ये सब बातें नही कही थी। कहते तो तब भी देता।

डाला, जिसके परिणामस्वरूप वह मरा। परोक्ष सत्य मानो कुछ और था। नमक के लिए इतना कुछ! उन्हें नमक नहीं मिलता। नमक खरीद सकते तो तीन आदमी और एक हाथी न मरते। इसके लिए कोई और जिम्मेदार है, कोई और। जिसने नमक नहीं बेचा वह, या कोई और नियम? कोई और व्यवस्था? जिस नियम और व्यवस्था के अंतर्गत रहने पर नमक न बेचने पर उत्तमचंद का कोई अपराध नहीं? उसका विचार गन्दा है और बातों के लिए शब्द-भंडार बहुत सीमित होने से किसी को कुछ समझाया नहीं जा सकता।

'यह काम ठीक नहीं हुआ जी!' बाबुओं के लिए इतनी-सी बात कहते हुए वे गाँव वालों को लेकर चले गये और कतार बाँधकर सफेद बालू पार कर सिर हिलाते-हिलाते भुझार लौट गये। नमक जान लड़ा देने वाली समस्या हो सकती है, इसे बाबू लोग कभी न समझ सकेंगे और यह मामला उनके निकट अवास्तविक रह जायेगा, इसे वे जानते हैं। जानते हैं, इसीलिए एक बार भी पीछे घूमकर नहीं देखा। बालू की छाती पर उनकी शक्लें क्रमशः छोटी होती गयीं। वे जल्दी-जल्दी चल रहे थे। अपने जीवन में लौट कर ही उनको चैन मिलेगा। जिस जीवन में अविश्वास नहीं है, पूर्ति आदि की मृत्यु की सहज व्याख्या नहीं, सहज व्याख्या देकर अपने अस्तित्व के वास्तविक सत्य को अस्वीकार नहीं करना है—उसी जीवन की ओर।

पर अव जो कह रहे है, सो कैसे करूँ ? जिस चीज मे नफ़ा नही, उसे वेचने को कहना तो जवरदस्ती है ।'

'वे उधार लेने आते है ?'

'न, न, उधार वे क्यों लेंगे ? फसल मिल रही है। और हमे तो झाड-पोछ कर जरा-सा दिया।'

'उस जमीन में क्या होता है, बताइये ?'

'न होता हो तो क्या करूँ ? जमीन कम पैदावार की हो तो वह भी क्या मेरा दोष है ? और जानते है ? वह उधार चाहे भी तो मैं उधार न दूंगा।'

'क्यों ?'

'यही देखिये ! उधार देने पर उधार चुकाया जाता है, और वह आपकी सरकार मे गैर-कानूनी है। देखिये, ज्यादा नाचने से गणेश-पूजा नही होती। यह आईन—क़ानून—पहले भी था। कांग्रेसी सरकार आँखें बन्द किये रहती थी, क्योंकि काग्रेसी सरकार आदमी का दुख समझती थी। वे लोग जानते थे कि महाजन उधार न दे तो आदिवासी जगली लोग भूखे मर जायेंगे। आप लोग तो समझते नही। अच्छा है ! जो कर रहे हैं वह अच्छे के लिए ही कर रहे हैं। अन्त भला तो सब भला। उन्हें उधार नही दूंगा।'

युवक हार मानकर लौट आया और शुभ संकल्प किया कि पहला मौका मिलने पर झुझार बेल्ट मे जनता-दुकान खुलवाने की व्यवस्था करेगा। सकल्प कुछ दिनो मन मे रहा। उसके वाद शराव की गैर-कानूनी दूकान के लिए गड़वड़ दूर करने वह दूसरी जगह चला गया और झुझार की बात भूल गया।

युवको की सारी शुभेच्छा रहने पर भी पूर्ति आदि अलोने अँधियारे में पड़े रहे। पूर्ति अवश्य ही नही रहता था। रोजाना वह चुपचाप जंगल छानता था। हिरनों का साल्टलिक जंगल-ऑफिस के आस-पास था। इसके वाद उसने एक दिन ख़रगोश का पीछा करने जाकर हाथियों का सॉल्टलिक खोज लिया। दृश्य बहुत ही व्यंजक था। प्राणी के भय से पूर्ति पेड़ की डाल पर था। थोड़ी ही दूर पर हाथियों का गोल नोनहरी मिट्टी चाट रहा था। पथरीला नमक। पत्थर के ऊपर मामूली-सा मिट्टी मिलाकर फैलाया हुआ था।

वीज

कुरुडा और हेसारी गाँव के उत्तर में जमीन लहरदार है, बिलकुल सूखी, धूप में जली हुई। बरसात होने के बाद भी यहाँ घास नहीं पैदा होती। बीच-बीच मे नागफनी के जगल फन उठाये रहते। कुछ नीम के पेड़ भी थे। यह जला और नीचा-ऊँचा मैदान जहाँ कि भेड़ें चरती नही दिखायी पड़ती उन्हीं के बीचोबीच एक डोगे की शकल की नीची जमीन थी। जमीन आधा बीघा होगी। ऊँचे किनारे पर चढने पर ही जमीन नजर आती और हरियाली की छटा देखकर सब भुतहा-सा लगता।

और भी अधिक भुतहा लगता था जमीन के बीच में लकडी के खंभों पर मचान और छाया हुआ घर देखकर। इस जमीन पर मकान बहुत अशुभ था। देखने वालों की नजरों मे, क्योंकि ऐसा मकान खेती का पहरा देने के लिए होता है। इस जमीन मे सिर्फ अनन्नास के-से कांटेदार बिखरे पौधे थे जिन्हें भेड़ें भी नही खाती थी। इन पौधो के रेशों से दुनिया में सबसे मजबूत रस्सी बनती है। भारत में ये पौधे जगली झाडी माने जाते है।

सबसे भुतहा दृश्य संध्या के समय देखा जाता है। कुरुडा गाँव की ओर से लम्बे-लम्बे डग भरता हुआ एक आदमी इस ओर आ रहा है। पास आने पर देखा गया कि वह बूढ़ा है, उसकी खाल झुर्रियो से भरी, कमर मे लँगोटी है जिसमें एक पैंबददार बटुआ लटक रहा था। उसके हाथ में लाठी और उन झाडियों मे लाठी। पौधों की डालियो से बनी बहुत ही लपलपी सीढी को पकड़ कर वह ऊपर चढता है। चकमक ठोंककर बीडी सुलगाता है और

'नमक का रोत बना दिया है।'

पूर्ति ने मन ही-मन कहा। उसके बाद अँधेरा घना होने पर हाथी वह जगह छोड़ देते। बेतला के हाथी 'शो बिज़नेस' समझते है। शाम के वक़्त जीप पर चढकर टूरिस्ट जीवजन्तु देखने निकलते। वे बाँस के पेड़ों को कुतरने मे लगे हाथियो के झुड को देखने के अभ्यस्त थे। हाथी उस ओर जाते।

सारे हाथियों के चले जाने पर एक दाँत वाला बुड्ढा हाथी आता। उसके चलने-फिरने से गिरस्त ढँग *नही लगता था, यद्यपि हाथी बहुत ही* घरेलू जानवर है। 'अकेला!' पूर्ति ने मन-ही-मन कहा, और डर के मारे पेड़ पर चिपका रहा। कोई युवक हाथी किसी दल से निकाला जाकर यूथपति बन जाये ऐसे हाथी को 'अकेला' कहते है और 'अकेला' सबके लिए ही अवॉयडेबल—दूर रहने वाला—होता है। 'अकेला' क्या करे, इसका पता नही। यूथपतित्व और दल से निर्वासन के कारण इसका व्यवहार भी और आचरण भी इर्रेसपांसिबल—गैर-ज़िम्मेदारी का होता है।

'अकेला' साल्टलिक को मूत से भिगोकर चला गया। पूर्ति समझा कि वह अपनी समझ के मुताबिक खचड़ई करके चला गया।

हाथी का पेशाब बचाकर नोनी माटी को पल्ले मे बाँध कर वह घर लौटा। पानी गरम कर उसमे नोनी माटी छोड दी। पत्नी से बोला, 'कल देखना होगा, मिट्टी नीचे थिर जाने पर कितना निमक रहता है?'

'पानी मे निमक?'

'हाँ।'

सवेरे देखा गया कि मिट्टी और नमक एक साथ नीचे पड़े हैं। पूर्ति ने ठडी साँस लेकर कहा, 'फिर भी नमक तो है! साले अब हाट मे नमक बेचते ही नही।'

उस नोनखरे गंदे पानी को ही कपड़े से छानकर पूर्ति पीता, औरो को खबर दी, और 'अकेला' हाथी के बारे मे सबको सावधान किया। अब गाँव वाले बूढों ने कहा, 'बहुत सावधान! उस बार क्या हुआ?'

सबको ही याद आया। हर बरस साराडा फॉरेस्ट मे हाथियों का एक झुड बेतला आता और लौट जाता। कई बरस पहले किसी नासमझ आदि-

मचान पर बैठा रहता। हर रोज। अँधेरा घना होने पर किसी समय वह सो जाता। हर रोज।

हर रोज कुरुडा गाँव मे दूलन गजू की बुढिया पत्नी उसे उस समय गालियाँ देती। अपने अधिकार से, क्योंकि बुड्ढे का नाम था दूलन गजू। यह गालियाँ देने का मामला उनके लड़के-बहू-नाती-नातिन को अच्छा नही लगता था। लेकिन उनके कुछ करने का भी नही था। कुछ कहने पर बुढ़िया उन्हे भी गाली देती। और धतुआ को मैया की गाली देने की, झगड़ा करने की सामर्थ्य बस्ती-भर मे सबको मालूम थी। झगड़ा करने पर उसकी दक्षता और पेशेवर झगड़ालू सामर्थ्य को आह्वान देना होता था। वह जाकर विरोधियो की पिछली सात पीढियों मे से पहली पीढी के पुरखो से गाली देना शुरू करती। सामान्यतः उसके तीसरी पीढी तक पहुँचते ही विरोधी मैदान छोड भाग खडे होते।

सभी उसका मान करते थे। आपतकाल में जब तामाडी मे शोर हुआ, तो इस गाँव में भी पूछताछ करने पुलिस आयी थी। धतुआ की माँ ने आग बरसाते हुए पुलिस को गाली देकर गाँव से बाहर कर दिया। पुलिस जिसकी तलाश में आयी थी उनमें से एक गोठ के मचान मे छिपा हुआ था। धतुआ की माँ 'आ, सारा घर देख, आ मुर्दाखोर' कहकर ऐसा चीखी कि उस चीख से ही साबित हो गया कि गाँव बिलकुल निरापद है।

वह उस पर भी शान्त न हुई। बोली, 'देखो, अभी तुम्हें गाँव में मिलेगी बुढिया और बच्चे। उन्हें देखोगे? उन्हें पकडोगे?'

पुलिस के चले जाने के बाद धतुआ की माँ ने भगोड़े लडके को बातो के बाण से बीध दिया। 'रतनी, सदा से तेरी उल्टी अकल रही है। एक बूढी बकरी में तुझसे अधिक बुद्धि होती है। उस राजपूत महाजन के पैर मे कुल्हाड़ी मार दी, अच्छा किया। गले में मारता तो पापी विदा हो जाता। सो जंगल में भागेगा न? जंगल में भाग कर रहेगा न? गाँव को कौन मूरख लौटेगा? जा, जगल को जा।'

धतुआ की क्षमता भी न थी, उसने और लटुआ ने माँ से कहा, 'बाप को गाली मत दो।'

उस पर माँ भभक उठी। 'बूढा अब बेटों का बड़ा प्यारा बन गया।

वासी युवक ने तीर मारकर एक बच्चा हाथी मार डाला। उससे हाथी खफ़ा हो गये और मरे बच्चे को घेर कर आदमी की समझ में आने वाली प्रतिज्ञा मे चलते रहे।

उसके बाद वे प्रतिहिंसा की लडाई मे उतर पडे। झुझार और कोलना गाँव के रहने वाले भाग गये। पहले बरस गाँव को उलट-पलट कर वे चले गये।

दूसरे बरस मारांडा मे आकर उन्होने काम में लगे जगल के कुलियों मे से दो आदमियो को मार डाला।

तीसरे बरस बेतला के जगल-बँगले के नीचे एक बस और गाड़ी को उन्होंने तोड़ताड कर उलट दिया।

तीन बरस में आदमियों से बदला लेने की इच्छा को तृप्त कर तभी वे शान्त हुए। उनको बदमाश घोषित कर मारा न जा सका। क्योंकि वे हमेशा झुंड में घूमते और वयस्क हाथी रिट्रीब्यूशन—प्रतिशोध—का काम करते। आजकल बेतला में सब जगह काँटेदार तारों का घेरा है। हाथियों की बुद्धि बहुत होती है और इन काँटेदार तारों का निषेध उन्होंने समझा और मान लिया।

गाँव के बूढे बोले, 'और जो भी करना, हाथी को गुस्सा मत कराना। और वह भी 'अकेले' को। वे भूलते नहीं।'

युवक लोग अवसन्न शरीर से और सहन न कर पा रहे थे। वे सूखे मुँह से बोले, 'सावधानी से ही जायेंगे। पूजा देकर भी कुछ नहीं हुआ। दम निकल जाता है। बोझा खीचने मे हाथ-पाँव दुखने लगते हैं।'

वे लोग सावधानी से ही गये। सावधानी से नोनी मिट्टी चोरी की। 'गाछ से पहले न उतरना, देख लेना कि सब हाथी चले गये हैं या नहीं।' पूर्ति की बात याद रखो।

उसके बाद, सभवत. 'अकेले' के कारण ही साल्टलिक शिफ्ट की गयी। दो-तीन जगह साल्टलिकें बनायी गयी। बहुत दूर पर अकेला, झुझार के आदिवासी, साल्टलिक—इन कठिन अकों के उत्तर लेने के बाद वन-विभाग की हालत बडी होशियारी की थी।

अकेले या झुड मे, एलीफैंट पॉपुलेशन की जिम्मेदारी वन-विभाग की

माँ तो बूढी बकरी है, निकम्मी। बाप का हाल बच्चे समझेंगे ? माँ को पता है।'

चार बरस की उमर मे माँ का ब्याह हुआ था। चौदह होने पर माँ 'गौने' मे गृहस्थी चलाने आयी। माँ का पोर-पोर उस बुड्ढे का स्वभाव जानता है। काँटेदार जमीन के जमीदार के राज्य मे जो अकेला पहरा दे, उसे साँप काटने या बाघ खाने पर कौन विधवा होगा ? घतुआ या लटुआ ? बुड्ढे के मरने पर घर कौन चलायेगा ? लटुआ या घतुआ ? उनकी मुराद है कि वह बजर जमीन दिखाकर हर बरस बीज ले आना और सरकारी खाद बेच देना। पहान के हल के बैल को दिखाकर हर बरस हल के बैल के लिए रुपये लेना।

लडके चुप हो गये। माँ जल्दी-जल्दी हुक्के मे दम लगाने लगी और बोली, 'मेरे मरे बिना तुम मेरी कीमत नही समझोगे,' असगुन की ऐसी कोई बात कहकर लेट जाती। बहुएँ फुसफुसा कर लडकों से कहती, 'चलो, एक दिन बीत गया।'

माँ अँधेरे मे से कहती कि वह किसी दिन वहाँ मरी पडी रहेगी। देखने को भी न मिलेगी।

लड़के जानते थे कि सूने जंगल का पहरा देने के लिए मचान पर रात को रहना बहुत ही मुश्किल है, स्वाभाविक नही है। लेकिन पिता को उन्होंने स्वाभाविक आदमी नही माना। पिता बहुत ही उलझे हुए, गहरी आदत के, दुर्बोध्य थे। गंजू का काम था मरे पशुओं की खाल छीलना। पिता ने कभी के बड़े जोरदार राजपूत, महाजन और दस बदूको के मालिक लछमनसिंह की कई भैंसों को सखिया जहर देकर मार डाला। वह लछमनसिंह के तामाड़ी गाँव में रहता था। लछमनसिंह ने स्वभावतः ही अपने भागीदार भाई दैतारीसिंह पर शक किया, जिसका नतीजा हुआ कि घरेलू झगडा शुरू हो गया। वह अभी तक पूरी तरह से ख़तम नही हुआ है।

उसके बाद भी पिता टिके हुए है। इससे प्रमाणित हुआ कि पिता दूसरे ढग के आदमी हैं। जिन्दा रहने का कौशल सोचते रहने मे पिता को किसी दिन लडकों या नाती के साथ बात करने का समय न मिला।

माँ भी कम नहीं थी। माँ के पोढ़े शरीर मे मेहनत करने की सामर्थ्य

थी। यह 'अकेला' उचड़ा था। यह साल्टलिक से नोनी मिट्टी चाटने के बाद मुड़ कर चला जाता। जगह-जगह साल्टलिक बनाने पर वन-विभाग को *आशा थी कि अकेला एक जगह जायेगा तो दूसरी जगह हाथियों का झुंड होगा।*

'अकेले' ने बड़े हिसाब से गड़बड़ की थी। एक बार यहाँ, तो दूसरी बार वहाँ जाता था। झुंड में न रहने से उसके समय का ज्ञान भी बदल गया था। सध्या या सवेरे के सिवा वह बेटाइम भी साल्टलिक पर चला जाता था। स्वभाव बदल गया था। शायद वह सोच रहा था कि नोनी मिट्टी चोरी हो रही है। बीच-बीच में सड़क पर आकर खड़ा हो जाता। जीप की रोशनी पड़ने पर भी न हिलता। जीप लौटा देनी पड़ती। वह क्या आदमियों पर सन्देह कर रहा था? सूँड़ के राडार हिलाकर क्या वह आदमी की गंध खोज रहा था?

वन-विभाग में हाथियों के बारे में एक टेन्शन बन और बढ़ रहा था। क्या इस तरह का 'अकेला' अचानक बिगड़ैल आचरण कर सकता है? वन-विभाग की मुसीबत थी कि 'मैन-किलर या रोग' कहकर प्रसिद्ध हुए बिना, उस बारे में प्रमाण मिले बिना, सरक्षित हाथी को मारा नहीं जाता था।

मन-ही-मन सभी इस तनावपूर्ण स्थिति के फलस्वरूप किसी विस्फोट के होने की अपेक्षा कर रहे थे। वन-विभाग में कुली कह रहे थे, 'अकेले' के होने पर उन्हें काम पर जाने में डर लगता है। उन्होंने देखा कि 'अकेला' दूर खड़ा उनको लक्ष्य कर रहा है और वे काम छोड़ कर भाग आये। 'अकेले' के मन में सन्देह घुस गया था। साल्टलिक पर जो नमक रखने आते, उनके मन में भी शक था। नोनी माटी खुरच-खुरचा कर खतम कर दी गयी है, ऐसी बात उन्होंने कभी नहीं देखी थी। नोनी माटी जैसी चीज़ कोई चोरी करेगा? न। उन्होंने रिपोर्ट नहीं की। रिपोर्ट के लायक महत्त्वपूर्ण घटना-सी लगी नहीं। नमक जैसी चीज? स्टोर में बहुत-सा है।

एलिफेंट पॉपुलेशन भी सशय में था और असन्तुष्ट था। साल्टलिक है, नोनी मिट्टी नहीं रहती है, इसे वे भी कुछ नहीं समझ पा रहे थे। सब *ही अजीब गड़बड़ था।*

इसका कारण, इस सारी हालत का कारण, पूर्ति और दूसरे दो युवक थे।

इतनी अधिक थी, साहस, जिद, गुस्सा ऐसा ज्यादा था कि माँ भी मामूली ढग के इसानों से अलग थी।

पिता और माँ को उन्होंने जिन्दगी-भर में कभी बैठकर बातें करते नही देखा। लेकिन पिता जब कभी कोई महत्वपूर्ण काम करते, तो माँ को बुलाकर आँगन मे बैठा लेते। हुक्का सुलगा लेते, कहते, 'ए धतुआ की माँ ! एक सलाह दे। तेरी सलाह गाँव मे सभी लेते है, पुलिस तुझसे डरती है।'

'क्या खचडा बात सोचते हो ? बोलो, किसे क्या धोखा देना है ?'

माँ का स्वर ऊँचा था, पर उसमे उस समय गर्मी न थी। दोनों धीमी आवाज़ मे सलाह-मशविरा कर रहे थे। इस तरह की घटना बरस डेढ-बरस में एक बार हुआ करती थी।

दूसरे समय पिता माँ के साथ भी बातें न करते थे। माँ कहा करती, 'इससे अच्छा है कि मैं बाप के घर चली जाऊँ।'

पिता धूर्त हँसी हँसकर धीरे से हवा मे कहते, 'हाँ, दूरा गाँव मे तेरे बाबा का बडा मकान है !'

माँ के बाप-माँ-भाई कोई नही था। माँ यह जानती थी। फिर भी कहती और पिता को धूर्त हँसी हँसकर चुटकी लेने का मौका देती रहती।

इन तरह पिता और माँ, धतुआ और लटुआ को कुछ करने को न था। पहाड पच्छिम मे क्यो है, कुरुडा नदी क्यो बहती रहती है, यह लेकर भी जैसे कुछ करने को नही है। सनीचरी कहती, 'तेरे माँ और बाबा दोनों ही पगले है। तेरा बाबा पूरा पागल है। पागल न होता तो जब से जमीन मिली है, पहरा देता रहता है, और धान नही बोता।'

बात चौदह आना ठीक थी। वह जमीन मिली। हुई जमीन थी, लेकिन उससे चौदह पैसों का फ़ायदा भी नही होता था।

वह जमीन लछमनसिंह की थी। कुछ बरस पहले सर्वोदय कार्यकर्ता उस क्षेत्र मे जमीनों के मालिकों के दरवाज़ों का चक्कर लगाते थे। उनके वक्त भी सनीचरी का कहना था, 'ये बाबू-लोग पागल है। जमीन-मालिकों के दिलों को वह धकमोल मे डाल देंगे। जमीन के मालिक कहेंगे, ओह ! हमारी इतनी जमीन है, और इनके पास बिलकुल जमीन नही है ! तब वे जमीन दे देंगे। जिस दिन देंगे उस दिन मैं चौकी पर बैठूँगा, मट्ठा-मक्खन

पहले वे सावधान रहे, बहुत ही सावधान। शाम से पेड़ से चिमट कर चुपचाप फुनगी पर रहते। हाथियों के झुंड और 'अकेले' के चले जाने पर नोनी मिट्टी लेते। संभवतः इस नमक के जमा करने से उनकी मांसपेशियाँ तेज और स्वाभाविक गति में समर्थ हो गयी थी, शरीर की ऑस्मोसिस—स्थितावस्था—लौटा कर, खून में पानी की बढती होने से हृदयंत्र अधिक दबाव न डालकर स्वाभाविक चाव से ही शरीर में रक्त भेजेगा और शरीर की इलेक्ट्रोलाइट अवस्था ठीक हो जायेगी।

संभवतः! इसके फ़ौरन बाद आदमी की धूर्त बुद्धि फिर दिमाग में भर गयी। वे सतर्कता भूल गये। शाम को हाथियों के आने के पहले ही नोनी मिट्टी लेकर चले जाते। वे जान भी न पाये कि 'अकेला' उन्हे देख रहा है।

अचानक जंगल मे 'अकेले' को कम देखा जाता। पता लगा कि शाम के शुरू होने पर नदी की सफेद बालू पर खड़े-खड़े जैसे दूर पर कुछ देख रहा हो।

'क्या देख रहा है?'

'नदी पार कर आदिवासी जा रहे हैं।'

यह समाचार कुछ अच्छा नही था। किन्तु 'अकेले' ने अपने मनोयोग का टार्गेट बदल दिया है, इससे ही वन-विभाग का तनाव ढीला पड़ गया। पर कहा गया कि हाथी क्या करेगा, यह जान पाने पर ही जानना होता है।

कुछ दिन बाद फिर कत्थे के पेड़ों का काम छोड़ देना पड़ा। खैर के पेड़ों का जंगल, प्राचीन पलामू किले की राह में जंगल के बिलकुल भीतर स्थित है। पता लगा कि प्राचीन पलामू किले के पास 'अकेला' घूमता-फिरता है।

यह प्राचीन पलामू का किला किसी समय पलामू के स्वाधीन राजाओं का दुर्ग था। बेतला के घने जंगल में इस विशाल, पहाड़-से ऊँचे पत्थरों और ईंटों के टूटे क़िले का दृश्य बहुत ही डरावना था। प्रकृति के उत्पन्न किये वनस्पतियों के जंगल मे, ऊँचे-से-ऊँचे साल के पेड़ों से भी बहुत ऊँचा था। मनुष्य के बनाये इतने बड़े स्ट्रक्चर के लिए आँखें तैयार नही रहती। नहीं रहती, इसीलिए क़िले को देख कर डर लगता है।

जंगल के कुली देखते हैं कि बाघ से भी अधिक निःशब्द मे, सूखे पत्तों

खाऊँगा, दोनों वेला भात राँधूँगा।'

किन्तु ज़मीन के मालिक तब अपने वर्ग के ज़मीन के मालिकों को भुलावा देने के लिए थोड़ी-थोड़ी बेकार-पथरीली-बजर ज़मीन देते रहे। पाँच-सौ, सात-सौ, हज़ार-दो हज़ार बीघा खेती के योग्य ज़मीन सभी के पास है। धान-मकई-गेहूँ-मडुआ-सरसों-अरहर की खेती सभी करते हैं। चीना-बदाम की खेती आजकल बड़े फ़ायदे की है। लेकिन परती ज़मीन दे देने से कुछ आता-जाता नहीं।

ज़मीन देने का काम सर्वार्थसाधक था। ज़मीन दे दी गयी। सर्वोदयी नेता और कार्यकर्ता भारत में उपहासास्पद बन गये। उनकी बात पूरी हुई। कुरुडा बेल्ट के राजपूत-कायस्थ जमींदार-महाजनों ने क्या ज़मीनें नहीं दीं? तो उससे उनका हृदय-परिवर्तन हो गया? निश्चय ही। बस, सर्वोदयी मिशन सार्थक हो गया। उसके बाद ही वे मध्यप्रदेश में डाकुओं का हृदय-परिवर्तन करने गये। ज़मीनों के मालिक और डाकू—इन दो वर्गों के हृदयों में पश्चा-त्ताप न होने तक उनका मिशन पूरा होने को न था।

ज़मीन देने का काम सर्वार्थसाधक था। बजर ज़मीन निकल गयी। लेने वालों को ख़रीद लिया गया। सरकार में अपना खूँटा और मज़बूत हुआ। अन्त में रसगुल्ले की तरह सबसे बढ़कर रह गया अपने को करुणामय जानने का सुख।

उस समय दूलन और गंजू को वह ज़मीन मिली। ज़मीन को वे खुद नहीं चाहते थे। किन्तु लछमनसिंह का प्रताप बहुत अधिक था। वह आँखें लाल कर बोला, 'इसी को कहते हैं छोटा आदमी। आज मेरे मन में भला भाव आया है, दे रहा हूँ। साले, कल क्या फिर भला बना रहूँगा?'

दूलन बोला, 'हुज़ूर माई-बाप हैं।'

'तब? नीची ज़मीन है, बरसात में पानी हरहरा कर भर जाता है जो बोयेगा वही होगा।'

बरसात में किनारों का बहा हुआ लाल पानी आता और जमा हो जाता। लेकिन चारों ओर बाँझ पत्थर थे। सो किस मुलुक में जाकर कौन-सी ज़मीन में खेती करे? उपजाऊ ज़मीन होने पर लछमनसिंह यों ही डाले रखता? दूलन गया था रुपया उधार लेने। ज़मीन का मालिक बनकर

को बचाता हुआ 'अकेला' किले के पास से चला जा रहा है और सूँड बढा कर कुछ खोज रहा है। देखते ही वे लोग चले आये।

पूर्ति मुडा को स्वभावतः ही ये सारी बातें जानने का मौका नही था, क्योंकि वन-विभाग के लोगों का आभास पाते ही वे जगल में छिपने जा रहे थे। वन-विभाग के लोगो के लिए यह नमक कुछ भी नही था। लेकिन इस नमक के लिए ही पूर्ति सोच रहा था कि कभी भी दिखायी न पड़ें। देखते ही वन-विभाग के लोग उनको 'नोन-चोर' कहकर पकड़ लेंगे। यह सब गलत अन्दाज हो रहा था और 'अकेला' अपने चाटने के और मूत कर बहाने के नमक से वचित होकर अपराधी तय करने पर उतर आया था—उसने ठीक ही समझा था। साल्टलिक और झुझार मे एक बधन-सूत्र है। इसी से वह सफ़ेद बालू पर खड़े-खड़े झुझार की ओर देखता रहता। दृश्य बहुत ही लाक्षणिक था। नदी, बालू, आकाश, रात, पलामू किले की पृष्ठभूमि, ख़ामोश हाथी। बहुत ही प्रशान्त और चिरकालीन। केवल अन्तर था कि इस हाथी के दिमाग मे जो इरादे हो रहे थे, वे सफ़ेद कबूतर उड़ाने की तरह नही थे।

इसी तरह कई दिन बीत गये। उसके बाद एक रात को किसी को बिना गवाह बनाये हाथी पानी और बालू को पार करता झुझार चला गया और कुएँ के पास खडा रहा। सवेरे सब लोग दरवाजा खोलकर प्रातःकालीन नित्यक्रिया के लिए अलग-अलग गये और कुएँ के पास खडे 'अकेले' के पीछे से सूर्य को निकलते देख उन्होने अपने-अपने दरवाजे बन्द कर लिये और डर के मारे पत्थर-से चुपचाप बैठे रहे। खिड़की की झिरझिरी से उसे पूर्ति मुडा ने देखा और मन-ही-मन रटने लगा, 'हेई आबा ! कोई तीर न मार दें, हेई आबा !'

किसी ने तीर नही मारा और हाथी मानो किसी सदेह का जवाब पाकर गाँव छोड़ नदी-पार चला गया। उसके जगल मे गायब होने पर ही सब लोग घरो से निकले और गाँव के बुजुर्ग ने कहा, 'जो कहा था वही हुआ न ? ज़रूर तुम लोग असावधानी से गये थे। उसने देख लिया। नहीं तो क्यों आया ?'

'देखा नही। देखता तो हमे पता चलता न, और हम उसे देखते न ?

लौटा।

गाँव में सबने कहा, 'बड़े आदमी बदनीयत होते हैं। घी के पराँठे खा-खाकर उनका दिमाग गरम हो गया है। कल भूल जायेंगे।'

'अगर न भूलें ?'

'अरे छोड़ रखेंगे। आरा-छपरा में सर्वोदयी लोगों की बातों पर ऐसी जमीनें ही सब लोगों ने दी हैं। जिन्होंने ली हैं, उन्होंने फिर महाजन को बेच दी, गिरवी रख दी। तुम भी रख दोगे।'

'वह जमीन लेगा कौन ? महाजन तो अपना नाम खरीद रहा है, उसे गरदन से उतार रहा है।'

दूलन और भी बातें कहता। पहान ने उसे बड़ा धमकाया। उनकी बड़ी समस्याएँ हैं। दूलन की गरदन पर वह रही जमीन थोपने की समस्या उसके लिए कुछ नहीं है।

दूलन बड़बड़ाने लगा।

उसकी बहू बोली, 'ओः! जमीन से फ़ायदा कैसे उठायेगा, यही सोच रहा है। बोल तो बड़े हैं। कभी किसी को उसका पता नहीं चला।'

इस जमीन से—और फ़ायदा ?

सनीचरी ने दूसरे दिन सब सुन-सुना कर कहा—'क्यों ? ए धतुआ की अम्माँ ! जमीन पाकर धतुआ का बाप चला जायेगा शोहरी ! बिड्डी आफिस।[1] जमीन जोतने का खरच, बीज—स—ब सरकार देगी !

यह बात सुनकर दूलन के चेहरे पर मुस्कान छा गयी। उसकी आँखें सपना देखने में धूमिल हो गयीं।

किसी-किसी परीकथा में गाय गाभिन हुए बिना भी दूध देती है। दूलन का-सा आदमी भी नहीं समझता कि बंजर जमीन किस तरह से उसकी गृहस्थी चलाने में सहायक होगी ?

एक दिन जमीन का पट्टा-अट्टा उसके हाथों में आ गया। गंजूपाड़ा में दो उठी हुई कोठरियों में एक दालान के निकट थी। उसी कोठरी में रहना, खाना पकाना—सब कुछ होता था। यही उसकी दुनिया थी। दालान के एक

1. बी० डी० ओ० का दफ़्तर।

और ओट लगाकर पति-पत्नी सोते थे। वह जैसे बेसहारा लोगों की टूटी कमर हो। उसके चारों ओर राजपूत, जमींदार और महाजन थे। टाहाड के हनुमान मिश्र ब्राह्मण थे। वे इस अंचल के विशेष प्रतापी व्यक्ति थे। ऐसी जगह रहकर, हमेशा ऊँची जाति के शासन मे रहकर, दूलन की कमर का टूटना ही स्वाभाविक था।

लेकिन जिन्दा रहने के लिए वह, जबरदस्ती नही, जान कर हमेशा हर परिस्थिति से फ़ायदा उठा लेता। कहता कुछ नही, होशियारी और चालाकी से उसे सारे शक्तिशाली विरोधियों को बेवकूफ बनाकर चलना पड़ता, इस-लिए चालाकी उसके पोर-पोर में थी।

धतुआ की माँ बोली, 'ओ धतुआ! बहुत बड़ी जमीन है, बहुत उपजाऊ जमीन है। उपज को रखने के लिए बाप से खलिहान बनाने को कह। लटुआ रे, तेरा बाप जमीदार बने गइल, जमीदार।'

यह सारी बातें कही तो, लेकिन गाँव के लोग और वह दोनों ही आसरा देखते रहे। दूलन क्या करेगा, इसलिए।

दूलन की अकेली और होशियारी की लडाई को गाँव के लोग बड़ी तारीफ़ की आँखो से देखते रहे। लछमनसिंह की भैंसों का मामला सब जानते थे, किसी ने कहा नही। दैतारीसिंह के घर उसने एक बार दैतारी की बहू को कुम्हड़ा बेचा, फिर दैतारी की माँ से दाम वसूल किये। लछमन-सिंह के घर से, जब छठ परब था, केला-मूली-सब्जी-फल बैलगाड़ी पर लाद कर कुरुडा नदी के पार लाना हुआ, और पास जाकर खुद-ब-खुद साथ में चलने लगा और काल्पनिक चिड़ियों को चिल्ला-चिल्लाकर उड़ाया और बराबर थोडा-थोड़ा खिसकाता रहा। उसने जिन्दगी-भर गाँव वालों को कुछ न दिया। फिर भी गाँव वाले उसकी खातिर करते थे। वे जो न कर सकते, उसे वह कर देता।

जमीन मिलते ही दूलन ने लछमनसिंह के घुटने छूकर कहा, 'गरीब-परवर! जमीन तो दी पर खेती कैसे करूँगा? बी०डी० आफिस से कुछ मिलेगा नही। आ हा हा, ऐसी जमीन, मिलकर भी काम में न आयेगी।'

'क्यों? बी०डी० ऑफिस तुझे सब देगा।'

'न हुजूर! छोटी जात हूँ।'

आसपास की कोलियरी में चला जाता। क्यों जमीन के पीछे मरा जा रहा है?'

धतुआ धुंधली-धुंधली शान्त आँखें उठाकर ताज्जुब से बोला, 'बाबा, इस बार हमें डबल मजूरी मिलेगी।'

दूलन और कुछ न बोला। तोहरी ब्लॉक ऑफ़िस चला गया। बोला, 'इस बार रबी की खेती करूँगा। मदत चाहिए।'

बी० डी० ओ० ने शायद जिस जमीन पर खेती नही होती उसके लिए बीज देते रहने का पक्का कारण जान लिया है। वे भी इस षड्यन्त्र में लछमन और दूलन के दल में चले आये और जोरों से हँसकर बोले, 'देखूंगा।'

दूलन ने देखा कि उनके घर में एक ऊँचा-सा पपीते का पेड है। इतना ऊँचा पपीते का पेड़ देखने में नही आता।

वह बोला, 'जे पपीता का गाछ इत्ता ऊँचा कैसे हुआ? हाँ बाबू?'

बी० डी० ओ० अपनी गहरी खुशी में हँसे नही। बोले, 'यह जगह बाद में ऑफ़िस के कंपाउन्ड में मिली है। गर्मी के दिनों में पागल कुत्ता मार कर गड्ढे में डालते थे। सडे हाड़-मांस की खाद मिली है तो पेड बडा नही होगा।'

'वह खाद अच्छी होती है!'

'बहुत अच्छी। गरीब मुसलमान लोगों की कच्ची कब्रों पर फूल के पौधे कितने घने होते हैं!'

बातों ने दूलन के मन पर के लाशों के बोझ को कुछ हलका कर दिया। गाँव लौटकर दूलन भरी दुपहरी में जमीन को देखने गया। हाँ, सच ही तो है। तो करण और बुलाकी पुटुस की झाडी और पेड़ है। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। 'करण, तू मर कर भी नही मरा। लेकिन यह पुटुस के पेड तो किसी के काम नही आते। भेड-बकरी भी नही खाती। हम लोगों के हक के लिए लडने गये। गेहूँ बनकर, मड़ुआ बनकर क्यों नही रहे? नही तो चीना घास ही होते। चीना घास का दाना उबाल कर घाटो खाते।'

बड़े अफसोस के साथ वह तामाड़ी गया और लछमनसिंह के सब्जी के बगीचे में किसी को न देखकर मैदान की ओर का बेडा उखाड कर फेंक

'छोटी जात तो है ही। तेरे मन में यह रहता है, उसी से तो जूते और डंडे खाता है। वह तो है ही। लेकिन मैं जिसे जमीन दे रहा हूँ, उसे मदत नहीं देगा ? कौन है बी०डी० बाबू ?'

'कायस्थ हुजूर ! कहता है, राजपूत गँवार हैं, मूर्ख। खूब रेडियो सुनते हैं और बायें हाथ से पानी पीते हैं, चाय पीते हैं।'

'राम, राम ! छी-छी-छी !'

'देख आया, हुजूर।'

'मैं लिखे दे रहा हूँ।'

लछमनसिंह लिखाई-पढ़ाई में महापंडित थे। ये वकील रखते थे। वकील ने दूलन को हल-बैल खरीदने के लिए किश्तों में कर्ज, खाद और बीज पाने के क़ायदों के बारे में कैथी हिन्दी में एक बहुत जबरदस्त अर्जी लिख दी। *बी०डी०ओ० तोहरी में रहते थे—तोहरी लछमनसिंह के गाँव तामाड़ी से* दूर तो था, लेकिन उनके धड़ पर एक सिर था। लछमन के साथ और हनुमान मिश्र के साथ कोई झगड़ा न करने को स्वयं एस०डी०ओ० ने उनसे कहा था।

तभी उन्होंने सब मान लिया। लँगोटी पहने हुए दूलन को बड़ी मुलायमियत से उन्होंने समझाया कि दूलन को बीज मिलेंगे, खाद भी मिलेगी। हल-बैल के रुपये एक बार में न मिलेंगे। थोड़ा रुपया पेशगी लेकर हल-बैल लाकर दिखाने पर बाक़ी रुपये मिलेंगे।

दूलन ने गाँव में आकर पहान से कहा, 'सरकार कानून करती है, लेकिन समझती कुछ नहीं है। लोग हल-बैल रुपये लेकर खरीदते हैं। किश्तों में रुपये लेकर कौन बेचता है ? अपना हल-बैल दो।'

वही हल-बैल दिखाकर दूलन ने रुपये लिये। एक-एक बरस के अन्तर पर। जिस बार रुपये लेता, उसी बार कहता, 'मर गया, हुजूर !'

वह रुपये लेता। खाद लेकर तोहरी में बेच आता। बिजावन का बोरा कंधे पर उठा कर लाता।

बिजावन वह खा डालता।

बिजावन का धान सिझा कर चावल बनाना छोटी बात नहीं। वही वह करता था। पहली ही बार बहू ने कहा, 'इतना बिजावन ! तुम्हारे पास

दिया। हुर-हुर-हुर करके कई भेडों को खेत मे घुसा दिया। उसके बाद घुमाव की राह से आकर सदर डेवढ़ी से जाकर लछ्मनसिंह से कहा, 'गरीब-परवर ! एक खत लिख दीजिये। अस्पताल में भरती होऊँगा। खांसी और छाती में दरद है।'

'फसल कटाई हो जाने पर खत दे दूंगा।'

'बहुत अच्छा, गरीबपरवर !'

फिर दूलन की छाती पर लाशो का बोझ बढ़ गया। अपने मन की गहराई को चिन्ता की खंती से खोदते हुए लौटा। करण और बुलाकी से यह जगह छोड़ देने को कहा।

क्या फसल कट जाने पर करण और बुलाकी का साथी बनकर कोई आयेगा ?

धान की कटाई चलने लगी। बहुत बहस के बाद ढाई रुपया रोज और जलपान ठीक हुआ। घोड़े पर चढ़कर लछ्मन खुद देखभाल करता था। कायदे के मुताबिक पुलिस देख गयी कि धान शान्तिपूर्वक काटे जा रहे हैं। सात दिनो पर सबको मजदूरी मिली।

चैन की सांस लेकर एस० डी० ओ० पुलिस लेकर लौट गये।

आठ दिनो के बाद आंधी आयी। बाहर के मजूरों को लेकर लछ्मनसिंह धान कटवा रहा था। अशरफी और दूसरे लोग दपसट, डर और ज़िद मे मन-ही-मन खफा थे।

'आप यह नहीं कर सकते।'

'कौन कहता है, नहीं कर सकता ? कर तो रहा हूं। कुत्ते के बच्चो, देख लो, कर रहा हूँ।'

'लेकिन...'

'फसल काटने दी, मजूरी दी। बस—खेल खतम !'

मारने को तैयार अशरफी आदि को देखकर बाहरी मजदूरो ने हँसुए रोक दिये और वे एक जगह इकट्ठा हो गये। गोली की आवाज हुई। बाहरी मजदूर भाग खड़े हुए। फिर गोली की आवाज हुई।

गोली से कितनी लाशें गिरी, उसका हिसाब न था। दूलन के हिसाब से ग्यारह थी। लछ्मनसिंह और पुलिस के अनुसार सात थी। अशरफी

कितनी जमीन है ?'

'वह जमीन नापने से नापी नही जा सकती।'

'ऐसी क्या है ?'

'हमारा पेट। भूख की क्या माप होती है ? पेट की जमीन बढती रहती है। उस भुतही जमीन पर जाकर धान बोऊँगा ? तू पागल है !'

'क्या करोगे ?'

'सिझा—कूटकर खायेंगे।'

'बिजावन खाकर मरना है ?'

'इतनी चीजो से नही मरे। अकाल मे कितने चूहे खाये। बिजावन खाकर मर जायेंगे ? मरने पर पता तो चलेगा कि धान का भात खाकर मरे। स्वर्ग जायेंगे।'

एक बार बिजावन का भात खाने पर ही धतुआ की माँ की समझ में आया कि इससे अधिक मीठी चीज उसने जिन्दगी में नही खायी।

अच्छे भोजन की बात वह गर्व के साथ गाँव में कहती फिरी। गाँव मे ऐसी कौन-सी सधवा है जो कह सके कि उसके मरद के पास इतनी अकल है कि ऐसी होशियारी से गौरमेन को बुद्धू बनाकर बिजावन का भात परिवार को खिलाये ?

गाँव के सब लोग बहुत खुश हुए। गौरमेन ने उनकी किसी दिन कोई देखभाल नही की। गौरमेन के बी०डी०ओ० ने उनको कभी खेती में मदद नही दी। गौरमेन के बुनियादी स्कूल में उनके बच्चे कभी घुस नहीं पाते। लछमनसिंह या दैतारीसिंह उनकी ओर बन्दूक तानकर खुराकी पर या चार आना रोज पर फसल कटा लेते। इसको लेकर बडा तनाव चल रहा है, क्योंकि पास के ब्लॉक के गंजू-दुसाध-धोबी लोगो को लात और भात दोनों मिलते है। आठ आना रोज। पच्चीस पैसे बढाने के लिए गाँव वाले बहुत यत्नशील है। सब जानकर भी शोर करने पर एस०डी०ओ० पुलिस लेकर आने पर जानवरो को ही पकड ले जाते। लछमनसिंह या दैतारी से कुछ न कहते।

गौरमेन लछमनसिंह की थी। गौरमेन लछमनसिंह, दैतारीसिंह, हनुमान मिश्र की थी। ऐसी गौरमेन को जो बुद्धू बनाता है वह अगर दूलन

का बाप बिलकुल निपूता हो गया। दो बेटे—मोहर और अशरफ़ी, दोनों ग़ायब थे। चामा गाँव के महुअन कोरी और बुलहिया के परम धोबी का पता नहीं चला। घर-घर रोना मच गया। एम० डी० ओ० के आने पर उनके पैरों पर मरे और लापता लोगों के बाप-माँ-पत्नी-लड़के-लड़कियाँ लोटने लगे। एस० डी० ओ० का चेहरा पत्थर-सा कठोर था। लछमनसिंह के ख़िलाफ़ पुलिस-केस करेंगे—ऐसा गाँव वालों से कहा। रिपोर्टरों में सब बता रहे थे, घूम-घूम कर दिखा रहे थे। वारंट न आने तक लछमनसिंह इज़ नॉट टु लीव होम।

और चाँदनी रात में, ठंडी हवा में, मधुमय परिवेश में लछमनसिंह आता है। इस अचल में सभी पैटर्निस्टिक—पितृभक्त—हैं, और बड़ा पशु चौपाया घोड़ा है। चार घोड़े चार लाशें लाते हैं। इस बार दूलन के साथ लछमन के नौकरों ने भी हाथ लगाये। बहुत गहरे गड्ढे की ज़रूरत है। ज़मीन बरसात के पानी और शरत के पाले से मुलायम है। चार लाशें झपाझप डाल दी गयीं। दूलन के कलेजे का भारी बोझ और भी भारी हो गया।

दूलन और भी अजीब आदमी बन गया। बी० डी० ऑफ़िस से झगड़ा कर और भी बीज ले आया। हल-बैल के रुपये लाया। उसके बाद एक महीना बीतते-न-बीतते कई टेढ़े-मेढ़े पेड़ों को देखकर सांत्वना मिली। बहुत चटकीले, बहुत हरे कई पेड़ भारत की आपातकालीन स्थिति में दक्षिण-पूर्व बिहार के एक उपेक्षित, मानहीन अचल में खेतमजूर के काम में हरिजनों के नीरव दस्तावेज़ बनकर प्रतिदिन सूर्य को प्रणाम करते। लछमन बेकसूर छूट गया। आपात स्थिति थी। खेतमजूरों को भड़काने और उत्तेजित करने के लिए एस० डी० ओ० डिमोट—पदच्युत—हुए। लछमन और दूसरे ज़मीदार-महाजनों ने हनुमान मिश्र के मंदिर में बहुत ही धूमधाम से पूजा की। चाँदी के एक सौ आठ बिल्व-पत्र चढ़ाये और घोषणा की कि जो रुपया-रुपया मजूरी पर, बिना जलपान के फसल काटें वहीं कुत्तों और कुतियों के बच्चे आयें। नहीं तो बाहरी किसान आयेंगे। आपातकाल से सब जगह हाय-हाय मची हुई थी। कांग्रेसी गुंडों ने बाहरी किसान ले आने का ठेका ले लिया है। इस बार खेल और भी बड़े मज़े का है। हर एक की मज़दूरी में से इस ठेकेदार को चार आना प्रतिदिन देना होगा। फिर वे ठेकेदार के

गंजू है तो गाँव के लोग उसकी तारीफ़ करेंगे ही।

धरती कामधेनु की तरह दूलन को साल में छह सौ रुपये देती। लेकिन फिर भी दूलन घर में ही सोता रहता, बरामदे के कोने में, मचान पर, धतुआ की माँ के पास। धतुआ की माँ को खाँसी और हँफनी थी। मचान के नीचे बड़ी-सी बकरी बाँधकर सोती। दोनों कोठरियों में दो लड़के रहते। बहू बाल-बच्चों को लेकर रहती। गेहूँ, मक्का, मड़ुआ के बोरे, हँडिया और घड़े, ईंधन—सब दोनों कोठरियों में रहता। मगर उस जमीन की आमदनी से हमेशा तो काम नहीं चलता था। तब बाप और दोनों बेटे मेहनत करते, आलू की खोज में जंगल जाते, लोहरी जाकर माल ढोते, मिश्रजी के फलों के बगीचे में जाते, औरों की ही तरह।

इसी बीच तामाड़ी का करण दुसाध चला आया। वह बहुत ही शान-दार आदमी था। लछमन के खेत में मजूरी करता था। गरीब-परवर से मजूरी की लड़ाई करके जेल चला गया। जेल में, हजारी-बाग जेल में उसे और बिहार के बहुतेरे कैदियों का साथ मिला।

वे 'दुसाध' होने के कारण उससे घृणा नहीं करते थे। लड़ाकू होने से उसका सम्मान करते थे। उसे ताज्जुब के साथ पता चला कि किसी संगठन की कोई मदद नहीं। दूर-दूर तक घूमकर उन दो सौ किसानों ने अत्यन्त प्रबल लछमनसिंह के पके गेहूँ जला दिये थे। उन्होंने उसे समझाया कि इस तरह लड़ाई करना सबसे जरूरी है। लड़ाई के लिए लड़ाई करना। इसके लिए अपने केंद्र-बिंदु पर रह कर लड़ाई करनी चाहिए।

जो कहते उनको सजाएँ मिलतीं, वे बीच-बीच में अनशन करते। तब अधिकारी वर्ग उनकी पिटाई करता। पीटते-पीटते कितनों ही को मार डाला जाता। फिर भी, उसके बाद भी वे करण से कहते, 'लड़ाकू, तुमने ठीक काम किया, लड़ना कभी मत भूलना।'

इसका परिणाम हुआ कि करण दुसाध के मन का स्तरभेद काफ़ी टूट गया था। जिस करण ने लछमनसिंह की हालत मुर्दे की-सी कर दी थी उसी करण ने लड़ाई की बात सोची थी, बाहर आने के बाद सबको बताया कि लड़ाई की परिस्थिति आज भी है। वह हालत को संगीन बना देगा।

'गुस्से में आ जाऊँगा, तब गोली खाऊँगा, फिर जेल क्यों जाऊँगा?

आदमी हो या न हो। इन गुंडों ने कहा है कि वंदूक लेकर वे फ़सल काट लेंगे और जो कोई टें-में करेगा उसकी देह पर पेट्रोल छिड़क आग लगा कर इस अंचल से बदमाशी हमेशा के लिए खतम हो जायेगी।

दूलन कलेजे पर पत्थर रखे घूमता-फिरता और धतुआ-लटुआ के चेहरों की ओर देख कर सोचता कि लड़कों को लेकर भाग जाये! लेकिन जायेगा कहाँ? दक्खिन-पूरब बिहार में दूलन गंजू कहाँ सुरक्षित है? बाहर जाने पर कहाँ लछमनसिंह नहीं है?

होली के दिन उसने कान लगाकर गाना भी नहीं सुना। लेकिन अचानक होली का कोई बढ़िया गाना सुनकर होली का शोर रुक गया। महुआ पीकर नशे में धतुआ ढुइला बजा आँखें बंद कर गा रहा था :

कहाँ गइल करण?
और बुलाकी कहाँ?
कोई उनके पता देत काहे नही?
ओह पुलिस क खाते माँ हेराय गयन।
कहाँ अशरफी हज्जाम?
ओकर भाई मोहर कहाँ?
महुवन और पारस कहाँ?
कोई उनके पता देत काहे नहीं?
ओह पुलिस क खाता माँ हेराय गयन।
करण लड़ेला पच्चीस पइसा क लड़ाई।
अशरफी लड़ेला पाँच रुपैया चालिस पैसा क लड़ाई
बुलाकी औं मोहर
दादा लोगन के साथ बढ़ गयल
महुवन जानत नसा महुआ बनाय के
पारस जानत होली के दिन नाचें,
ओं सब पुलिस क खाता माँ हेराय गयन।

गाना समाप्त हुआ। सब खामोश थे। होली का रंग बिगड़ गया। होली का नशा उतर गया। दूलन उठ खड़ा हुआ।

'किसने यह गाना बनाया?'

पहले से ही संगठन करूँगा। उससे सब कुछ कह-सुन लूँगा। फसल काटने के समय पुलिस को मौजूद रहने को कहूँगा। हमारी माँग तो बहुत ही मामूली है। हम हरिजन और आदिवासी है। इस जंगली जगह में हमे अच्छी मजूरी नही मिलेगी। आठ आने की लड़ाई करूँगा। आदमी, औरत, छोटे-छोटे लडके-लड़कियाँ—सबको आठ-आठ आने दो। वह चार आना दे रहा है। चार आने ज्यादा पाने के लिए यह हमारी 'पच्चीस-पैसों की लडाई' है।'

ख़बर सुनते ही दूलन ने करण को फ़ुरुडा बुलाया। उसका मन शक्की था। अपनी उसी ज़मीन के किनारे बैठकर लोगों से बात करता। करण दुसाध उम्र में अधेड, बीमार-सा, छोटा-मोटा आदमी था। हजारीबाग मे कैदियो के साथ दो बरस रहने से उसका व्यक्तित्व नया हो गया था।

'जात-पाँत सब झूठी बातें है। छूतछात बरामन और बड़े आदमियों की बनायी हुई होती है।'

यह बात कहकर वह दूलन को घबराहट में डाल देता है। दूलन पलक झपकते मन-ही-मन घबरा जाता है। यों तो वह घाघ आदमी है। कहता है, 'वह तो लिखे-पढे बाबू लोग कहते ही रहते है। अब काम की बात सुनो। लछमनसिंह, बी०डी०ओ०, एस०डी०ओ० और दारोगा—चारों गिलास के यार हैं। पहले तू तोहरी के आदिवासी दफ्तर और हरिजन सेवा सघ मे जा। उन्हे बता दे। वे भी तेरे साथ थाना—एस०डी०ओ० करें।'

'क्यों ? हम क्या कमजोर है ?'

'बहुत कमजोर, करण ! गलती मत करना। सभी सरकारी आदमी लछमन की मदद करेंगे। उसके बदूक छोडने पर नही देखेंगे, तेरे लाठी उठाने पर पकड़ लेंगे। हरिजन सेवा सघ में मदनलालजी है। सच्चा आदमी है। सबको पहचानता है। साथ में रखना।'

करण ने बात मान ली। मदनलाल का वोटों का पुल बहुत ही ज़ोरदार था। इसलिए एस०डी०ओ० और दारोगा ने पहले लछमन के साथ गुप्त बैठक की। बाद में मदनलाल की बात पर राजी हुए।

बडे ही निर्विघ्न रूप से भुट्टे काटना और उठाना सपन्न हुआ। आठ आना मजूरी मिली। करण दुसाध हीरो बन गया। परियों की कहानी

'बाबा, मैंने।'

दूलन अचानक फूट-फूट कर रो पड़ा। बोला, 'यह गाना भूल जा। तू भी पुलिस के खाते में खो जायेगा।'

दूलन अपनी ज़मीन पर चला आया। ज़मीन के बीच जाकर बहुत धीमी आवाज में फुसफुसा कर बोला, 'तुम लोग गीत बन गये। सुना ? गीत बन गये। मेरे लड़के धतुआ के बनाये गीत में आ गये। गान बन गये। गान बन गये, धान नहीं बने, बने नहीं चीना घास—अब हमारे कलेजे से उतर जा रे, अब मुझसे नही हो सकता।'

होलपूर्णिमा—होली—के चांद के आलोक में पेड़ के चटक पत्ते और पुटुस फूलों के गुच्छे हँस-हँस कर लोट-पोट हो गये। ऐसी मज़ेदार बात उन्होंने कभी नहीं सुनी थी। दूलन के कलेजे के नीचे धतुआ के लिए अज्ञात भय था। मचान पर चढ़ते ही उसने धतुआ का गाना सुना। अब सब लोग गा रहे थे। लेकिन वे पुलिस के खाते में खो नहीं गये। दूलन किसी दिन सारी बातें नहीं बता सकेगा। लछमनसिंह का पंजा जो था।

एक दिन आपातकाल समाप्त हुआ।

एक दिन भारत के मुक्ति-सूर्य मजा लेने के लिए गद्दी से नीचे उतरे और कुछ देर साँस लेकर फिर गद्दी पर चढ़ने के लिए भाग-दौड़ करने लगे। एक दिन फिर लछमन की फ़सल पक कर खड़ी हुई।

दो बरस अकाल-सूखा के कारण खेती न होने के बाद इस बरस धान निकले। दूर-दूर तक धान के खेतों में मचान लग गये। पखेरू रात-दिन पके धानों पर आकर पड़ते।

दो बरस पहले जो कांग्रेसी और गुंडे और खेतमजूर जमा करने वाले ठेकेदार थे—वे ही इस बार नाम से 'कांग्रेसी और गुंडे' दो डॉक्टरेट हटा कर खेतमजूर देने वाले ठेकेदार बनकर दिखायी पड़े। उनके साथ उनकी ही तरह टेरीक्लाय-शोभित, काला चश्मा लगाये, बंदूक लिये चार साथी थे। अमिताभ बच्चन की आवाज में इन भाड़े के टट्टू लोगों ने लछमन से कहा कि 'अब आपके दिन खतम हो गये। स्ट्राइक तोड़ना, खेतमजूर इकट्ठा करना और फसल कटाना—सारा कुछ पेशेवर लोगों के हाथों में चला गया है। दक्षिण-पूर्व बिहार में हम पैसे पर काम करते हैं—मर्सिनरी सेवा।

सच हुई।

उसके बाद लछमन ने अचानक दूलन से कहा, 'कल जमीन पर रहना। किसी को अगर पता चलेगा कि मैंने यह बात कही, तो तेरी लाश गिरा दूंगा।'

जब रात बीती और नया दिन निकला तो एस०डी०ओ० राँची चले गये और दारोगा डाकुओं को पकड़ने दूर बुरुडिहा निकल गये।

तीसरा पहर बीतते-न-बीतते, अस्त होते सूर्य की आभा में लछमनसिंह ने दूसरे राजपूत भाइयों को लेकर तामाडी के दुसाधपाडा पर हमला कर दिया।

आग जलने लगी, उसमें आदमी जल गये, घर ढह गये।

रात में दूलन के सामने नवोदित चन्द्रमा ने एक अपार्थिव नीरव चल-चित्र उपस्थित किया। घोड़े की पीठ पर लछमनसिंह था। दो घोडे आस-पास लिये, उनकी पीठों पर, मचान पर कई लाशें थी। लछमन के बहुत-से नौकर थे।

करण और उसके निरीह भाई बुलाकी की लाशें, लछमन की बदूक के आतंक से दूलन जमीन मे गाडता है। डर के मारे सिर नीचा किये हुए कुदाल से गहरा गड्ढा खोदता है। लछमन मेड़ पर खड़ा देखता और पान चबाता रहता है। उसके बाद कहता है, 'एक भी बात कही मुँह से निकाली तो कुत्ते, करण दुसाध बना दूंगा। सियारो-लकडबग्घो का ठीक नही, लाश निकाल लें। कल ही यहाँ चबूतरा बना देना। रात मे रहना। करण ने आग लगायी थी न, मैं राजपूत का बच्चा हूँ, अब से लाशें गिरेंगी।' दूलन सिर हिलाता है। जिन्दा रहने के लिए कहता है, जैसा वह चाहें वैसा ही होगा।

दूसरे दिन पुलिस आयी। बहुत शोक हुआ। अन्त मे पता चला कि घटना के समय करण वहाँ न था। रिपोर्टर लोग किसी तरह 'ए ट्रू हरिजन स्टोरी' लिखने मे समर्थ न हुए। लछमन के विरुद्ध किसी ने कोई बात नही कही। आग लगाने के अपराध मे लछमन के एक नौकर को कुछ दिनों के लिए जेल की सजा हो गयी। बेघर परिवारो को सरकार से गृह-निर्माण के लिए थोडी-बहुत आर्थिक सहायता मिली।

तभी से दूलन उस जमीन पर रहता है। पहले यह पागलपन समझा

आप न चाहे तो भी हम सेवा देंगे। पाँच हजार रुपये पेशगी पर।'

'पाँच हजार ?'

'नही तो सरकारी मजदूरी दीजिये।'

'न, न।'

'सरकारी मजदूरी न देकर नफ़ा कमायेंगे अस्सी हजार ! और पाँच हजार नही देंगे ?'

'दूंगा।'

'बस। गाव के नाम, मजदूरों के नाम बताइये। कोई हंगामा करने वाला है ?'

'न।'

'ठीक है। हमें मक्खनसिंह और रामलगनसिंह को भी सर्विस देना होगा। मैं ठीक वक्त पर चला आऊँगा। और हाँ, उन्हे मजूरी देंगे सवा रुपया। हमारा बट्टा होगा चार आना।'

'रुपया, रुपया !'

'सवा रुपया ! मैं, अमरनाथ मिश्र, ज्यादा बात नही करता हूँ।'

'टाहाड़ के मिश्रजी के आप कौन लगते है ?'

'भतीजा। मेरी सर्विस की पहली पूँजी चाचाजी ने ही दी थी।' इसी तरह सब बात हो गयी। बाद मे हनुमान मिश्र ने लछमनसिंह से कहा, 'हाँ, हाँ, मेरा ही भतीजा है। लडके को सर्फ़ेस कोलियरी ख़रीद दी थी, कहा कि तुझे भी दूँ ? बड़ा इलमदार लडका है। उसकी सर्विस इलेक्शन के कैंडिडेट लेते हैं, हडताली कारखाने के मालिक लेते है। वह सर्फ़ेस कोलियरी मे लेबर जुटाता है। बड़ा इलमदार है। तीन शादियाँ की हैं। तीन टाउन मे तीन को रखा है। सबको मकान दे दिया है। पिछली सरकार में उसकी बड़ी कदर थी। मेरा एक भी लड़का उसकी तरह इलमदार न हुआ।'

लछमनसिंह बहुत ही अक्खड राजपूत था। अपने राज्य मे सजय था। लेकिन लछमन भी समझता था कि भाडे के मिसिनरी जब अपनी सर्विस थोपे तो उन्हें भी मान लेना होगा। नही तो लछमन मक्खन और रामलगन के आगे बेवकूफ़ बनेगा।

धानो की कटाई शुरू हुई। बाहरी मजूर नही, धतुआ आदि खुद ही

गया और लडकों ने उसे रोकने की कोशिश की। इस अवस्था मे कोई बात दूलन के कानों मे नही गयी। 'क्या हुआ?' पूछने पर वह ओंठ दबाकर लाल-लाल आँखो से देखता। उसके बाद सिर हिलाकर हाथ का डडा उठाकर कहता, 'बात न कर, घतुआ! तेरा सर फोड़ दूँगा।'

उसके मन मे बडा भारी विस्फोट हुआ, वह धँस गया, स्तर बदल गया। सीधा, लछमन के निकट ऐसा सीधा था? दूलन जानता था कि इसान के लिए और आचार-नियमों की तरह ही मृत्यु भी है। किन्तु लछमनसिंह ने यह प्रमाणित कर दिया कि यह सब पुरानी और चली आ रही रीति-नीति कैसी निकम्मी चीज़ें हैं! कैसी सीधी बात है! घोडे की पीठ पर दो लाशें और निश्चय ही तामाडी के दुसाधों की ऐन नाक के नीचे, बडे अक्खडपन से लाशें आयी हैं। लछमन को मालूम है कि लाशों को लाने के मामले को छिपाने की जरूरत नही है। जिन्होंने देखा है, वे कुछ न कहेंगे। उन्होंने लछमन की खामोश और तीखी नज़रों में यह परवाना पढा था—जो मुँह खोलेगा वह भी लाश बनेगा। ऐसा पहले भी हुआ था। फिर होगा। आसमान में आर्त और मरते हुओं का चीत्कार भरकर बीच-बीच में हरिजन और अछूतों को सरकारी कानून समझा दिया जाता था—अफसरों की तैनाती और सरकारी घोषणा कुछ नहीं होती। राजपूत राजपूत ही रहेगा, ब्राह्मण ब्राह्मण ही रहेगा। दुसाध-चमार-गजू-धोबी—ये ब्राह्मण, कायस्थ, राजपूत, भुईंहार, कुर्मियों के नीचे हैं। राजपूत या ब्राह्मण या कायस्थ या भुईंहार या यादव या कुर्मी स्थान-विशेष से हरिजनों की ही तरह है, हरिजन मे भी गरीब हो सकते हैं। किन्तु जाति के कारण उन्हें जलती आग मे फेंका नही जाता। खांडव बन के जलने मे कुछ अरण्यवासी शस्य कृष्णांग के भक्षण से अग्निदेव अछूतों के नर-मांस पर आज भी आसक्त है।

सारी बातों ने दूलन के मन में उथल-पुथल मचा दी। इसके पहले उसमें ऊपरी धूर्तता थी। जिन्दा रहने के लिए। अब उसे मन के नीचे दो लाशें छिपाकर रखना पडती। लाशें मन के नीचे सडती रहती। जमीन मे मिट्टी के नीचे गड़े करण और बुलाकी के मांस का भार हलका पड़कर क्रमश: भार-रहित हो गया, लेकिन दूलन के मन के ससार का वजन बढ़ने लगा। दूलन का चेहरा विवर्ण हो गया, मुँह से बोली और भी कम हो गयी। वह किसी

काट रहे थे। सवा रुपया रोज के ऊपर जलपान के लिए मकई का सत्तू-मिर्चा-नमक। धतुआ की माँ दोनों लड़कों के लिए जंगली करौंदों का अचार साथ में दे देती थी।

दूलन मचान पर बैठा रहता था। बैठा रहता था किसी की प्रतीक्षा में। धान कटाई चल रही थी। औरतें गीत गाते हुए धान काट रही थीं। दूर से उनका गाना लोरी के गीत-सा एकरस सुनायी पड़ता। लेकिन दूलन को नींद न आती।

'के छीन लिहिस दूलन क नींद ?
नींद पुलिस क खाता माँ खोइ गयल।'

धतुआ और लटुआ लौटानी तक दूलन के घर रहते। उसके बाद जमीन पर आये। बरसात में मेड़ पर से बहा पानी पाकर और शरद् के पाले से भीगकर नम मिट्टी में जंगली पेड़ और भी भरभरा कर निकल पड़े। पूटुस फूल से पेड़ फटा पड़ रहा था। लेकिन दूलन की आँखों में नींद नहीं थी।

मजूरी चुकाने वाले दिन अपेक्षित गड़बड़ी हुई। अमरनाथ ने उस दिन अपने हिस्से की माँग की। लछमन बोला, 'कोई खूनखराबी न करना। मेरे साथ बट्टा काट लेने की बात नही है। उनसे फैसला कर लो।'

'कितने लोगों के साथ ?' अमरनाथ लकड़बग्घे की तरह हँसा, 'आप दे दीजिये।'

सबसे अधिक बिगड़ उठा धतुआ—दूलन का लड़का। लछमनसिंह बट्टे के मामले में पड़ना नहीं चाहता था। वह अछूतों को बंदूक उठाकर ही काबू में लाना जानता था। इस एक आदमी को वह गोली नहीं मारना चाहता था। दूलन उसके लिए काम का था।

अमरनाथ बोला, 'कुत्तों से मैं बात करूँ ? पाँच सौ आदमियों के सवा-रुपये से रोजाना चवन्नी के हिसाब से पंद्रह दिनों में होते हैं अठारह सौ पचहत्तर रुपये। दे दीजिये।'

'न हुजूर ! हम नहीं देंगे।' धतुआ चिल्ला पड़ा। लछमन ने गहरी साँस ली। उसे फिर पैटर्निस्टिक—पिता के समान—बनना पड़ेगा। फिर बंदूक उठानी पड़ेगी। करण गया, अशरफी आया, अशरफी गया, अब

से वात न कर पाता। वरावर मन पर एक बड़ा भार ढोता रहता। बांधकर मार खानी पड़ती। मुंह खोलने पर कुरुडा की दुसाधपट्टी में भी आग लगेगी, हवा में राख उड़ेगी, जलते मांस की दुर्गन्ध फैलेगी।

धीरे-धीरे दिन बीतते गये। करण और बुलाकी गायव हो गये, और सब लाचारी में उन्हें भूल गये। तोहरी से इधर बुरुडिहा, उधर फूलझर तक रेल-पथ बैठाया गया। आदिवासी और हरिजनों पर अत्याचार कम हुए—इस बारे में सभी जांच और इन्तजाम करने के लिए, केस तैयारी कर अदालत में पेश करने के लिए थाने और एस० डी० ओ० को अंचल का ध्यान रखकर विशेष क्षमता दी गयी। ढाई गांव पर पचायती कुआं खोदा गया। ढाई नीच जात और आदिवासी गाँव था। इस प्रकार उस अंचल ने लँगड़े पैरों से आधुनिक समय के निकट आने का प्रयत्न किया।

उसका परिणाम हुआ कि लछमनसिंह का प्रताप और भी अधिक हो गया। सरकारी आदेश उड़ाकर वह खेत-मजूरों को चालीस पैसे मजूरी देता था। उसने हनुमान मिश्र के मन्दिर में शिव के मस्तक पर सोने का गोखरू साँप बनवा दिया। बी० डी० ओ० को स्कूटर, दारोगा को ट्रांजिस्टर ख़रीद दिया और करण और बुलाकी की निजी ज़मीन पुराने कर्ज़ के बदले में दख़ल कर ली।

इस व्यवस्था से सभी सतुष्ट थे। लेकिन अचानक खेत-मजूरों के बारे में सरकारी सर्कुलर आया और कई नये एस० डी० ओ० आये। ये वामपथी अभियुक्त कहे जाते थे और इन्हें अन्तिम दंड के रूप में सस्पेंड करने की प्रशासन की जैसी शुभेच्छा थी, उसके मुताबिक फसल कटने से डेढ़ महीना पहले इनकी बदली तोहरी कर दी गयी।

तोहरी अचल के खेत-मजूर वर्ग हरिजन और आदिवासी थे। जमीन के मालिक, ज़मींदार और महाजन ऊँची जाति के थे। अचल की विशेष समस्या थी—मालिकों पर खेत-मजूरों का गहरा अविश्वास। उसी कारण से खेती में मनचाही उन्नति नहीं हो रही थी और प्रति-व्यक्ति आय बढ़ नहीं रही थी। आय-व्यय-स्वास्थ्य-शिक्षा-सामाजिक चेतना—सभी सब-नार्मल स्तर पर रुकी हुई थी। यहाँ वस्तुतः आवश्यकता थी प्रतिभावान, सहानुभूतिपरक और मानवीय अफसर की।

धतुआ।

'पंद्रह दिन के पंद्रह रुपये लेकर घर जाऊँगा? अठारह रुपये बारह आने नहीं मिलेंगे? ऐसी बात तो नहीं हुई थी। हमने ज्यादा दिन तो नहीं लगाये?'

'धतुआ, समझ कर बात कर।'

लछमनसिंह ने अमरनाथ को रुपये दिये। उसके बाद बोला, 'बात मत कर, धतुआ! चला जा।'

करण हक जताने वाला आदमी था, अशरफी अक्खड़ था। धतुआ को कभी यह पता न था कि उनकी मजूरी काट कर अमरनाथ को बट्टा देने के मामले में इस तरह ज़िद के साथ हक बता सकेगा। बाहर निकल कर वह बोला, 'तुम जाओ! मैं फैसला करके आऊँगा।'

वह फिर लछमनसिंह के सामने आया। बोला, 'उन पच्चीस पैसों का हिसाब चुकाये बिना हम कल से धान नहीं काटेंगे। अच्छे खेत रह गये हैं। हम खुद नहीं काटेंगे और औरों को काटने नहीं देंगे।'

'पुलिस अपना हिस्सा लेने आयी थी। इसलिए उस वक्त बच गया, धतुआ!'

'पुलिस से आप डरते हैं?'

धतुआ चला गया, लेकिन उसकी आख़िरी बात लछमन को बुरी लग गयी। फिर भी धतुआ दूलन का बेटा था और दूलन लछमन के बहुत ही छिपाने लायक़ काम में मददगार था, इसलिए लछमन छोटे लोगों के लिए एक दिन टाल गया।

दूसरे दिन सब लोग आये और किसी ने काम न किया। लछमन बेकार ही गुस्से में फुफकारता रहा। किराये के लोगों का पता न था। वे मक्खन-सिंह और रामलगनसिंह को मदद देने गये थे। फ़ौरन बाहर की लेबर का मिलना भी आसान न था। शाम को अँधेरा होने पर लछमन ने अपने साथियों को जरूरी निर्देश दिये। धमकाने से अगर काम हो सकता है तो गोली मत चलाओ। पके धानों में से होकर लछमन के नौकर घोड़े पर सवार होकर चले। चंबल के डाकुओं का सिनेमा देख-देखकर वे भी ख़ाकी यूनीफ़ार्म पहने हुए थे। वे आगे बढ़कर आये। ये लोग उठ खड़े हुए और

एस० डी० ओ० समझ गये कि इस प्रकार उन्हें दड दिया गया है। उन्होंने ससुर से कहा, 'आपकी जीत हुई। बैंक का काम देखिये। ऐग्रो-इकोनॉमिक्स के छात्र है, मिल जाये तो जा सकते हैं। नही तो जहाँ भेज रहे है, वहाँ रहने पर आपकी एकमात्र लड़की अवश्य विधवा हो जायेगी।'

दूसरे काम का ठिकाना कर आने पर एस० डी० ओ० ने खेत-मजूरो मे कहा कि तुम पाँच रुपये अस्सी पैसे मजूरी पाने के अधिकारी हो। इस बात को उन्होंने ज़मीदारों को भी बताया। लछमनसिंह की जमीनें, उपज और खेत-मजूर विस्तृत तामाडी-बुरुडिहा-कुरुडा-हेसाडी-चामा-ढाई—सारे गाँवों मे थे। अशरफी महतो नाम का बुरुडिहा के गाँव के मुखिया का लडका था। करण की बात उसे याद थी। तीन बरस मे भी भूला न था। लेकिन एस० डी० ओ० अब भला आदमी था। तब वह क्यों चालीस पैसा पेट-भत्ता पर फ़सल काटें? पाँच रुपया अस्सी पैसा? पेट-भत्ता नही चाहिए। पाँच रुपया चालीस पैसा पूरी मजूरी दें।

कभी जिस तरह करण को बड़ी कोशिश से समझाया था, उसी तरह आज दूलन अशरफी को भी समझाने लगा। बोला, 'करण शोर बहुत मचाता था। उससे तामाड़ी की दुसाधपट्टी जल गयी।'

'करण कहाँ है? बुलाकी कहाँ है?'

'पता नही।'

'जिन्दा नही है?'

'ऐसी बात क्यों कह रहा है?'

'मारकर जगल मे गड्ढे मे फेंक दिया है?'

'पता नही। पर हाकिम को सामने समझकर काम करना।'

'करूँगा।'

'जिससे हाकिम बाद मे मदत दे। उस बार मजूरी दी। बाद मे आग लगा दी।'

'कहूँगा।'

हर अचल मे हर सघर्ष उस अचल की विशेषता के अनुसार होता है। लछमनसिंह कहता है, 'इतना नही दूगा। दो रुपया लो, जलपान लो।'

'मजूरी दीजिये, गरीबपरवर, हुजूर!'

राह देखने लगे।

'कुत्ते के वच्चो और कुतिया के वच्चो, सुनो !'

'तू है कुत्ता का वच्चा।'

कौन चिल्लाकर वोला ! उन्होंने वंदूकें उठायी। वे आश्चर्यजनक फुर्ती से खेत मे घुस गये। धानों की ओट मे छिप गये। कुछ देर तक बातों के मिसाइल—अस्त्र—चलते रहे। उसके बाद गोली अनिवार्य हो गयी। कई वार। धान खाता छोड़ कर चिड़ियों के झुंड आसमान मे उड गये। खेत में किसी के गरारे की-सी आवाज हुई। पहचानी आवाज थी।

उसके बाद धारदार हँसुए और दरांती घोड़ों के पैरों पर लगे। घोड़े सवार लिये-दिये भागे। वे निकल कर भागे। लटुआ और परम तोहरी की ओर भागे।

दूलन बहुत ही अधिक कष्टकर प्रतीक्षा करता रहा। शाम बीत जाने पर, रात होने पर लटुआ आया।

'धतुआ कहाँ है ?'

'मैंने तो नहीं देखा। दादा आये नहीं ? मै तो थाने गया था।'

'धतुआ कहाँ है ?'

'हम पुलिस ले आये है। पुलिस यहाँ भी आयेगी। वही एस० डी० ओ० है, बाबा ! वह फिर आ गया है। वह भी आयेगा।'

'धतुआ !'

दूलन के कलेजे के भीतर लाशें क्यों हिल रही हैं ? किसके लिए जगह बना रही है ? किसके लिए ? दूलन सब समझता है और उठ खड़ा होता है।

'कहाँ जा रहे हो ?'

'जमीन पर।'

'लड़का आया नही, तुम, तुम पागल हो या पिसाच ?'

'चुप रह, हरामजादी !'

दूलन निकला, भागता चला। धतुआ का गीत, धतुआ का गीत।

'कहाँ गयल करण ?
बुलाकी कहाँ ?
ओह पुलिस के खाता माँ खोय गयन।'

'दूंगा।'

लछमनसिंह की आँखें बहुत कोमल और दयालु हो गयी। वह बोला, 'सोच लूं! तुम भी सोचो! जो उचित है, वह तो गधा भी समझता है। पर जानते हो? तुम तो एस० डी० ओ० की बात कहते हो? उनसे कहना, इस अंचल में मक्खनसिंह, दंतारीसिंह, रामलगनसिंह, हुजूरीप्रसाद महतो कोई नहीं देता। मैं अकेला मार खाऊँ?' अशरफ़ी डरते हुए पर ज़िद में हँसकर बोला, 'मार खायेंगे, हुजूर? आटे की चक्की आपकी है, आपका मकान कितनी दूर से दिखायी देता है। आप मार खायेंगे?'

हँसने को लछमनसिंह ने शोख हेकड़ी समझा और बोला, जो दो रुपये बताये सो आख़िरी है। जमीन रखकर हम सरकार की नज़रों में जैसे चोर बन गये है। तुम लोगों मे जिसकी जितनी जमीन है, उसके लिए सरकारी मदत मिलती है। मैंने अपनी जमीन दूलन को दी। वह हरामी खेती नही करता, और हर बरस बिजावन ले लेता है। जानवर! बिजावन खा जाता है। उसे छोड़ो। हमें कोई मदत मिलती है? खाद-बिजावन, फ़सल के कीड़ों को मारने की दवा—सब-कुछ मोल लेना पड़ता है। हमारी बात एस० डी० ओ० से कहो।'

अशरफ़ी ने दूलन से कहा, 'होशियार! चाचा, उस हरामी को पता है कि तुम खेती नही करते हो, फ़सल नही काटते हो।'

दूलन के दिल पर लाशो का भार और भी भारी हो गया। लछमनसिंह ने उससे कहा है कि उस जमीन पर बीज बोकर कई बरस दूलन ने खेती नही की है।

दूलन ने बड़े अफ़सोस में अशरफ़ी से चिन्ता के साथ कहा, 'उस पर विश्वास मत करना, बेटा! तोहार बाबा हमनी के धतुआ-लटुआ को जनम-काम का था।'

'नहीं चाचा!'

अशरफ़ी एस० डी० ओ० और लछमनसिंह के बीच बहुत चक्कर लगाता रहा। दूलन और भी उदास हो गया और किसी मुसीबत की आशंका से लड़के से चिढ़कर बोला, 'छोटे आदमी का लड़का छोटा ही रहता है। जमीन से बूढ़ा बाप जो कुछ लाता है वही खाता है। कोई और लड़का होता तो

भीगी-भीगी आँखें। हाथों में जल्ल था। तू मत खो जइयो धतुआ, मत खो जइयो। छितरे पेड पूटुम गाछ, तुम आज रात मत हँसना।

धतुआ है। धतुआ है।

लछमनसिंह है। एक और आदमी है। आदमी का चेहरा और आँखें खून से भरी है। लछमन उसे मार रहा है। लाठी मार रहा है। आदमी गिर पड़ता है।

ये दो है, घोड़े तीन हैं।

लछमन उनकी ओर देखता है। पास आता है, कहता है :

'दूलन ?'

'धतुआ ?'

'अफ़सोस, अफ़सोस दूलन ! मना किया तो भी इस जानवर ने गोली चला दी।'

लछमन फिर उस आदमी को लाठी मारता है। कहता है, 'गोली चलाने वाले गुंडे !'

'धतुआ ?'

'जमीन में।'

'कौन डाला ?'

'वही जानवर।'

'ओ ?'

'हाँ, किन्तु जबान मत खोलना, दूलन ! नही तो तेरी बहू, बेटा, बेटे की बहू, नाती—कोई नही बचेगा। और, और रुपये ले आना। तेरे लडके ने पुलिस बुलायी है। पुलिस को मैं खरीद लूँगा। लेकिन पता है, तेरा लडका होने से ही लटुआ को छोड दिया है। अपनी बंदूक की एक गोली भी तो आज नही खरच की। लटुआ को एक गोली से ढेर कर सकता था। किया नही।'

वे लोग चले गये। सात लाशें लेकर दूलन और न खड़ा रह सका। मेंड पर गिर पड़ा। जमीन पर लोट गया। जगली और नुकीले पत्तो के काँटों से घायल होते-होते लुढ़कते-लुढ़कते रुक गया।

इस बार हमेशा की तरह जाँच खतम नही हुई। एस०डी०ओ० ने

हस्तक्षेप किया। गोली चलाने वाले अमरनाथ और गुंडे जेल गये।

धतुआ फिर न लौटा।

दूलन सोचता-ही-सोचता रहता। अन्त में उसने पूरी तरह से पागल होने का फैसला किया। बैशाखी वर्षा पड़ते ही जमीन से एलो और पुटुस के पेड़ों का नाम-निशान मिटाने में लग गया।

'कहाँ गया ? भरी दुपहरी में ?' उसकी पत्नी खोज रही है। लटुआ की बहू बताती है, 'हँसुआ और खती लेकर ससुर जमीन पर गये हैं।'

'मना नहीं किया ?'

'मैं बात करती ?'

सारा रंज भूलकर पत्नी भागी। मेड़ पर चढ़कर चिल्लाने लगी, 'हाँ, तुम पागल हो गये हो ? वह जगल साफ करने चले हो ?'

'घर जा।'

'घर क्या जाऊँ ?'

'घर जा।'

वह रोते-रोते मुखिया के पास गयी। मुखिया ने आकर कहा, 'धतुआ आयेगा, दूलन ! लड़के के शोक में पागलपन मत कर। गरम लगेगा !'

दूलन बोला, 'घर जाओ, पहान ! तुम्हारा बेटा गायब हो गया है या मेरा ?'

'तेरा।'

'यह जमीन तुम्हारी है या मेरी ?'

'तेरी।'

'तब ? पागल हुआ तो हुआ, नहीं हुआ तो हुआ। साली जमीन को मैं देखूँगा।'

'तो लटुआ को बुला ले।'

'न। मैं अकेले सब करूँगा।'

खेती का काम किया नहीं था। लेकिन करने में उसका हाथ बहुत अच्छा था। यह मुखिया को याद आया। मुखिया ने दूलन की बहू से कहा, 'चल, घर चल। उसके मन में जो आये सो करे। तुझे तो तोहरी जाना होगा।'

होता, होता।'

'क्या उन्होंने रखा ? तू भी चली आयी।'

'जेठ धरम न रहने देता।'

'मिसरीलाल ने रहने दिया ?'

धौली के कलेजे में तीर चुभ गया। उसने फिर कुछ न कहा। रोते-रोते आँखों की पलकों की नमी सूख गयी। उसने दोनों पलकें पकड़कर आँखें बद कर ली।

जिस दिन से मिश्रीलाल चला गया, नीद नही आती थी। चोरो की तरह कुछ न कहकर सवेरे की बस से भाग गया। उस दिन से धौली की आँखों में नीद नही है। भुट्टे के कीडे का जहर खाने से तो धौली सदा के लिए सो जाती, लेकिन एक बार उस बेईमान का मुँह देखे बिना धौली मरे तो कैसे मरे ?

बेईमान ? नही, नही। माँ-बाप ने इतना डाँटा, इसी से तो वह टाहाड छोडकर चला गया। बाप-माँ क्या ऐसे दुलारे बेटे को डाँटते ? मिश्र-परिवार के बडे, बुलडिहा के हनुमान मिश्र ने डाँटा, इसलिए ही तो माँ-बाप डाँटते गये ! नही तो क्या मिश्रीलाल धौली को छोड जाता ? जाना होगा, इसलिए कितना रोया था ! सोचकर कलेजा फट जाता है, अभी भी फटा जा रहा है।

माँ ने कहा, 'सनीचरी से दवा ले आ। पेट के काँटे को दूर कर।'

कैसे करे ? यह क्या मिश्रीलाल के बडे भाई कुंदन और गंजू बहू झालो की सन्तान है ? जिसका जन्म लालच और शेखी मे हुआ ?

बांभन, देउता को धौली ने बगीचे में झाड़ू लगाते हुए कभी आँख उठाकर नही देखा। दोपहर को जगल में बकरी चराकर झरने में नहा रही थी। तभी मिश्रीलाल ने पत्ते सहित पेड की डाल उसके ऊपर फेंकी। मिश्रीलाल हँसा नही, कोई उजड्डपन नही किया, बोला,'तेरे लिए मैं पागल हो गया हूँ। तू एक बार मेरी ओर देखती क्यों नही ?'

'देउता ! ऐसी बात मत करो।'

'कैसे देउता ? मैं तो तेरा गुलाम हूँ।'

'ऐसा मत कहो, मत कहो, देउता !' डर के मारे मुँह फेरकर धौली खड़ी

रही।

'आज मत सुन। किसी दिन सुनना ही पड़ेगा।'

सोचने पर बाद मे भी मन मे वन की बतास बहने लगती, पत्तों की झर-झर, सरसर आवाज सुनायी पड़ती, सुनायी देती झरने की आवाज। मिश्रीलाल चला गया था। कलेजे मे कैसा डर, कैसा डर था ! मिश्रीलाल का गोरा रंग था। घुँघराले बाल थे। सुकुमार सुन्दर चेहरा। देखकर वह देना पड़ता, देखता। धोनी क्या थी ? दुसाध की लड़की। विधवा। जनम की दुखी। संसार मे उसके न बाप था, न भाई, इसीसे कुन्दन ने माँ को फिर जमीन पर खेती नही करने दी। माँ ने कहा था, 'सरकार, मैं लगान दूँगी। दूसरे दुसाध लोग जमीन जोत देंगे। जो लें, लेंगे, जमीन दे दीजिये। नही तो भूखों मर जाऊँगी।'

'नही, नही।'

कुन्दन की माँ के आगे जाकर धोनी की माँ जमीन पर लोट गयी। 'दया करो, माता जी ! नही तो लड़की के साथ बिन खाये मर जाऊँगी।'

माँ ने लड़के से कहा, 'उसका आदमी जब तक जिन्दा था, उसने जमीन जोती, बेगारी दी, अब वह राँड़ हो गयी, भूखों मर जायेगी।'

'बताओ, क्या करूँ ? वह जमीन मैंने झूमन दुसाध को दे दी है।'

'तो ये बकरियाँ चरायेंगी। बगीचे में झाड़ू लगायेंगी। पैसे दूँगी। महुआ दे दूँगी।'

'जैसा कहो।'

दिन बीतने पर महुआ के घाटों के लिए जिनके चरणों का आसरा हो उनका बेटा धोनी से ऐसी बातें क्यों कह गया ? धोनी को तो पता था कि उसकी भीरु आँखें, पतली कमर, खिलते कमल-सी छाती, सभी उसके दुश्मन थे। मोटे-छोटे कपड़े से बदन ढक कर वह बगीचे में झाड़ू लगाने जाती थी। किसी दिन आँख उठाकर नहीं देखा कि बगीचे में कितने फल हैं ? चिड़ियाँ और चमगादड़ जो अमरूद और नारंगी फेंक जाते, वही बटोर लाती। वह भी कुन्दन की माँ की अनुमति से।

पर आकर धोनी में यौवन की प्यास मचलकर सोने की तरह चमकती थी। उसने माँ से छिपाकर अपना चेहरा देखा। विधवा, राँड़ होने पर

'क्या काम है ? बैठे रहना ?'

'हां, बैठे रहना।'

जिस लिए बैठे रहना था, वह हो गया। फ़सल काटने के समय लछमन लौटा। दूलन की धान की खेती की बात उसके कानों में पड़ी। धतुआ के खून के बाद एक बरस बीत गया था। फिर लछमन अपने में डूब गया।

लछमन दूलन के पास आया। दूलन जानता था कि वह आयेगा। दूलन को मालूम था।

'दूलन !'

'गरीबपरवर !'

'उठकर इधर आ।'

'यह क्या, आज अकेले ?'

'बेकार बात छोड़। यह क्या है ?'

'क्या ?'

'जमीन पर धान क्यों ?'

'खेती की है।'

'क्या बात थी ?'

'आप बताइये।'

'कुत्ते के पिल्ले, यही बात तय हुई थी कि तुम जमीन पर खेती करोगे ? झाड़-झखाड़ रहेगा...।'

दूलन नीचे और लछमन घोड़े की पीठ पर था। दूलन ने अचानक लछमन का पैर पकड़कर जोरों से खींचा। लछमन गिर पड़ा। बन्दूक छिटक गयी। दूलन के हाथ में बन्दूक आ गयी। लछमनसिंह कुछ समझ पाता कि उसके पहले ही उसके सिर पर बन्दूक का कुन्दा पड़ा। लछमन चीख़ पड़ा। दूलन ने बन्दूक का कुन्दा लछमन के गले की हड्डी पर मारा। तड़ाक् की आवाज़ हुई।

'कुत्ते का पिल्ला, जानवर !' लछमन ने डरते हुए देखा कि दूलन के आगे वह रो रहा है। दर्द और डर के मारे उसकी आंखों में आंसू थे। वह, लछमनसिंह, जमीन पर पड़ा था और दूलन गंजू खड़ा था। वह दूलन का पैर पकड़ने चला। वह सुबकने लगा। दूलन ने उसके हाथ पर भारी पत्थर

उसे शीशे में मुँह देखना मना था। मुँह देखना मना था, लाख की चूड़ियाँ पहनना मना था। सिंदूर की बिन्दी नहीं लगानी थी, और जस्ते की पायल भी। चेहरा सुन्दर है तो राँड के सुन्दर चेहरे का क्या होगा? फिर ब्याह तो होगा नहीं। किसी का ब्याह होता तो उसे औरतें 'ससुराल चली सीता मैया' गायेंगी नहीं, ब्याह के घर दीवार पर बेल-फूल-पक्षी बनाने के लिए बुलायेंगी नहीं। लेकिन देउता के घर का छोटा लड़का बोला, उसका गुनाम बना रहेगा। कलेजे में डर लग रहा है, बेचैनी है।

धौली ने माँ से कहा, 'माँ, तू बगीचे में झाड़ू दे। मैं बकरियाँ चराऊँगी।'

'क्यों?'

'माँ! झाड़ू लगाने पर भी पत्ते-उत्ते उड़ते हैं, मैं हवा के साथ भाग नहीं सकती।'

'किसी ने कुछ कहा है?'

'कौन क्या कहेगा?'

'बकरियाँ लेकर जंगल के ज्यादा अन्दर मत जाना, धौली! भेड़िया और तेंदुए हैं।'

'नाहीं मैया! हमरा का ख्याल नाहीं है?'

बकरी चराते-चराते पिछले दिनों की तमाम बातें याद आतीं। छुटपन में पिता के कंधों पर चढ़कर मेला देखने जाना। दुकानों पर लाखों रुपये के सौदे देखकर एक पैसे के तिलवा लेकर घर लौटना। ससुर के घर से चले आने के पहले ससुराल नाम की पुरानी-धुरानी दो कोठरियाँ, महाजन के खलिहान में काम, दिन बीते सास मकई पकाती। मर्दों के खा लेने पर वे खाने बैठतीं।

धौली को ब्याह की याद न थी। उस वक़्त वह बहुत ही छोटी थी। शरीर में फूल खिलने पर गौना हुआ। उसके ही ब्याह और गौने में पिता ने मिश्र से कर्ज लिया। उस उधारी को चुकाने में बेगारी देते-देते पिता मर गये।

दूल्हा अच्छा न था। धौली को मारता था। वह बुखार में मर गया। सास बोली, 'माँ के पास भी खायेगी, काम करेगी। मेरे पास भी वैसा ही है।'

मारा। लछमन समझ गया कि उसका दाहिना हाथ बहुत दिनों के लिए बेकार हो गया है।

'जानवर, कुत्ते !'

'क्या बात थी, मालिक ? खेती नहीं करूँगा। क्यों नही करूँगा ? तुम लाशें गाडोगे, मैं बनूंगा लासो का जिम्मेदार। क्यों बनूं ? नही तो तुम गाँव जला दोगे, मुझे निर्वंश कर दोगे। बहुत अच्छा है। लेकिन मालिक, सात-सात बेटे। उनकी कब्रो पर सिर्फ जगली झाडियाँ और कांटेदार पेड होगे ? इसीलिए धान बोये है, समझे ? सभी लोग पागल कहते है, मै पागल ही हो गया हूँ। आज तुमको जाने जाने न दूँगा मालिक, फिर फसल कटाने न दूंगा। अब तुम्हे गोली चलाने, घर जलाने और आदमियों को जलाने न दूगा। बहुत फसलें तुमने काटी है।'

'तुझे पुलिस छोड़ देगी ?'

'न छोडे तो न सही। तुम्हारे आदमी है। वे भी शायद मारें। कब नही मारा, मालिक ? या पुलिस ने ही कब नही मारा ? फिर मारेंगे तो इस बार मरना हुआ तो मर जाऊँगा। कभी तो सभी मरेंगे। धतुआ क्या अपनी मौत से पहले मरा था ?'

इस वक्त अपने को बिलकुल बेबस समझकर लछमन के मन में मौत का डर समाया। मौत का डर होने पर भी राजपूत कभी दक्षिण-पूर्व बिहार की नीची जाति के आदमी के आगे झुक नही सकता। शायद अगर झुकता तब भी नीची जाति हमेशा राजपूत को प्राणदान नही कर सकती। दूलन प्राणदान न कर सका।

लछमन पूरे जोर से उठा और चिल्लाने लगा। वह बायें हाथ से पत्थर उठाने लगा। दूलन बोला, 'क्या, अफसोस है मालिक ? गंजू के हाथों मरने का ?'

वह पत्थर से लछमन का सिर फोडने लगा। मारता रहा। लछमन हत्या करने का आदी था, गोली की कीमत जानता था, हत्या उसके मन को विचलित नही करती थी। वह होता तो एक गोली से दूलन को मार देता।

दूलन हत्या करने का अभ्यस्त न था, पत्थर की कोई कीमत न थी, यह हत्या उसके बहुत दिनो के अन्तःसंघर्ष का परिणाम थी। वह पत्थर

धौली को भी पता था कि ज़िन्दगी उसी तरह है। मोटा-सोटा, सादा, बिना किनारी का कपड़ा पहन कर महाजन के खलिहान में, ज़मींदार के खेत में या सड़क कूटने के काम में सवेरे से शाम तक मेहनत करती। दिन भर जो जुट पाता सो खाकर सास के पास लुढ़क जाती। लेकिन मानतोड़ से जेठ आ गया। उस पर नज़र डाली। तब सास को ख़तरा लगा और धौली चली आयी। मन में बड़ा अफ़सोस रह गया। चली आयी, इसलिए नौटंकी न देख सकी। गाँव में नौटंकी वाले आने को थे। महाजन ने उन्हें बुलावा दिया हुआ था।

टाहाड़ आकर उसने किसी दूसरे दुसाध लड़के पर भी ध्यान न दिया। वही ग़रीबी और भूख थी। वही हाड़तोड़ मेहनत। उस पर गोद में बाल-बच्चा रहे। न, धौली को वैसी ज़िन्दगी नहीं चाहिए।

जंगल में बकरियाँ चराते-चराते धौली कितनी ही बातें सोचती। उसके बाद आँचल बिछाकर अधलेटी आराम करती। भेड़िये या तेंदुए से धौली नहीं डरती थी। आदमी अगर जानवर से डरता है तो जानवर भी आदमी से डरते हैं। वन में बड़ी शान्ति थी। मिश्रीलाल की अप्रत्याशित बातों से मन में जो अशान्ति हुई थी, वह ख़तम हो रही थी। बड़ी शान्ति थी।

लेकिन बुधवार में मेला था। मेले से लौटने में धौली बाकी दल से छूट गयी। डर के मारे तेज़ी से चलती गाँव लौट रही थी। लड़कियों की तस्करी कर जो लोग रोज़गार करते हैं ऐसे लोग भी इस तरह के मेले के दिनों में आते हैं। वे लड़कियों को पकड़कर ले जाते हैं।

वहीं मिश्रीलाल उसके सम्पर्क में आया। बोला, 'तुझे सुनायी नहीं देता?'

'क्या सुनूं?'

'तुझे पुकार रहा था।'

'क्यों?'

'तुझे मालूम नहीं, क्यों?'

'ना, देवता! ऐसन बात मत कह। हम दुसाध, तुम देवता हो।'

'मैं तुझे प्यार करता हूँ।'

'नाहीं देवता! एकरा के प्यार नाहीं कहल जाला। तुम ब्राह्मण

पटकता रहा।

अब और पत्थर मारने की ज़रूरत न रही। दूलन उठ खड़ा हुआ। एक-एक कर काम निबटाना होगा। घोड़े की लगाम पकड़कर हाँका और पिछाड़ी पर लाठी मारकर उसने घोड़े को भगा दिया। जहाँ चाहे जाये। उसके बाद बंदूक सहित लछमन को रस्सी से बाँधकर खींचते-खींचते बहुत दूर ले गया। उसे एक गड्ढे में फेंक दिया। उसके बाद पत्थरों-पर-पत्थर के ढेर लगाने लगा। पत्थर पर पत्थर। अंदर से हँसी निकल रही थी। घृणा ओरांव-मुंडा बन गयी। गरीब-परवर ! पत्थर से दबकर पत्थर की समाधि बन गयी।

पत्थरों की मेड़ पर कँकरीली ज़मीन पर कोई निशान रहने का सवाल ही नहीं। लेकिन पुटुस पेड़ की पत्तों सहित डाल तोड़कर उसने हाथापाई की जगह पर झाड़ू लगायी। उसके बाद मचान पर चढ़ गया।

लछमन की तलाश कई दिनों तक होती रही। जिस कारण से वह किसी से बात करने के पक्ष में न था, उसी कारण से उसने दूलन के पास आने की बात किसी से नहीं कही थी। न कहना ही स्वाभाविक था, क्योंकि वह जिस लिए दूलन पर निर्भर करता था वह छिपाकर रखने की बात थी। उसके शागिर्दों में जिन-जिन को मालूम था वे भी चुप रह गये। ग़रीब-परवर जब खुद गायब हो गये, घोड़ा जब दैतारी के धान के खेतों में चर रहा था तब खोंचा मार कर चोट लगाने से क्या फायदा? लछमन का नौकर बोला, 'हर रोज की तरह दूध-मिसरी पीकर घोड़े पर घूमने गये थे। कहाँ गये, यह कैसे बताऊँ?'

बहुत ही ताज्जुब की बात हुई। लकड़बग्घों का शोरगुल सुनकर लोगों में सुगबुग हुई। वह भी पाँच दिन बाद। पाँच दिन तक मांस-भक्षी पशु पत्थरों की दरार से मांस की गंध पाकर चिल्लाते थे और बड़ी कोशिश के बाद कुछ पत्थरों को हटाकर वे केवल सिर खा पाये थे। मृतदेह को छिपाने की चालाक तरकीब और धान के खेत में घोड़ा इत्यादि कारणों से दैतारीसिंह पर शक हुआ। लछमन के लड़के ने उसमें मदद दी और पुराने झगड़े का इतिहास रहने से दैतारी कुछ दिनों तक परेशान रहा। सबूत न रहने से पुलिस हट गयी और दैतारी और लछमन का बेटा पुराने झगड़े का इतिहास

जवान हो। सादी होई, दुलहन आयी...।'

'तोके हम...दुसाध, तू प्यार नाही समझत है ?'

'नाही देउता ! देउता सन गंजू-दुसाध को औलाद होत, सो तो होत है। लेकिन...।'

'मैं तेरे सिवा कुछ सोच नही सकता।'

'अइसन गरीब के साथ ई खेला जिन करा, सरकार !'

'खेला ?'

'हाँ देउता ! तुम खेलखेलत भाग जाबे। हमनी के का कोई। झालो का का हाल भयल ? सनीचरी का ? ना सरकार।'

'अगर तुझे न जाने दूँ तो ?'

'हमनी के का ? जो है सो मान लेव। देउता के खाहिस जो माँगी सो होई। आव, ले ले हमनी के, धरम नास करा।'

'ना ना, धौली, ना। तू हमें माफ कर दे। माफ।'

मिश्रीलाल भाग गया था। धौली बड़े ताज्जुब में पड गयी। फिर लौट आयी।

उसके बाद जिस दिन उसने सुना कि मिश्रीलाल बहुत बीमार है, जैसे दीवाना हो, तो उसके दिल को बडी चोट लगी। उसे मिश्रीलाल कभी भी पा सकता था, मिश्रलोग ऐसा करते ही रहते है, उसमे धौली कुछ नही कर सकती थी। लेकिन यह कैसी बात थी ?

वह खुद भी बहुत बेचैन हो गयी। उसके बाद उसे लडकियों ने कुएँ पर पकडा।

'राँड़, तेरा भाग्य खुल गया।'

'राँड का भाग्य कभी खुलता है ?'

'देउता का छोटा बेटा तेरे लिए पागल है।'

'झूठ बात।'

'सब लोगों को पता है।'

'झूठ मत बोलो।'

'झूठ कहाँ ? सबको मालूम है।'

'नही, नही।'

लिये चले। किसी भी तरह दूलन पर शक न हुआ। रहना स्वाभाविक न था। किसी भी हालत में दूलन लछमन को मारेगा, यह सोचा भी नहीं जा सकता था।

उधर लछमन को लेकर खोज-खबर चलती रही। इधर मचान से एक प्रसन्न, नया दूलन उतरा। उसने मुखिया से कुछ कहा। उसके परिणामस्वरूप एक दिन शाम को पहान के आँगन में कुरुडा के सारे लोग जमा हुए। दूलन बोला, 'किसी दिन किसी को उठा कर कुछ नहीं दिया।'

सब ताज्जुब में पड़ गये।

दूलन बोला, 'मेरा धान देखकर तुम सब लोगों ने अच्छा कहा। वही धान नहीं काटा तो सबने कहा मैं पागल हूँ। खेती करते समय भी ऐसा ही कहा था। पागल को पागल कहा था, सो अब पागल की बात मानो।'

'कहो।'

लछमन की मौत से सबको एक तरह से चैन मिल रहा है। उसका बेटा बाप के ढग पर चलेगा या नहीं, यह सोचने की तबीयत अब आज नहीं हो रही है।

'हमारा धान तुम्हारे लिए बिजावन है। यह बीज लो।'

'दिये दे रहे हो?'

'हाँ लो। काट लो। ऐसा क्यों हुआ, वह लम्बी बातें है।'

'खाद दी थी?'

'हाँ, खाद, बहुत दामी खाद थी।' दूलन की आवाज जैसे कटी पतंग के सूत की तरह खो गयी। उसके बाद खँखार कर दूलन बोला, 'तुम काट लो, मुझे भी थोड़ा-सा दे देना। फिर बोऊँगा, फिर।'

समय आने पर वे खेत में उतरेंगे, धान काटेंगे, यह वचन लेकर दूलन अपनी जमीन की ओर लौटा। आज कलेजा बड़ा हलका हो रहा था। मेड़ पर खड़े होकर फसल को देखने लगा।

करण, अशरफी, मोहर, बुलाकी, महुवन, पारस और धतुआ के मांस-मज्जा की खाद से पुष्ट पके धान बड़े साफ़ थे। बीज होंगे। बिजावन माने जिन्दा रहना। दूलन धीरे-धीरे मचान पर चढ़ा। रह-रहकर मन में एक सुर उठ रहा था। बार-बार उठ रहा था। धतुआ ने गीत बनाया था। 'धतुआ' कहने में दूलन की आवाज काँप उठी। 'धतुआ, हमने तेरा बिजावन बना दिया!'

घबराकर धौली पानी लेकर चली आयी और गगरियां लेकर जल्द चली गयी। अब उसका क्या होगा?

गांव में नाम फैल गया। सब के मुंह पर उसकी चर्चा थी। देउता की मति ऐसी ख़राब कैसे हुई?

डर के मारे वह मिश्री के मकान के आस-पास भी न फटकती। मां से सुना, बीमारी चल रही है। भालातोड़ से डॉक्टर आया है। उसकी समझ में नहीं आया। कुएँ की जगत पर जुटने वाली औरतों को जो मालूम है, मां को उसका पता है या नहीं? एक दिन वह बोली, 'चल मां, भालातोड़ चलें। वहां कुली का काम कर लेंगे।'

'पागल हो गयी है?'

उसके बाद एक दिन सुना कि मिश्रीलाल चंगा हो गया है। उसकी शादी होगी। सुंदर लड़की की खोज हो रही है। बड़े भाई कुन्दन की बहू के समय रूप की खोज नहीं हुई। इस बार रूप की तलाश हो रही है।

वह बहुत निश्चिन्त हो गयी। लेकिन कलेजे में व्यथा भी थी। साथ ही विजय का उल्लास था। उसने, धौली ने, एक दुसाध की लड़की ने, देउता के बेटे को पागल बना दिया।

बड़ी बेफ़िक्री के साथ वह जंगल चली गयी और वहां झरने में स्नान किया। पत्थर पर धोती फैलाकर आधी सुखायी, फिर पहन ली। धोती फट गयी थी। इस बार मां रुपये पाये तो धौली दूसरी धोती खरीदेगी। अध-गीली धोती और भीगी कुर्ती देख कर मां मारने उठेगी। 'कुत्ती, तू विधवा है या सहर-बजार की रंडी है? बदन दिखा रही है?'

तभी मिश्रीलाल आ खड़ा हुआ और बोला, 'मैं शादी नहीं करूंगा, धौली, मैं तुझे चाहता हूँ।'

दोपहर में गांव से लगा जंगल बहुत सूना, बड़ा सन्नाटा रहता था। धौली का मन और शरीर बिलकुल बेबस था। मिश्रीलाल की आंखों में बेबस भीख थी, आवाज में वेदना और निराशा थी। धौली उसे रोक न सकी।

उसके बाद से दो महीने एक आश्चर्यजनक नशे में बीत गये। जंगल उनके मिलने का स्थान था, और दोपहर उनके मिलन का समय। [illegible]

धौली

बस शाम को राँची से चलती और रात के आठ बजे टाहाड़ पहुँचती। पारसनाथ की परचून के साथ चाय की दूकान के सामने मुसाफ़िर उतरते और अपने-अपने घर चले जाते। यही पारसनाथ की दूकान, चाय की दूकान, टाहाड़ का माल या चौरंगी थी। उसके पास पोस्ट-ऑफ़िस था। यहीं चौड़ा रास्ता और बाहरी दुनिया समाप्त होते थे। बाहरी दुनिया और टाहाड़ को जोड़नेवाली रोहतगी कम्पनी की बस थी। राँची-हजारीबाग, राँची-रामगढ़ और राँची-पटना रूट पर रोहतगी कम्पनी की बीस के क़रीब बसें अप जाती थीं, बीस के करीब बसें डाउन जाती थीं। टाहाड़ या पलानी या बुरुडिहा-सी लज्झड़ ग़रीब जगहों के लिए उनकी कई लज्झड़ और गरीब बसें थीं। सोम-बुध-शुक्र के बाजारों के दिन बसों में भीड़ होती थी। आदिवासी ठुँस-ठुँस कर बैठते। मंगल-बृहस्पति-शनि और इतवार को बसें खाली रहतीं। खाली चलाने पर बसों को फ़ायदा न होता। बरसात में कच्चे रास्ते पर बसें न चलतीं, बन्द रहतीं। बरसात के कई महीने टाहाड़ विशाल संसार से कट जाता।

इस बार जून के शुरू से ही लग रहा था कि बरसात होगी। धौली पारसनाथ की दूकान के आगे खड़ी थी। दूकान की रोशनी में उसका चेहरा और शरीर दिखायी नहीं पड़ रहा था।

पारसनाथ ने दूकान बन्द की। उसके बाद बोला, 'क्यों रे, घर जायेगी?'

धौली मुँह फेरे खड़ी रही।

समझ खतम हो गयी थी। उन्नीस और तेईस। हर रोज धौली डर के मारे काँपती थी कि क्या होगा ?

'किसका क्या होगा ?'

'तुम्हारा ब्याह होगा ?'

'तेरे साथ।'

'ऐसा न कहो, देउता !'

'मैं जात-पाँत छुआछूत नही मानता। और टाहाड ही दुनिया की एक जगह नही है। सरकारी कानून में भी हमारे ब्याह की मंजूरी है।'

'ऐसा न कहो, सरकार ! तुम लडकपन कर रहे हो। देउता, हनुमानजी का कहेंगे ? हमको गाँउ से निकाल देंगे।'

'ऐसा सीधा नही है।'

'हमारे लिए नही।'

'तू नहीं जानती।'

जंगल के निर्जन गोपनीय स्थान में मिश्रीलाल यह दुःसाहसिक बातें करता और वे बातें परियों की कहानी के साथ मिलकर व्यर्थ हो जाती।

इस तरह दिन बीतते रहे। लेकिन ज्यादा न चले। धौली को पता चला कि वह माँ बनने वाली है।

ताज्जुब है, मिश्रीलाल बहुत खुश हुआ था। 'मुझे भी लिखना-पढना नहीं आता, तुझे भी नही। मुझे इतने बाग-बगीचे, खेती जमीन की जरूरत नही। चले जायेंगे भालातोड़ से धनवाद, उसके बाद पटना। दुकान करके दिन बितायेंगे।'

लेकिन हनुमान मिश्र जिस दिन टाहाड आये तो उनके सामने मिश्री-लाल इतनी बातों में एक भी न कह सका।

कुन्दन ने कहा, 'माँ-बेटी को मार कर लाशें गायब कर देंगे।'

'न !'

हनुमान मिश्र बोले, 'घर का जंजाल साफ करो। बाहर का जंजाल चला जायेगा।'

'जान से मार दें।'

'बेवकूफ़ !'

'क्या रोजगार है !' वृद्ध पारसनाथ बड़बड़ाया। वह घूमकर दूकान के पीछे अपने मकान में घुसा। उसकी पत्नी बैठी बीड़ी पी रही थी। पारसनाथ बोला :

'लड़की आज भी खड़ी है।'

'मरेगी।'

'देउता के जानने के बाद•••।'

'मरेगी।'

उसके बाद पारसनाथ की पत्नी बोली, 'मिथीलाल को गये तो कितने दिन हो गये ?'

'चार महीने होंगे।'

'धौली ने क्या सोचा है ? दोसाध की लड़की, अछूत, घर-मकान बना लेगी ?'

'धरम जाने। लेकिन अभी तो वह मरेगी।'

'क्यों ?'

'कंट्रैक्टर है। कुली लाइन है।'

'मरे तो मरे। रात को अकेली जायेगी...जवान लड़की...डर नहीं लगता ?'

'भेड़िया निकला है कल से।'

सचमुच भेड़िया निकला है। लेकिन धौली को वह बात याद नहीं रहती। कलेजे के नीचे असह्य वेदना है। व्यथा कलेजे के नीचे रहती है। उसके बाद नीचे की ओर उतरती है। धौली सोच नहीं पाती कि क्या करे ?

अँधेरे में ही वह घर लौटी। ढिबरी की रोशनी थी। कोठरी के एक ओर मचान था। उन लोगों की खाट। मचान के नीचे तीन बकरियाँ थीं। माँ बिस्तर पर लेटी हुई थी। लड़की को देखकर कुछ न बोली।

धौली ने घड़ा हिलाकर देखा, पानी था। उसने पानी पिया। फिर दरवाजा बन्द कर ढिबरी को फूंक मार कर बुझा दिया। उसके बाद माँ के पास लेट गयी। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। बेचैनी, निराशा, वेदना की

'माँ हरामजादी ने शोर मचा दिया, भेड़िया पट्ठा उठा ले गया। उसके घर तीन बकरियाँ कहाँ से आयी? दो ही थी न?'

मिश्रजी बहुत बिगड़ कर बोले, 'उल्लू के पट्ठे, तेरी बहू से बात कर सकता हूँ। तुझसे बात नही कर सकता।'

'माफ़ कीजिये।'

'दोनो को जान से मत मारो, रोटी से मारो। काम छुड़ा दो। और तुम्हारे भाई ने जो नाम किया है, उसके सबका मुँह काला हुआ है। पहले इज्जत बचाओ। एक बकरी की बात है, उसके चले जाने से क्या हुआ? तू जो खुद एक बड़ा बकरा है। देख, पहले भाई को यहाँ से हटा।'

मिश्रीलाल बोला, 'मैं नही जाऊँगा।'

'ज़िन्दा न जाओ, तो तुम्हारी लाश जायेगी। तुम-सा लड़का कुल के लिए कलक है।'

बाद मे मिश्रीलाल ने माँ से कहा, हताश होकर कहा, 'माँ! धौली के पेट मे मेरा बच्चा है।'

'उससे क्या हुआ? दुसाध-गजू औरतों के पेट मे इस कुल के मर्दों के बच्चे पहले भी हुए। तेरी उम्र की गर्मी है। झालो के घर कुन्दन के तीन बच्चे है कि नही आखिर?

'वह क्या करेगी?'

'पाप किया, डड भुगते। भूखी मरेगी। माँ मरेगी, बेटी भी मरेगी।'

'धौली का क्या कसूर है, माँ?'

'कसूर सारा औरतों का ही होता है। ब्राह्मण देवता का घर नाश किया। उस दोष की वह दोषी है।'

'माँ, तुम तो मुझे प्यार करती हो।'

'तू मेरा लडंता बेटा है रे!'

'मुझे छुओ।'

'क्यो?'

'छुओ!'

'छू लिया।'

'मै तुम्हारी बात मानूँगा। चला जाऊँगा। लेकिन तुम वचन दो कि

'निकालें तो निकाल दें।'

'तेरी उमर हो गयी। मैं कहाँ जाऊँगी?'

'तू रहेगी।'

'तू चली जायेगी?'

'चली जाऊँगी।'

'कहाँ?'

'यम के दरवाजे पर।'

'ऐसा सीधा नहीं है। उन्नीस बरस की उमर में आदमी यम के दरवाजे पर नहीं जाता है।'

'मैं जाऊँगी।'

'सनीचरी के पास गयी थी?'

'न।' धोली चीख पड़ी। बोली, 'उसके पास क्यों जाऊँ? पेट में काँटा मारूँ? कभी नहीं।'

'तो क्या मिसरों के घर जायेगी? कहेगी, तुम्हारे लड़के ने मुझे माँ बनाया। बच्चे के पालने-पोसने के लिए पैसे दो।'

'कैसे? मेरी बात कौन मानेगा?'

'मानना पड़ेगा।'

'उसके आने पर सब ठीक हो जाता।'

'क्या ठीक होता? वह तुझे देखता?'

'देखने को कहा था।'

'उसे मालूम था कि बच्चा होगा?'

'हाँ।'

'बच्चे को पालता-पोसता?'

'करने को कहा था।'

'यह लोग तो ऐसा कहते ही हैं रे! तू कोई पहली दुसाध की बेटी तो नहीं है जिसे उन मिसिर लोगों ने खराब किया है। दुसाध, गंजू, धोबी—गाँव में किसे छोड़ा है?'

'वह उस तरह का नहीं है।'

'नहीं? बाँभन का लड़का। गाँव की हालत अच्छी तरह जानता है।

वे भूखे न मरें। यह देखोगी।'

'वचन...दिया।'

'कोई उसे तंग न करे।'

'देखूंगी।'

'बात न रखोगी माँ, तो तुम मुझे जानती हो, देउता के आगे बात नहीं कह सकता, लेकिन मैं बड़ा जिद्दी हूँ। तुम्हारे बात न रखने पर मैं गाँव नहीं लौटूंगा, न ही शादी करूँगा।'

'न, न, ऐसी बात मत कह। मैं उस...दुसाधिन को खाने को दूंगी... उसकी देखभाल भी करूँगी।'

धौली को सब पता चला। उसने विरोध दिखाने की बात भी न सोची। दुसाध लड़की को ब्राह्मण के बेटे ने क्या यह पहली बार ही बिगाड़ा है? गाँव वालों के खयाल से सारा क़ुसूर धौली का था। इसमें प्रेम का मामला रहने से धौली अपने समाज के निकट भी पतित थी। अपने समाज के लड़कों की उसने उपेक्षा की। करे उपेक्षा। मिश्रीलाल उसे जबरदस्ती ख़राब करता तो दुसाध उसे न छोड़ते। मिश्र घराने की जारज संतानें दुसाध, गजू, धोबी टोली में बहुतेरी थीं। इस मामले में धौली अपनी इच्छा से आगे बढ़ी थी। बड़ा अपराध था। दुसाध-गजू लड़के, ठेकेदार के कुली देखते थे कि बात किधर जा रही है। कभी मिश्र लोग जारज सन्तानों की माँ को काम या मड़ुआ या पैसे देकर उनकी रक्षा करते थे। उस तरह की माँओं की और उनकी अवैध संतानों की गाँव का समाज भी खातिर करता था। नहीं तो मिश्र लोग बिगड़ जाते। और मिश्रों के ख़फ़ा होने से किसी की ख़ैरियत न थी। सभी सोच रहे थे कि धौली को मिश्र लोग बचायेंगे तो वे भी चुप हो जायेंगे। नहीं तो विधवा, राँड धौली को वेश्या बना डालेंगे।

धौली सब समझती-बूझती थी। डर के मारे और दुख से वह बेचैन हो गयी। अचानक जंगल अपना सौंदर्य खो बैठा, पेड़ ऐसे लगते मानो पहरेदार प्रेत हों। ज्यों पत्थर भी उसकी ओर आँखें निकाल कर देख रहे हों। झरने के किनारे प्रतीक्षा बेकार होती। मिश्रीलाल न आता।

मिश्रीलाल आया। धौली को राह देखते-देखते थकाकर और अवसन्न कर मिश्रीलाल आया। धौली ने उसका चेहरा देखते ही अपनी मौत की

उसने तेरे साथ बेईमानी क्यों की ?'

'मुझसे प्यार किया।'

'प्यार ! इसी से चार महीने से धनबाद में जाकर बैठा है। घर नही आता है ?'

'माँ-बाप से डरता है।'

'एक चिट्ठी भी नही भेजी ?'

'मुझे क्या पढना आता है ?'

'तेरा तो प्यार हुआ। इधर मेरा बकरी चराने का काम भी छीन लिया ? भेडिया पट्ठे बच्चे को उठा ले गया। उन लोगों ने कह दिया हमने चुरा लिया। यह क्या धरम की बात हुई ?'

'मैं क्या करूँ ?'

'तोहरी बात से गुस्सा होके यह दड दिया।'

'मुझे निकाल दे।'

'निकाल दूगी। अभी सो जा।'

'भगा देगी ? तूने 'हाँ' कहा ? मेरे सिवा तेरा कौन है ?'

इसी पर दोनो में रोज झगड़ा होता। बाहर से चौकीदार की आवाज सुनायी पड़ी, 'अरे धौली की माँ, दिन-भर तेरा चिल्लाना सुनूँ, रात मे भी ? दुसाध-पट्टी मे तो और लोग भी हैं। उन्हे मालूम है कि दिन चिल्लाने के लिए और रात सोने के लिए होती है। अकेली तू ही इस सच्ची बात को नही जानती।'

'जाओ, जाओ, चुप हुए जा रही हूँ।'

'क्या घर मे कुली-उली घुसा लिया है ?'

'तेरे घर में कुली घुसता होगा।'

'राम-राम ! यह क्या बात है ?'

चौकीदार चला गया। माँ बोली, 'मैं क्या टाहाड़ का हाल जानती नही हूँ ? सब देख रहे हैं कि बच्चा होने पर मिश्रीलाल तेरी देखभाल करेगा या नही। करने पर कोई तेरे ऊपर हाथ नही उठायेगा। नही तो तुझे नोच खायेंगे।'

'तेरी गलती है। मरद मर जाने पर ससुराल में छोड़ देती, जो होना

सजा समझ ली। मिश्रीलाल की छाती पर सिर रख कर वह फूट-फूट कर रोने लगी। मिश्रीलाल उसके सिर के बालों में मुँह डालकर खुद भी रोता रहा। उनमें साबुन की खुशबू आ रही थी। मिश्रीलाल ही उसे साबुन और खुशबूदार तेल लाकर देता था। दो धोतियाँ भी दी थी। छीट की कुर्ती दी थी जिसे धौली ने नही पहना। मिश्रीलाल के भीरू हृदय मे बड़ी विवशता थी। 'धौली, तू दुसाधिन क्यो हुई ?'

'धोलो मत देउता ! और धौली मत कहो, मुझसे सहा नही जाता है।'

'सुन ! अब क्या रोने से चलेगा ?'

'जीउ भर रोना रह गयल।'

'अब तो मुझे जाना ही पड़ेगा, और यह लोग जो कह रहे है, सब-कुछ मान कर जा रहा हूँ।'

'ऐसी प्यार की बातें क्यो की ?'

'अब भी कह रहा हूँ।'

'क्यो सरकार ? अब तुम्हारी धौली मुर्दा हो गयी।'

'सुन पगली !'

मिश्रीलाल ने उसे जबरदस्ती पत्थर पर बैठाया। दोनों हाथो से उसका मुँह थामकर बोला, 'महीने-भर चुप रहूँगा। शादी के लिए जबरदस्ती करेंगे तो नही मानूँगा। यह कह दिया है। वे लोग भी मान गये है।'

'बाद में भूल जाओगे।'

'न, न, सुनो। मैं महीना-भर बाद ही लौट आऊँगा। महीने-भर मे कहाँ जाऊँगा, क्या करूँगा, सब ठीक कर लूँगा। मैं लिखा-पढा तो हूँ नही। बडी नौकरी चाहिए नही। बडा भाई भी नही हूँ जो खेत-खलिहान चाहूँ। कही चला जाऊँगा। दूकान कर लूँगा। इन्तजाम तो करना पडेगा।'

'मैं क्या करूँ ?'

'यहाँ रहना।'

'क्या खाऊँगी ? माँ को चोरी लगाकर तुम्हारे भाई ने भगा दिया है।'

'माँ ने मुझे छूकर वचन दिया है कि तुझे खाना देंगी, देखभाल करेंगी और...।"

धौली के आँचल की खूँट मे मिश्रीलाल ने दस-दस रुपये के पाँच नोट

बांध दिये। बोला, 'धौली, महीने-भर तू मन ठीक रखना।'

मिश्रीलाल चला गया। धौली को दुलार कर भरोसा दिलाया। धौली और कुछ देर बाद घर लौटी। माँ-बेटी में बातें हुईं और रुपये एक डिब्बे में रखकर जमीन में गाड़ दिये।

मिश्रीलाल चला गया। दो दिन बाद धौली की माँ मिश्र की बहू के आगे जा खड़ी हुई। उन्होंने बिना कुछ कहे उसके आँचल में छुये बिना किलो-भर मड़ुआ उँडेल दिया। बोली, 'तीन दिन बाद फिर आना।'

तीन दिन बाद मड़ुआ कम होकर आधा किलो हो गया और समय तीन दिन रहा। उसके बाद वह जिस दिन आयी उस दिन मिश्र की बहू मुंह लवा कर बोली, 'तू उस दिन आयी थी, उसके बाद से मेरा दूध का लोटा नहीं मिल रहा है।'

'नहीं मैया, हम तो...।'

'न, न, लड़का कह रहा था, बड़ा लडका। कह रहा था, तुझे घर में न घुसने दूं। दरवाजे के बाहर से पुकार लिया कर।'

धौली की माँ बरांभन मैया की यह बात मान कर चली गयी। लेकिन जिस रोज दरवाजे के बाहर से पुकारा, उस दिन सुना कि मैया बुरुडिहा चली गयी हैं। हनुमान मिश्र के घर। धौली की माँ मन-ही-मन जलते हुए घर लौटी और धौली को बेरहमी से मारा। धौली मुंह बंद किये मार खाती रही। उसके बाद माँ ने मारना छोडा तो वह दाब[1] ले आयी। बोली, 'इससे मार। हाथ में दर्द होगा। और इससे मारने पर फिर न मारना होगा। सान दी हुई है।'

अब माँ-बेटी गले-से-गले लग कर रोने लगी। उसके बाद माँ बोली, 'तुझे अच्छी बात बता रही हूँ। सनीचरी से दवा ले आ। पेट का काँटा दूर कर दे।'

'ना माँ !'

'वह नहीं आयेगा रे ! लड़के का लडकपन है। अच्छा समझकर अच्छी बात कही थी। लेकिन वह बात रख न सकेगा। कभी नहीं।'

---

1. लोहे का धारदार औजार।

हेड कुली ने उसका हाथ पकड लिया। बोला, 'कहाँ है, तेरा फरमा कहाँ है?'

धौली ने उसकी आंखो में आंखें डाली। उसकी आंखो में कोई डर न था।

'हाथ छोड।'

उसने हाथ छोड दिया।

'तूने ढेले मारे थे?'

'हाँ।'

उस आदमी ने इशारा किया। धौली समझ गयी कि उसके भाग्य में यही है। जरा रुक कर सांस लेकर बोली, 'ठीक है।'

'दरवाजा खोल देगी?'

'हां। और...।'

'क्या?'

'रुपये ले आना।'

'रुपये!'

'रुपये लायेगा। पक्की लायेगा। दूकान [illegible]'

धौली घर लौट आयी। माँ से कहा, '[illegible] लड़के को लेकर सनीचरी के यहाँ चली जाना।'

'क्यो?'

'ढेले पडेंगे। दरवाजा खोल [illegible]।'

धौली की माँ शायद रोयी, [illegible] बोली, '[illegible] मचाना, भोर के पहले चली [illegible]।'

मिश्रीलाल की दी हुई [illegible] सनीचरी से तेल उधार [illegible]। [illegible] बांधे। और क्या [illegible] कुछ [illegible] है।

रात को [illegible] था। धौली ने [illegible] खाली हाथ [illegible]।

'[illegible]।'

'तो मैं जहर खा लूँगी।'

'खायेगी ?'

'खाऊँगी।'

माँ कुछ देर चुप रही। उसके बाद गहरी साँस लेकर बोली, 'वह ठेकेदार है न, जंगल का ठेकेदार, उसके पास जा रही हूँ। मुझसे खाना पका देने को कहा था।'

'मैं जाऊँगी।'

'न, न, मेरी उमर हो गयी है, मैं ही जाऊँगी। रुपये दे, न दे, खाना देगा। और खाना घर ले आऊँगी।'

'तू जा।'

'तू बकरियाँ चरा।'

वही समझौता रहा। धौली की माँ को पकाने का काम तो मिला नहीं, लेकिन खाने का इन्तजाम हो गया। जिस दिन जो भात-रोटी मिलता, घर ले आती। उसकी बिरादरी के लोग माँ-बेटी पर नजर रखते। ठेकेदार के कुली भी नजर रखते थे। पेड़ काटने का काम था। पैसे नकद मिलते थे। कुन्दन के भाई की रखवाली थी, यही असुविधा थी। अन्त में क्या होता है, इसमें वे भी उत्सुक रहते। लकड़ी काटने और चीरने का काम बहुत दिनों चलेगा। राह देखने मे कोई असुविधा न थी। उल्टे उत्तेजना ही थी। ब्राह्मण के बेटे के साथ गड़बड़ हुई थी, इसलिए धौली का आकर्षण मन मे अधिक हो गया था।

महीना-दो-महीना कर चार महीने बीत गये। धौली आदत के मुताबिक बस के आसरे खड़े-खड़े लौट आती। आज मचान पर लेटे-लेटे धौली ने सारी बातें फिर मन-ही-मन सोची। सा—री बातें। उसके बाद आँखें बन्द कीं। पेट पर हाथ फेरा। पेट मे बच्चा हिल रहा था। बहुत अजीब-सा लगा। मिश्रीलाल ने कहा था, लड़का होगा तो नाम रखेगा मुरारी। लेकिन मिश्रीलाल, उसका प्यार—सब-कुछ जैसे परियो की कहानी-सा उड़ता जा रहा था।

'जो पैसे देगा वह आयेगा।'

बहुतों ने पैसे दिये। बहुतेरे आते रहे। धौली और माँ ने अच्छे कपड़े पहने। दोनों वक्त भरपेट खाया। धौली को आजकल खरीदार चले जाते ही शरीर छोड़ कर नींद आ जाती। कितने सहज भाव से बिना प्रेम के शरीर का बेचना था। मड़ुआ, मकई, नमक के रूप में कीमत चुकायी जाती। सब-कुछ इतना आसान है, यह पहले समझती तो पहले ही जान बचती। लड़का भी खा-पीकर तंदुरस्त होता। धौली को लगा कि वह बहुत बेवकूफ थी।

एक आदमी और भी सब देख रहा था। वह था कुन्दन। कुन्दन समझता था कि जो सबसे काबिल होता है वही जीवित रहता है। धौली ने जिन्दा रहने की राह पहचान ली, अपनी प्रतिहिंसा को खो दिया। कुन्दन जल-भुन कर मरा जा रहा था। अब वह बड़ी मोहक दुसाधिन थी।

एक दिन कुएँ के पास धौली को पानी लेते देखकर कुन्दन ने सनीचरी से कहा, 'उसका छुआ पानी तू पीती है?'

'किसका?'

'उस धौली का?'

'उससे तुम्हें क्या, देउता? उसके यहाँ आजकल सब जात वाले जाते हैं। हम लोगों ने मान लिया।'

'क्यों?'

'उसने कोई दोस किया है?'

'रंडी बन गयी है।'

'बेवा रांड तो थी ही। तुम्हारे भाई ने उसे बेस्या रंडी बना दिया। वह न बनती तो तुम्हारे भाई का बेटा जिन्दा रहता? अब तो सब खुश हैं। तुम्हारा दोस्त और ठेकेदार भी। उसके कुली लोग अब इधर-उधर मजा लेने नहीं जाते।'

'तेरा मुँह बहुत बड़ा हो गया है।'

'जाओ, जाओ। यह सनीचरी न होती तो तुम्हारी मैया और बहू जिन्दा न रहती।'

कुन्दन समझ गया कि वह हार गया। और कुछ न कह कर वह घर

दो

आश्विन के अन्त में धौली के लड़का हुआ । सनीचरी ने ही प्रसव कराया। नाल कटा। बोली, 'धौली का बेटा है, इसी से इतना गोरा हुआ है।'

धौली की माँ से पहले ही सनीचरी की बात हो गयी थी कि दवा देकर धौली को माँ बनने की क्षमता नष्ट कर देनी होगी। सनीचरी ने दवा दी। धौली से बोली, 'खाने में बहुत खराब है, लेकिन शरीर ठीक हो जायेगा।'

धौली की माँ बोली, 'मर तो नहीं जायेगी ?'

'न, न। कुंदन मिश्र की बहू को नहीं दी क्या ? वह क्या मर गयी ?'

'शरीर में घाव तो नहीं हो जायेगा ?'

'न।'

'न हो तभी अच्छा है।'

'अब क्या करेगी ?'

'जो भगवान करें।'

'मिश्रीलाल की तो सादी हो रही है।'

'चुप-चुप। धौली सुन लेगी।'

'उसके बाद ?'

'जो नसीब में है वही होगा।'

'तेरे दरवाजे पर ढेले बरसेंगे।'

'मालूम है।'

'मिसरीलाल को सादी के बाद वे धनवाद में ही रखेंगे। साइकिल की दूकान करा दी है।'

'धौली से बताया था।'

'मैंने तो तुझसे कहा था कि धौली की देखभाल देउता न करें तो मैं जंगल के ओवरसियर बाबू से भेंट करा दूँगी।'

'अभी वह बातें रहने दो।'

सनीचरी गाँव की मथरा थी और दवा-दारू जानती थी, इसलिए मिश्र लोग भी उसे तंग नहीं करते थे। धौली को देखकर सनीचरी के दिल में कहीं कुछ लगा और वह अपनी आदत के मुताबिक धौली के पक्ष में जनमत बनाने

लौट गया। सनीचरी की जरूरत तो इस गाँव के घर-घर में थी। उसकी दवा के बिना गाँव चल नहीं सकता था।

कुन्दन धनबाद जाकर छोटे भाई को बहुत धमका आया। बोला, 'चाहता है तो उसे जमीन दे, चाहे रुपये। गाँव मे तेरे लिए बिगाड़ने वाले घुस आये हैं।'

'क्यों?'

मिश्रीलाल का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। कुंदन के दिल में ईर्ष्या की खुशी थी। कसकी के लिए भाई के दिल मे अभी तक प्यार है। और उसी प्यार पर कुन्दन ने चोट मारी थी। शा—बाश! लड़का नामरद है। ब्राह्मण आजाद होता है—कोई घमड भी नही। मरद मरद-सा होता है। कुन्दन अगर छोटे भाई की जगह होता, तो अपनी रखैल को क्या हनुमान मिश्र के कहने से राह पर छोड़ देता? इस लड़के ने नामर्दी का काम किया है। उसे मर्द बनना चाहिए। अछूत को पैरों तले रखना होगा। कभी दया-माया भी दिखानी होगी, लेकिन मरद बनना पड़ेगा। नही तो कुन्दन अकेले कैसे कर सकेगा? इतनी खेती, इतने बाग-बगीचे, इतनी उर्वरा अछूत रमणियाँ, इतना सूद का साम्राज्य—सब-कुछ सम्भालना होगा।

'क्यों? तेरी प्यारी दुसाधिन थी, थू! बराँभन से प्यार कर बेटे की माँ बनी। अब, (गन्दा इशारा कर कुन्दन ने कहा) जिस दरवाजे से शेर घुसा था उस दरवाजे मे सूअर, छछूंदर, चूहे—सभी घुस रहे हैं।'

'नहीं, कभी नही।'

'हाँ, बिलकुल हाँ। वे सब बराँभन की हँसी उड़ा रहे है।'

'कभी नही।'

'एक सौ बार हाँ। नामरद! डरपोक! तूने हनुमानजी के मुंह पर क्यों कहा कि मैं उसे रखूँगा? साली मेरी रखैल है। उसे घर-ज़मीन देने में हनुमानजी ने ना नही की थी क्या? मैंने सुना? थू! तेरे प्यार पर थू! दुसाधिन से प्यार। जाओ, मजा लूटो। पंजार से—जूते से पचायत करो। नामरद! नामरद! तूने बराँभन के नाम पर थूक दिया।'

'मैं अपनी आँख से देखूँगा और तब मानूँगा। झूठ हुआ तो...।'

का प्रयत्न करने लगी।

मिश्र की पत्नी को वात-दर्द की दवा के लिए फूँका हुआ तेल देने जाकर बोली, 'धौली के लड़का हुआ है।'

'होने दे।'

'तुम्हारे बेटे से मिलता है।'

'कौन कहता है? झूठ है।'

'ऐसन न कहो, मैया! तुम्हारे बेटे के साथ धौली के प्रेम-प्यार की बातें सब जानते हैं। तुम लोगों के कितने ही बेटा-बेटी हम लोगों के यहाँ हुए, कभी हनुमान जी फैसला करने आये?'

'तूने जो बात चलायी तो कहती हूँ...।'

'क्या?'

'उन लोगों को हटा सकती है?'

'कहाँ?'

'जहाँ भी हो। जहाँ मिश्रीलाल की शादी हो रही है, वह लड़की भी अमीर है, घर भी नामी है। यह सब सुनकर वे ख़फ़ा हो जायेंगे।'

'रुपये दे दो, चले जायेंगे।'

'कितना रुपया?'

'हजार रुपये दो।'

'देखें, बड़े बेटे से कहूँगी।'

'तुमने देखभाल नहीं की, खाने को भी नहीं दिया, इस पर भी तुम लोगों का नाम लग गया। किसी दिन गंजू के घर तुम्हारे बड़े बेटे और पति ने गड़बड़ नहीं की? हमेशा खाने को दिया। अबकी क्या हुआ कि तुमने भगवती बन कर मुँह फेर लिया?'

'धौली की माँ ने लोटा चुराया था...।'

'ऐसा मत कहो, मैया!'

'क्या करूँ, वही बता?'

सनीचरी उनके वृद्ध और धोबिन के यहाँ जानेवाले पति को काबू में रखने की दवा देती थी, इसलिए मिश्र-पत्नी ने उसके मुँह से इतनी बातें सह लीं।

कुन्दन चालाक था, विजयी की हँसी-हँसा। बोला, 'हमको मार देना। तेरा तो बदूक का लाइसेंस है न ?'

आग में और साँप के ज़हर में जलते-जलते मिश्रीलाल दहाड़ आया। बस-स्टॉप पर कोई धौली राह न देख रही थी।

रात होते ही उसने धौली के दरवाज़े पर ककड़ी मारी, और हरी चूड़ियाँ, लाल साड़ी पहने, बालों में तेल लगाए, वेणी बाँधे धौली ने उसके लिए दरवाज़ा खोल दिया।

मिश्रीलाल को देखकर वह पहले तो बहुत मुग्ध गयी, फिर अपने को सम्भालकर कठोर चेहरे और कठोर स्वर में बोली, 'देउता! सरकार! क्या अन्दर आइयेगा ?'

मिश्रीलाल अन्दर गया। ढिबरी नहीं, लालटेन जल रही थी। माचे पर अच्छी-सी दरी और तकिया था। उसके नीचे मडआ का बोरा और तेल का टीन था।

'तू रंडी बन गयी है ?'

'हाँ।'

'क्यों बनी ?'

'तुम मज़ा लूटकर भाग निकले। उसके बाद मैंने सोचा कि मैं क्यों मरूँ ? तुम सादी करो, दुकान चलाओ, दुल्हनिया को लेकर सिनेमा दिखाओ। मैं मरूँ ? क्यों ? क्यों ? क्यों ?'

'अब मैं तुझे मार दूँगा।'

'मारो।'

'बरांभन के बेटे को पालेंगे अछूत। सारे अछूत मिलकर। मैं तुझे मार डालूँगा।'

'न, तुम नामरद हो।'

'नामरद मत कह, धौली—जो बड़े भाई ने कहा—सो तू मत कह। तुझको दिखा दूँगा कि मैं मरद और बरांभन का बच्चा हूँ।'

मिश्रीलाल और कुन्दन और हनुमानजी ने कुछ ही दिनों में पंचायत बुलायी। पंचायत में लोगों की राय नहीं ली गयी। हनुमानजी बोले, 'धौली गाँव में रहकर वेश्या का कारबार नहीं चला सकेगी। उसे शहर जाकर,

'कुछ तो करो।'

'बड़े बेटे से कहूँ।'

बड़ा लड़का कुन्दन बोला, 'ये बेकार की बातें छोडो। आज लडका हुआ है, कल घर मे ग्राहक घुसायेगी खचडी औरत। मैं इन्तजाम कर रहा हूँ, शादी होने के बाद भी मिश्रीलाल यहाँ नही आयेगा।'

मिसिर की पत्नी बहुत निश्चिन्त हो गयी और धौली की बात भूल गयी।

लेकिन हनुमान जी बोले, 'यह न होगा। शादी होगी, बहू घर मे आयेगी, उसके बाद दोनों धनबाद जायेंगे। गाँव क्यों नही आयेंगे ? उस दुसाधिन के डर से ? वह क्या करेगी ?'

धौली को सब पता चला। जानकर लडके को लेकर सोचने लगी। माँ का काम छूटने को हो रहा था। बेटे को माँ के सर पर लिये बैठी थी। बकरियाँ एक-एक कर बिक गयी थी। उससे क्या पूरा पडता है ? कब तक चलेगा उससे ? उसके बाद ? उसके बाद ?

मिश्रीलाल का नाम सोचते ही उसका दिल बैठने लगता। इतना प्यार, इतनी बातें क्या सब धोखा थी ? न, न, ऐसा नही हो सकता। जगल और झरने की कितनी कहावतें है, कितनी कहानियाँ है। चाँदनी रात मे उस झरने मे परी उतरती है और परी को देखकर बहुत तेज दरोगा मक्खनसिंह पागल हो गया था। वह कहानी झूठी, बिलकुल झूठी लगती है। गजू लडकी हुलनी अपने देवर के प्रेम मे फँस गयी। और पचायत के दड से दोनों ने उस जगल में जाकर जहरीले फूल के बीज खाकर आत्महत्या कर ली। दोनों धौली की जान-पहचान के थे, फिर भी लगता था कि किस्सा झूठा या किंवदन्ती था। उसी जगल मे उसी झरने के पार, कभी एक दुसाधिन से किसी युवक ब्राह्मण देवता ने कहा था, 'तू मेरी कोयल है, मेरी साँवली दुलहनिया !' वातास में झरे बहुत-से लाल फूलों के बिछौने पर दोनो एक-दूसरे के शरीर मे लीन हो जाते। दुसाधिन के पाँव मे काँटा गड़ने पर देवता ने उस पाँव का काँटा निकाल कर पाँव को चूम लिया था। यह सब कब नही हुआ ? अब तो सब विश्वास न करने लायक किस्से थे। बस, गोद मे लेटा यह बच्चा सत्य था।

रांची जाकर नाम लिखाना पड़ेगा। नही तो धौली का घर जला दिया जायेगा, माँ-लड़की-बच्चा जल मरेंगे। गाँव की छाती पर बैठकर इतना बडा अधर्म न चलेगा। अभी भी गाँव मे ब्राह्मण रहते हैं। उनके घर में रोज शिव और नारायण की पूजा भी होती है।'

धौली ने कहा था, 'बराँभन के लडके को पालने-पोसने के लिए बराँभन ने खरच क्यो नही दिया ?'

'चुप रह, रडी !' कहकर उन्होंने उसे जूता फेंक कर मारा।

मिश्रीलाल बोला, 'अब पता चला, मैं हूँ मरद और बराँभन का बच्चा हूँ !'

दुसाध-गजू-धोबी आदि ने यह फैसला मान लिया। कहाँ था रांची शहर, कहाँ जायेगी धौली ?

कुन्दन बोला, 'मेरा ठेकेदार उसे ले जायेगा। कल ही।'

सवेरे की बस से धौली और ठेकेदार बस पर बैठे। धौली के हाथों में पोटली थी। आँखें सूखी हुई और बहुत बड़े आघात से खोई-खोई थी। लग रहा था, मानो उसका दिमाग़ काम न कर रहा हो। चलना-फिरना सब यंत्रचालित-सा हो रहा था। जैसे वह खिलौना हो और लोगों के चलाने से चल रही हो।

बस के पास खडी बच्चों को गोद में लिये उसकी माँ फूट-फूटकर रो रही थी। लेकिन बच्चो ने हाथ बढाया। धौली धीरे से बोली, 'रात के लिए उसके वास्ते थोडा-सा गुड़ रख लेना। रोने पर खिला देना।'

माँ बिखर कर रोने लगी, 'इससे अच्छा जेठ के साथ क्यो न रही ?'

धौली के चेहरे पर एक दुर्बोध्य करुणा की मुस्कराहट फूट पड़ी। वैसा होने पर वह एक व्यक्ति की रंडी होती। अब तो वेश्या-रडी बनने जा रही है। उस तरह रडी अकेले आदमी की होती। अब जो वह रडी बनेगी वह एक समाज की सदस्य होगी। व्यक्ति से समाज की शक्ति बहुत अधिक होती है, और जिन्होंने उसे रडी बना दिया वे ही सारे समाज को चलाते है। वे ही सबसे अधिक शक्तिशाली हैं। माँ इतनी बातें नहीं समझ सकती। धौली समझती है। इसीलिए वह मुस्करा सकी। वह कह सकी, 'माँ, गुड़ रख लेना। घर मे बत्ती भी रखना, अँधेरे मे वह डरेगा।'

मिश्रीलाल वचन देकर भी उसे पूरा न कर सकता था, न उसने पूरा किया। लेकिन धौली के पास कहने को कुछ नहीं था। अब क्या होगा? लड़के को देखकर क्या मिश्रीलाल को दया आयेगी? थोड़ी-सी खेती दे देगा?

मिश्र लोगों ने इसके पहले तो ऐसा किया था।

धौली का मन कह उठा—नहीं, नहीं।

धौली कुएँ से कैसे पानी भरने जायेगी? सब औरतें मिश्रीलाल की शादी और बरात की बातें करेंगी। बरात के गाँव में घुसने पर, अलग रह कर दुसाधिनें भी नाचती और गाती थीं। मिश्रों के घर जाकर चिउड़ा-लड्डू-सत्तू और पैसे पातीं। धौली कैसे नाचने जायेगी? कैसे गायेगी? 'मैं नाचत मैं गावत बरात आयल रे।'

धौली क्या करे?

सनीचरी मिश्र की पत्नी की दो बातें सुनकर दुसाध टोली चली गयी। बोली, 'देउता के लड़के ने धौली को खराब किया, तुमने भी मुँह मोड़ लिया। तुम ही बताओ, लड़की कहाँ जाये?'

'धौली को किसी ने खराब नहीं किया। वह प्यार करने गयी थी, और जात-पाँत के लड़कों के मुँह पर लात मारी थी। उसके भले-बुरे में हम नहीं है। जो चाहे सो करे।'

'क्या करेगी?'

'देखा जायेगा। उसके प्यार का देउता क्या करता है, कितनी देख-भाल करता है!'

मिश्रीलाल ने कुछ न किया। सिर झुकाये हुए बरात की शोभा बनकर गाँव में आया। धौली के घर बत्ती न जली। दुसाध, गंजू और धोबी टोली में घर-घर शराब-सत्तू-लड्डू और नये कपड़े बाँटे गये। ऐसी धूमधाम का ब्याह इस अंचल में कभी नहीं हुआ था। झरने के किनारे बैठे-बैठे धौली ने आसरा देखा। राह देखती रही। मिश्रीलाल नहीं आया।

धौली सनीचरी के पैरों पर गिर पड़ी।

सनीचरी मिश्रों के घर से लौटकर बोली, 'वह बहुत गुस्सा है।'

'क्यों?'

रोहतगी कम्पनी का ड्राइवर धौली की ओर देख नहीं पा रहा था। उसने हार्न बजाकर बस चला दी। धौली ने एक बार भी मुड़कर न देखा, क्योंकि देखने से मिश्रों के मन्दिर का पीतल का त्रिशूल दिखायी पड़ता।

कुन्दन का ठेकेदार भी धौली की ओर देख न पा रहा था। उसने बिना देखे ही कहा, 'जरा आराम कर ले। रांची बहुत दूर है।'

बस ने स्पीड बढ़ायी। रांची और धौली के बीच की दूरी कम होती जा रही थी। धूप चढ़ रही थी। हर सुबह की तरह ही आकाश नीला था, पेड़ भी हरे थे। उसे पता नहीं चला कि रोजाना के हिसाब से प्रकृति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, अपने आघात की पीड़ा से उसकी आँखों से आँसू बहे चले जा रहे थे। आज से सब-कुछ बदल जाने की बात थी! स-ब! धौली के रंडी बनने के दिन! क्या प्रकृति ने भी धौली के रंडी बनने की बात मान ली है, उस प्रकृति ने जो मिश्र-परिवार की सिरजी हुई नहीं है? यह वृक्ष-आकाश-धरती—ये भी मिश्रों के हाथों बिक गये हैं?

'उसकी माँ ने तेरी देखभाल के लिए जो बदोबस्त किया उसे तुम लोगों ने नहीं लिया।'

'यह बात कही?'

'हाँ!'

'तो तू उसे बुला ला। कह देना कि न आया तो मैं लड़के को लेकर नयी बहू के पास जाऊँगी। मुझे मारेंगे तो बड़े देउता जान से मार देंगे। फिर भी जाऊँगी।'

मिश्रीलाल आया। कुछ बोला नहीं। आँखों में समझ में न आने योग्य प्रश्न था। धोली समझ गयी। उसका आकर्षण आज भी मिश्रीलाल के हृदय को खींचता था। खुश हुआ। कोई-कोई खुशी मन को स्वार्थ-बोध से अलग कर देती है और सच बात निकल आती है।

'तुमने सनीचरी से कहा था कि तुम्हारी माँ की दी हुई भीख हमने नहीं ली?'

'मैया ने यही कहा।'

'थू! झूठे पर थू! तुम्हारी मैया ने कुल मिला कर दो किलो मडुआ दिया था, वह भी दस दिन में। उसके बाद मेरी माँ को चोर कहकर भगा दिया।'

'मुझे तो यह नहीं मालूम था।'

'तुमने मेरा सत्यानास क्यों किया?'

'मैं तुझसे प्यार...।'

'थू! तुम्हारे प्यार पर थू! अगर जबरदस्ती से धरम नास करते तो एक बीघा जमीन तो मिलती। तुम नामरद हो। तुम्हारा भाई मरदबच्चा है। उसने झालो को बच्चा दिया, और घर-मकान-खेती भी दी। तूने क्या किया?'

'जो कुछ किया वह अपनी इच्छा से नहीं किया।'

'दूसरों की इच्छा से सादी कर सकते हो, दुकान ले सकते हो, अपनी इच्छा से बस गरीब को जान से मार सकते हो? तुम्हारे लिए हमारी गाँव की बिरादरी भी खफा हो गयी।'

'तुझे मैं...।'

रूदाली

टाहाड़ गाँव मे गंजू और दुसाध लोगों की सख्या अधिक है। सनीचरी जात की गजू है। गाँव के और सारे लोगो की तरह सनीचरी का जीवन भी बेहद गरीबी मे बीता है। वह शनिवार को पैदा हुई थी, इसीलिए भाग्य मे इतना दुख था, यह बात उसको सास ने कही थी। जब यह कहा था उन दिनो सनीचरी बहू थी। जबान खुली न थी। सास जब मर गयी तब भी सनीचरी बहू ही रही। सास को जवाब न दे सकी। अब बीच-बीच मे उसकी बात याद आती। अकेले मे, अपने ही दिल मे वह कहती, ओह! शनिवार को पैदा होने से सनीचरी नाम पड़ा, बहू अमगल—मनहूस हो गयी। तुम तो *सोमरी थी, किस सुख में जीवन बिताया? सोमरी, बुधनी, मगरी,* बिसरी—किसका जीवन सुख से बीता?

सास के मरने पर सनीचरी रोयी नही। उसके पति और जेठ दोनों को मालिक-महाजन रामावतारसिंह ने हवालात मे बन्द करवा दिया था। एक ढेरी गेहूँ चोरी हो जाने पर रामावतार इतना ख़फ़ा हो गया कि टाहाड़ के सारे दुसाधों, सारे गंजू मर्दो को जेल में भरवा दिया। सास शोथ-ज्वर मे भोग-भोगकर 'खाने को दे—खाना दे' कहते-कहते, 'हाय अन्न—अरे अन्न' कहते-कहते हग-मूत कर मर गयी। बरसात की बूँदा-बाँदी वाली रात थी। सनीचरी और उसकी जिठानी ने मिलकर बुढिया को जमीन पर उतारा था। रात बीतने पर दोप लग जायेगा, घर में एक डब्बा अनाज न था, प्रायश्चित के लिए कौडी कहाँ से मिले? रात का मुर्दा रात मे ही निकल

'रुपये दूँगा ? कितने रुपये ? तुम्हारे बेटे को आदमी बनाऊँ, उतना रुपया दो।'

'दूकान से भेजूँगा।'

'तुम तो झूठी बातें करते हो।'

'सच, भेजूँगा।'

'देखा जायेगा।'

'अभी...!'

'लाओ।'

धौली ने सौ रुपये के नोट आँचल में बाँध लिये। उसके बाद बोली, 'अब टाहाड में भी सौ रुपये से ज्यादा दिन नहीं चलते। जब तुम्हारे साथ सम्बन्ध हुआ, मैं तो तभी मर गयी। अगर रुपया नहीं भेजोगे तो धनबाद जाऊँगी और तुम्हारे बेटे को तुम्हारी गोद में डाल कर चली आऊँगी।'

'बता ! तू जो कहे वही मुझे मानना पड़ेगा।'

'जिनगी पर खाक डाल दी देउता, दो बातें सुनकर ऐसा बुरा लगा ? या पैसा होने पर चमड़ा ऐसा मुलायम हो जाता है ?'

धौली चली आयी। माँ से बोली, 'तू बात कर ले। भालातोड़ में मौसी के यहाँ और उसमें इज्जत भी देनी होगी, दूँगी।'

'ऐसा गुस्सा ?'

'हाँ, इज्जत गँवानी होगी तो वहाँ गँवाऊँगी। यहाँ नहीं।'

'वहाँ ज्यादा पैसा है ?'

'मुझे पता है ?'

दूसरे दिन मिश्रीलाल गाँव छोड़कर बहू के साथ धनबाद लौट गया। बस में बैठते वक्त उसका साला बोला, 'वह लड़की कौन है ?'

'कहाँ ?'

'वही जो गोद में बच्चा लिये है ?'

'एक दुसाधिन है।'

'ऐसी सुन्दर ?'

'होगी, मैंने देखा नहीं।'

बस चल पड़ी।

जाये, इसके लिए सनीचरी ही उस बरसात की रात में पड़ोसियों को बुलाने के लिए निकली थी। हाथ-पाँव जोड़कर सबको लाने के लिए, बुढ़िया का दाह कराने का प्रबन्ध करने में सनीचरी ऐसी परेशान थी कि रोने का मौका ही न मिला। नहीं मिला तो न सही। बूढ़ी इस तरह कुढ़ा-कुढ़ाकर मरी कि रोने पर भी तो सनीचरी का आँचल न भीगता।

जिन्दा होते हुए बुढ़िया अकेली न रह पाती थी। मर कर भी अकेली न रह सकी। तीन बरस बीतते-न बीतते जेठ-जेठानी—सब साफ हो गये। रामावतारसिंह उस समय गाँव से दुसाधों, गंजुओं को भगाने में लगा हुआ था। रामावतार भगा देगा, इसी डर से सनीचरी उस समय काँटा बनकर रही। जेठ और जिठानी के मरने पर भी रोना न हुआ। लाश जलायें या सस्ते में श्राद्ध निवटाने की बात सोचें? इस गाँव में सभी आदमी दुखी थे। पड़ोसियों का दुख समझते थे। इसीलिए खट्टा दही, बूरा और धान का चिउड़ा पाकर खुश हो गये। सनीचरी और उसका आदमी जो नहीं रोयें, उस पर भी सारे लोगों ने कहा, 'क्या अब रोया जायेगा? तीन बरस में तीन मर गये। आँसू कलेजे में पत्थर बनकर जम गये हैं।'—सनीचरी ने मन-ही-मन में चैन की साँस ली। मालिक-हुजूर का खेत मँझाकर जो मोटा-झोटा मिल जाता वही इतने जीवों का सहारा था। दो मर गये, अच्छा हुआ। अब खुद पेट भरकर खायेंगे।

पति के मरने पर न रोयेगी, यह तो सनीचरी ने सोचा नहीं था। फिर उसके ऐसे करम कि वही हुआ। उस समय उसका इकलौता लड़का बुधुआ छह बरस का था। सनीचरी लड़के को घर पर छोड़ बड़ी मेहनत से घर चलाने के लिए मालिक के घर चली गयी। फटाफट लकड़ी काटकर चैले कर दिये, जानवरों के लिए घास ले आयी, फ़सल के दिनों में खेतों पर जाकर फ़सल काटा करती थी। जेठ को उसके ससुर की दी हुई ज़मीन से दोनों घर चलाते। सनीचरी ने दीवारों पर तसवीरें बनायी थीं। आँगन में बुधुआ का बाप बाड़ उठायेगा। आँगन में मिर्चा, बैंगन उगायेगा। सनीचरी हुजूराइन से बछड़ा-बछिया लेगी—सब ठीक था। सनीचरी का पति बोला, 'चल, तोहरी में बैसाखी मेला देख आयें। शिवजी की पूजा भी चढ़ायेंगे। सात रुपये तो जमा हो गये हैं।'

तीन

किसी-किसी के जीवन में बहुत उम्मीदें पूरी हो जाती है। धौली के जीवन में आशाएँ न थी, आशाओं का पूरा होना भी न था। धौली की मौसी ने कोई खुशी न दिखायी। मिश्रीलाल के दिये सौ रुपये भुनाकर खाते-खाते रुपये खतम हो गये। मिश्रीलाल ने कोई ख़बर न भेजी, और न कोई रुपया। रुपयों के मामले में एक बात का और पता चला। एक बार मिश्रीलाल ने ड्राइवर के हाथों बीस रुपये भेजे, उन्हें ड्राइवर मार गया। धौली की माँ की एक बकरी चोरी हो गयी। अन्त में बाक़ी दो को भी बेच देना पड़ा, और अगर बेचने वाले को बहुत गरज हो तो जो होता है वही हुआ। उन्हें कुछ क़ीमत न मिली।

धौली समझती थी कि गाँव वाले, मिश्र-परिवार और ठेकेदार के कुली उसकी बड़ी उत्सुकता से देखभाल करेंगे। वे देख रहे थे कि धौली का बेटा मडुआ का माड़ पीकर बड़ा हो रहा है। देखा कि धौली की माँ जंगल मे जाकर कंद-मूल खोजती है। देखा कि सनीचरी बीच-बीच मे पल्लू मे मकई की खीलें लेकर उसके घर जाती थी। देखकर उन्होंने समझ लिया कि मिश्रीलाल ने अन्त मे उन्हें बिलकुल छोड़ दिया है।

एक दिन धौली के घर पर पत्थर बरसे।

'जो भी हो, मैं फरसा लेकर सोती हूँ।' धौली चीखी। किसी ने सीटी बजायी और चला गया।

फिर ढेला आया। धौली चुपचाप रही। फिर ढेला।

'अपनी माँ-बहिन के पास जाये,' धौली चिल्लायी।

माँ बड़बड़ा कर बोली, 'कितने दिन तक भगायेगी ?'

'जितने दिन भगा सकूँगी।'

'तू कर सकती है। मुझसे न होगा।'

'मैं भी नही कर सकती हूँ, माँ !'

'तो बता क्या करेगी ?'

'माँ, सहर जाकर भिखमंगी बन जाऊँगी।'

'भीख कौन देगा ? तुझे देख कर लोग पीछे न लग जायेंगे ?'

मेला खूब जोरों पर था। बड़े-बड़े रईस लोग शिवजी के ऊपर घड़ों दूध चढ़ा रहे थे। वही दूध कई दिन से मिट्टी के चहबच्चे में जमा हो रहा था। दूध से खटास की दुर्गन्ध आ रही थी, मक्खियाँ भिनभिना रही थीं। पंडों को रुपया देकर उस दूध के गिलास पीकर तमाम लोगों को हैजा हो गया, बहुतेरे मर गये। बुधुआ का बाप भी हैजे में मरा था। उन दिनों अंग्रेजों का राज था। गौरमेंट के आदमी हैजे के सारे रोगियों को उठा-उठाकर अस्पताल के तंबू में ले गये। केवल पाँच तम्बू थे। रोगी साठ-सत्तर थे। तम्बू के चारों ओर काँटेदार तारों का घेरा था। सनीचरी और बुधुआ घेरे के इस पार बैठे थे। बैठे-बैठे ही सनीचरी को पता लग गया कि बुधुआ का बाप मर गया। गौरमेंट के आदमियों ने रोने का मौका न दिया। लाशों को उन्होंने ही जलाया। सनीचरी और बुधुआ को घसीट ले जाकर हाथ में कॉलरा की सुई लगा दी। उससे ही जो दर्द हुआ उसी दर्द से माँ-बेटे रोने लगे। रोते-रोते सनीचरी ने कुरुडा नदी के जल में स्नान कर माँग का सिन्दूर पोंछ डाला, हाथों की चूड़ियाँ फोड़कर गाँव लौटी। लाख की चूड़ियाँ नहीं थीं। मेले में जाकर पहनी थीं। तोहरी के एक पंडे ने कहा, 'यहाँ रह-कर पहला पिंड देती जा। विदेशी भूमि में आकर बुधुआ का बाप मरा है।' उसकी बात मानकर सवा रुपया दक्षिणा देकर बालू और सत्तू का पिंड सनीचरी ने दिया। लेकिन उस पर क्या गाँव में कम तूफान उठा था? रामावतार की स्थापित मूर्ति के सेवक मोहनलाल ने कहा था, 'ओ, ! बालू का पिंड और नदी के जल से ! बुधुआ मानो रामचन्द्र हो। बालू से दशरथ का पिंड दिया था।'

'धरमभन ने कहा था न?'

'तोहरी के ब्राह्मण को टाहाड़ के आदमियों के किरिया-करम के नियम पता है? उसके कहने से पिंड देने से तू मेरा सिर नीचा कर आयी है।'

मोहनलाल को सन्तुष्ट करने, रामावतार से 'पाँच बरस खेत पर बेगारी मेहनत कर पचास रुपये चुका दूँगी' लिखे पर अँगूठा लगा बीस रुपये लेकर उन रुपयों से बुधुआ के बाप का श्राद्ध पूरा कर, नन्हे बच्चे को 'हाय-भात ! दे भात !' करते सनीचरी ऐसी परेशान रही कि बुधुआ के बाप के लिए रोने की फुरसत ही न मिली। एक दिन घोर गर्मी में जलते-जलते,

'माँ, क्या मेरी ऐसी सूरत है कि लोग पीछे लग जायें ?'

'नही तो ढेले वरसते ?'

'उस लडके के लिए. .।'

'मुझसे और सहा नही जाता। तू और तेरा बेटा ! नही तो मैं कब की सनीचरी के घर चली जाती।'

'कल मैं ठीक कर लूँगी।'

'क्या करेगी ?'

'खेत गोड़ूंगी।'

'तमाम लोग दिन-भर खेत गोड़ते है। मिलता क्या है ? कुछ नही !'

'देखूँ, क्या करूँगी ?'

धौली सवेरे उठकर पारसनाथ की दूकान पर गयी। बोली, 'न हो तो अपनी दूकान मे झाड़ू लगाने का काम दो। बिना खाये मर गयी।'

पारसनाथ बोला, 'यह अढैया-भर मड़ुआ ले जा, धौली ! काम कहाँ है ? काम कुछ नाही हो, और तोहरा के काम देय माँ बड़ा देउता गुस्सा होवे।'

'काहे ? हम उनका का किहा ?'

'भाई का वास्ते।'

मड़ुआ को आँचल मे बाँधकर धौली पेड़ के नीचे बैठ गयी। कुन्दन मिश्र ने उसे हाथ से नही, भात से मारा। भाई को प्यार करने की सजा मिली। यह मड़ुआ कितने दिन चलेगा ? पानी की तरह घाटो बनेगा ?

माँ उस मड़ुए को देखकर उस समय कुछ न बोली। खाने के वक्त बर्तन को रख कर बोली, 'तू और तेरा दुलारा खाय ! मैं तो चली जहाँ सींग समायें। पेट सुखा कर तो मर न पाऊँगी।'

'खायेगी नही ?'

'न। अभागिन, और कुछ नही कर सकती है तो मर तो सकती है।'

'तो मरूँगी।'

धौली मरने गयी। उसी झरने के पानी मे। उसके मरने पर माँ की देख-भाल गाँव वाले करेंगे। बच्चा ? धौली के मरने पर माँ से हो सका तो उसे बचा लेगी, नही तो वह भी मर जायेगा।

लेकिन उससे मरा नही गया। छपी लुगी और शर्ट पहने एक आदमी,

रामावतार के खेत में खर-पतवार निकालते-निकालते सनीचरी अचानक खर-पतवार फेंककर एक पीपल के पेड़ की छाया के नीचे जाकर बैठ गयी। उसने दूसरे मजदूरों से कह दिया, 'आज मैं बुधुआ के बाप के लिए रोऊँगी, कलेजा फाड़कर रोऊँगी।'

दूलन गजू ने पूछा, 'आज ही क्यों रोयेगी ?'

'तुम लोग मजूरी लेकर घर जाओगे। मैं पुर्जा लिखकर बैठी हूँ। मैं जाऊँगी चार भुट्टों का सत्तू लेकर। इसी से रोऊँगी। मुझे रोना नहीं आता ?'

'उसी दुख से रोयेगी ?'

'लटुआ का बापू, तू बहुत खचड़ा है।'

'हिसाब करके देखा है ? एक बरस हो गया।'

'एक साल !'

'हाँ रे।'

'एक साल नहीं हुआ ?'

'पेट की आग में समय बीत जाता है।'

'मैं मर जाती तो !'

'बुधुआ कहाँ जायेगा ? पागलपन मत कर। सुन, पुर्जा जो लिखा सो लिखा। अब देख, मैं काम करता हूँ आराम के साथ—आराम लेकर। जितने दिनों काम है, उतने दिनों मजूरी है। तू जान देकर उस हरामी का काम क्यों करती है ? आराम कर ले। जितने दिन काम है उतने दिन खाना है।'

उस दिन सनीचरी का रोना नहीं हुआ।

गाँव के लोगों में सारी बातें सबकी आँखों के आगे आती हैं। सनीचरी जो रोयी नहीं, उस पर बहुत बातें हुईं। सनीचरी ने उन बातों पर ध्यान ही नहीं दिया। रामावतारसिंह के पुर्जे का रुपया चुक नहीं रहा था, सदा था कि चुकने वाला भी न था। लेकिन सनीचरी उन दिनों एक भारे बछड़े की देखभाल करती थी। अशरफी की माँ उसकी हिफाजत में बछड़े को छोड़कर गयाजी गयी थी। तभी रामावतार का चाचा मर गया, उसके मरते समय उस बछड़े की पूँछ बुड्ढे को पकड़ा दी गयी। वह वैतरणी के पार

होने का अचूक इलाज था। सनीचरी ने देखा कि घर में बहुत-से आदमी थे। सब रामावतार के कुटुम-कबीले वाले थे। सनीचरी के दिमाग में शरारत सूझी। उसने दरवाजे के बाहर खडे हो चिल्लाकर कहा, 'गोड लागी, माई-बाप ! गरीब सनीचरी आप लोगन की सेवा मे आज लगी है। सो एक अर्जी है। उस पुर्जे का रुपया चुकती लिख दें।'

चाचा मरने के माने पचास बीघा उपजाऊ जमीन और हत्थे चढ़ना। पता नही क्यों, रामावतार ने सनीचरी की बात मान ली ! उसके लिए बाद मे रामावतार को बहुत बातें सुननी पडी। दूसरे जमीदार-महाजनों ने कहा, 'पुर्जे का रुपया चुक गया जब मान लिया, तब से अछूतों का शोर बढ गया है। रुपयों की कोई बात नही। नागरा जूते की धूल से भी कम दाम का है। लेकिन पुर्जा वह जुआ है जिसे कंधे पर लेकर बैल मेहनत करता है।'

रामावतार बोला, 'चचा मरे, मन मे दुख था, बडा उदास लग रहा था, भाई ! लगता था, जो भी जो कुछ चाहता है उसे वह देकर सन्यासी बनकर चला जाऊँ।'

रामावतार के लड़के लछमन का जब ब्याह हुआ तो रामावतार ने सनीचरी से ब्याह के गाजे-बाजे का खर्च लिया था।

यही सब सोचते-सोचते और पेट का धन्धा करते-करते सनीचरी रोना भूलती जा रही थी। बुधुआ बडा हो गया था। बाप की ही तरह गरीबी का जुआ उसने अपने कधों पर रख लिया। बचपन में ही ब्याह हो गया था। वह गृहस्थी करने आयी। बुधुआ का एक बेटा हुआ। पत्नी डाइन-सी थी। हाट के लोगो से मिलजुल कर, पता नही, क्या पी आती थी ! दिनों दिन वह फूलकर कुप्पा हो गयी। रामावतार के बेटे लछमन के गेहूँ के बोरे ढोते-ढोते बुधुआ को जाने-पहचाने रोग ने पकड लिया—खाँसी ने। यक्ष्मा था। रात को बुख़ार रहता, सवेरे पसीना आकर उतर जाता। खाँसी के साथ खून आता था। आँखो के नीचे कालिख थी। यह देख-देखकर सनीचरी की छाती में जो हवा चिता की आग से उडकर आसमान में फैल जाती, वही आकर लगती। बुधुआ की ओर देखते ही सनीचरी समझ गयी। बुधुआ को चिपटा कर घर बसाने की उसकी इच्छा पूरी न होगी। उसकी छोटी-सी इच्छा भी पूरी न हुई। लकड़ी की एक कंघी खरीदेगी, लेकिन उसका ख़रीदना नही

बिधनी के रुपयों से दोनों ने कुछ दिनो खाया। उसके रुपये भी ख़र्च हो गये तो सनीचरी के सिर पर आसमान फट पड़ा। उसी दिन दूलन के एक बछड़े को भेड़िया उठा कर ले गया। भेड़िये को भगाने के जोश में जब सब लोग दीवाने हो रहे थे तभी ख़बर आयी कि एक और स्थानीय ज़मींदार भैरवसिंह को कोई एक या कई आदमी मिलकर ज़मीन में काट कर डाल गये हैं। उस ज़मीन ने दस दीवानी मुकदमों को जन्म दिया था। भैरव की लाश को लेकर ज़मीन का फ़ौजदारी में प्रमोशन हो गया। गाँव में हर-एक को हर बात का पता लग जाता है। सभी को पता चल गया कि भैरव के बड़े बेटे ने ही ख़ून किया है। सौतेले भाइयों के लिए बाप का बहुत अधिक स्नेह देखकर उसे अपनी जायदाद के लिए स्वाभाविक तौर पर फ़िक्र हो गयी थी। भैरव के बड़े बेटे ने, 'पिता की हत्या के अपराध में भला भाइयों के नाम पर मुकदमा करेगा'—कहकर धमकाया। भले भाई बड़े भाई थे, ख़िलाफ़ मुकदमा करने के लिए लछमनसिंह की मदद लेने गये। लछमन बोला, 'चलो, मैं चल रहा हूँ।' ज़मीन पर उसको भी काफ़ी लालच था।

बड़े नाटकीय ढंग से लछमन वारदात के स्थान पर गये। लड़कों को निन्दा करते हुए उन्होंने मर्मभेदी दुख से कहना शुरू किया, 'हाय चाचा! म राजा थे, अपने घर में मरते। तुम आज ज़मीन में क्यों पड़े हो? तुमको किस बात का दुख है?'

लड़कों की ओर देख कर वे बोले, 'तुम क्या आदमी हो? किसने मारा है, इससे क्या होगा? चाचा मर गये, यही मुख्य और अन्तिम बात है। हाय चाचा! तुम्हारे रहते छोटी जात ने कभी सर न उठाया। दुसाध-गंजू के लड़के तुम्हारे डर से सरकारी स्कूल में पढ़ने नहीं जाते थे। आज उस सबकी देखभाल कौन करेगा?'

लड़कों की ओर देखकर आगे बोले, 'अब असली काम है चाचा की सम्मान के साथ सद्गति करना। उन्हें घर ले चलो, पुलिस को ख़बर करो। लेकिन वहाँ किसी का नाम न लेना। लाश तोहरी नहीं जायेगी। चीर-फाड़ न होगी। जिस तरह से चाचा मरे, वह जो भी हो, वीर की मृत्यु है! लेकिन जिस तरह चाचा मरे, उस तरह तो उनके मरने की बात नहीं थी! लोग बहुत बातें कहेंगे। इसलिए सद्गति और किरिया का काम उचित ज़ोर के

हुआ। लाख की चूड़ियाँ एक बरस पहनेगी, न पहन सकी। समय के साथ-साथ इच्छाओं का स्वरूप भी बदल गया। लड़का-बहू काम करेंगे। उनकी कमाई का अन्न सनीचरी खायेगी। जाड़ों की धूप में बैठकर नाती के साथ एक बर्तन में सत्तू और गुड़ खायेगी। वह इच्छा क्या बहुत बड़े आकार की हो गयी थी? उसी से क्या बुधुआ तिल-तिलकर खतम होता जा रहा है?

बहू की ओर देख-देखकर उसे दोष देने की बात सोचकर भी सनीचरी वैसा नहीं कर सकती थी। बुधुआ की बहू। नाती की माँ से कैसी रूखी बातें सनीचरी कहती थी? बुधुआ सब-कुछ समझता था। वह एक दिन बोला, 'माँ, इससे कुछ मत कहा करो।'

'किससे?'

'अपनी बहू से।'

'यह बात क्यों कही?'

बुधुआ फीकी और सूखी हँसी हँसा था। उसने कहा था, 'माँ, वह हाट को सब्जी बेचने जाती है तो पैसे चुराती है। अंट-संट चीज खरीद कर खाती है, सब तो मुझे मालूम है। भूख के मारे करती है, माँ!'

'मैं उसे क्या खाने को नहीं देती हूँ?'

'उसकी भूख बड़ी है।'

'आदमी कितनी बातें कहते हैं।'

'पता है, माँ! क्यों कहते हैं यह भी मालूम है। लेकिन मुझे इसके लिए कुछ कहना अच्छा नहीं लगता। उसे क्या पता माँ, कि तू और मैं कितनी तकलीफ़ उठाकर घर...!'

बुधुआ ने खाँसना शुरू किया। सनीचरी उसकी छाती पर हाथ फेरते-फेरते बोली, 'अब भगवान को नहीं पुकारती रे, भगवान होते तो तेरी बीमारी मुझे लग जाती।'

'नहीं माँ, तू जिन्दा रहेगी तो मेरा बेटा रहेगा।'

'मैं अपने बेटे को बचाना चाहती हूँ न?'

सनीचरी अपना सिर ठोककर उठ गयी। बुधुआ ने आँगन में उजाला कर दिया था। भिंडी, बैंगन, मूली, मिर्चा, कुम्हड़ा—तरह-तरह की सब्जियाँ थीं जो लछमन के बगीचे से पौध लाकर, बीज लाकर बुधुआ ने यह गेन

साथ करना। चाचा को बड़े पलँग पर सजाकर रखो और हमारे राजपूत समाज को खबर दो।'

उसके बाद लड़कों को अलग हटा कर बोला, 'अपने झगड़े भूल जाओ। हमारे बाबा नही है। चाचा चले गये तो राज का पतन हो गया। अपने समाज के सब लोगों को बुलाओ। इस समय अपना झगड़ा उठाने का मौका नही है। मक्खनसिंह, दंतारसिंह, उलझनें खड़ी कर देने वाले लोग तो तमाम हैं।

लछमन इस काम मे पागल रहा, इसलिए सनीचरी को वह घर पर न मिला। घर आकर वह गाल पर हाथ रख कर बैठ गयी। फिर बिखनी से बोली, 'चल, दूलन के पास चलें। चरकेबाज बुड्ढा, बहुत चंट आदमी है। लेकिन दिमाग बहुत साफ है। वह कोई ठीक राह बता देगा।'

सब-कुछ सुनकर दूलन बोला, 'कमाने की राह होते उपास करके कौन मरता है?'

''कैसन कमाई?'

'बुधुआ की माँ! कमाई की क्या राह होती है? मालिक-महाजन की होती है, दुसाध-गंजू की होती है? राह बनायी जाती है। सहेली कितना रुपया लेकर आयी थी?'

'बीस रुपया।'

बी—स रु—प-या?'

'हाँ! अठारह रुपये खा बैठे।'

'मैं होता तो यह रुपया हाथो मे रहते-रहते सपने मे महावीरजी पा लेता।'

'का बोलते हो? हाँ लटुआ के बाप?'

'कहे? हमनी का बोली, समझत नाही?'

'क्या बोलते?'

'रुपया हाथ मे रहते-रहते कुरुडा नदी के पाड़ से मैं एक अच्छा-सा पत्थर लाता। उस पर तेल सिंदूर पोतकर कहता, सपने मे महावीरजी मिले हैं।'

'मैं तो खाक सपने नही देखती।'

तैयार किया था। उसको वह अभी छोकड़ी थी। बहू की भूख बहुत थी। उसका बड़ा झुकाव था कि वह भी लछमन के खेत में काम करने जायेगी। उसका पेट भरना चाहता ही न था। अपने खाने का इन्तजाम वह खुद ही करेगी। बुधुआ ने सारी बातें सुनीं। बोला, 'लड़का हो जाये, उसके बाद जो कहेगी उसका इन्तजाम कर दूगा।'

बुधुआ ने बहुत मेहनत की थी। आँगन को काँटेदार झाड़ियों से घेर दिया था। लछमन के खेत से चुराकर खाद ले आता। गर्मियों में बहँगी में नदी से पानी ले आता। कुछ ही महीनों में आँगन हरा-भरा हो गया था। सनीचरी हँसकर बोली, 'बुधुआ, तेरे बाप ने भी इस तरह का सब्जी का खेत बनाना चाहा था रे!'

नाती हुआ। नाती की डेढ़ महीना उम्र होते ही बहू ने ज़िद करना शुरू किया कि वह काम करने जायेगी। बुधुआ बोला, 'जायेगी। हाट के दिन सब्जी बेचने जाना। मालिक के खेत में नहीं जाने दूंगा। मालिक के खेतों पर काम करने पर जवान औरतें घर नहीं लौटतीं।'

'इस्, कहाँ जायेगी?'

'पहले अच्छे घरों में, उसके बाद रंडी टोली में। इसको लेकर और बातें कहने पर सिर धड़ से उतार दूगा।'

बहू हाट गयी थी।

सनीचरी बोली, 'हाट भेज दिया, बुधुआ? अच्छा था वह घर पर रहती, मैं चली जाती।'

'न माँ! तू और मैं खेतों में काम करते, तो वह घर रहती। किसी दिन देखा कि उसने राँध पकाकर रखा, पानी लाकर रखा, घर-द्वार पर झाड़ू लगायी?'

'ना।'

सनीचरी और बुधुआ दोनों ने समझ लिया कि बहू का दिल रोगी पति में और दुख-भरी गृहस्थी में न लगेगा। सनीचरी ने बहू से कहा, 'वह अब कितने दिन का है? आँखों पर और चेहरे पर स्याही छा गयी है। जितने दिनों है, जरा सकझकर चल।'

बहू ने इस बात का एक-एक अक्षर माना। बुधुआ 'जितने दिनों'

'अरे, महावीरजी मिल जाने से देउता की पूँछ पकड़ सपना आप ही आता।'

'हाय बाबा !'

'तुझे सब पहचानते हैं। तुझसे ठीक न होता। तेरी सहेली नयी है, उसके कहने से हम मान लेते। उसके बाद महावीरजी लेकर तोहरी को हाट में बैठती। प्रणामी मिलती।'

'देउता को लेकर खचड़पन ? ऐसे ही महावीरजी के चेलों के मारे पेड़ों में फल नहीं रहते।'

'खचड़ई समझो तो खचड़ई है। नहीं तो किस बात का खचड़पन ? तेरा तो महापापी मन है। उसी से खचड़ई समझती है।'

'कैसन ? एँ लटुआ के बाप ?

'कैसन ? बुझा रहा हूँ।''

'बोल।'

'लछमन की बुढ़िया माँ को वात रोग है ?'

'है।'

'उन्होंने हमको दस रुपये देकर कहा, पास से देवी तेल ला दे। बाग भी नहीं गया, घर से तेल भी दो दिन बाद दे आया, तब भी खचड़ई नहीं हुई, काहे कि हमारे मन में कोई खचड़ई नाहीं है। उसने कल तेल मला, आज ही बुढ़िया लोटा लेकर अरहरी के खेत माँ पायखाना करै गयी। मन चंगा तो कठौती माँ गंगा। धुधुआ की माँ, देख, भगवान पेट से बड़ा नहीं है। पेट के लिए सब-कुछ किया जाता है। यह रामजी महाराज की बात है।'

दूसरी ओर से दूलन की पत्नी बोली, 'बुड्ढा अगर मालिक के खेत से कुम्हड़ा तोड़ लाता है, तब भी कहता है कि रामजी महाराज की बात है।'

बिखनी बोली, 'हमारी मुसीबत है। यह कैसे आसान होगी ? कुछ सलाह दो। हम दोनों बुढ़िया हैं।'

'बरोही गाँव का भैरवसिंह मर गया है ?'

'हाँ, लड़के ने बाप को मार डाला है।'

'उससे तुम्हें क्या ? जहाँ रुपये होते हैं वहाँ माँ बेटे को मारती है, बेटा माँ को मारता है। जिसे मरना था वह मर गया। हमारे घरों में कोई

रहा, वह भी उतने दिनों रही। उस समय बच्चे की उम्र छह महीने थी। बुधुआ को उस दिन, उसी दिन क्यों, कई दिनों से बढ़ती ही होती जा रही थी। वैद्य की दवा से भी काम न चला। सनीचरी ने बहू से बुधुआ के पास रहने को कहा था। खुद भागी-भागी वैद्य के पास दूसरी दवा लेने गयी थी। दवाई से अब कुछ न होगा, यह जानकर भी दवा लेने गयी थी। वैद्य का मकान लगभग एक मील की दूरी पर था। माँ रे! सोचने पर ऐसा लगता है, इतना रास्ता वह किस तरह भाग कर गयी थी? लेकिन वैद्य घर पर न थे, हाट गये थे। घर लौटते ही सनीचरी ने 'दवा दो, दवा दो' कहकर सिर पीटा था। चिढ़कर वैद्य ने कहा, 'छोटी जात वालों में धीरज नहीं रहता। लड़के की हालत अगर ऐसी ही खराब होगी, तो वह हाट की ओर क्यों भागी है? जरूर तेरे बेटे की हालत अच्छी है।'

घर लौटकर सनीचरी ने बुधुआ को जिन्दा न पाया, बहू को घर पर न पाया। बच्चा अपनी कोठरी में रो रहा था।

बहू फिर न लौटी। बच्चे को गोद में लेकर बुधुआ के दाह का प्रबंध करना, बहू के भाग जाने के किस्से को दबा कर भाग-दौड़ करना—इस सब में बुधुआ के लिए भी रोना न हुआ। सनीचरी रो नहीं सकी। अजीब-सा पागलपन सवार था। उसके बाद आँखें बन्द कर लेट जाती। गाँव के लोग निजी रिश्तों के काम में मतवाले रहते थे। बुधुआ की मौत के बाद सनीचरी ने दूसरी ही हालत देखी। बुधुआ के बेटे हरुआ को लेकर वह परेशान रहती। बुधुआ नहीं रहा, इस बात को भी जैसे सनीचरी भूल गयी। कभी बुधुआ नहीं था, यही उसे याद न रहता। जिस वक्त की बात, जितने दिनों की बात याद पड़ती, उतने दिनों ही जैसे बुधुआ उसके साथ था। सनीचरी जब मालिक-महाजन के खेतों पर काम करती थी, बुधुआ नदी से पानी लाकर घर-द्वार साफ़ कर रखता। खेत से बीने, मिट्टी मिले गेहूँ या मकई नदी के पानी से धो लाता। वह शान्त, समझदार माँ का बेटा था। बुधुआ हमेशा मौजूद रहता। सनीचरी कैसे मान ले कि उसे रात में पानी गरम कर बुधुआ को पिलाना न पड़ेगा? बुधुआ का लड़का पड़े-पड़े रोता रहता।

एक दिन दूलन की पत्नी, धतुआ और लटुआ की माँ, जो इस मुहल्ले की प्रसिद्ध झगड़ालू औरत थी, आ खड़ी हुई। लड़के को उठाकर उसने कलेजे

मरता है तो सगे-संबंधी रोते हैं। उनके नातेदार सन्दूक की कुंजी हटा देते हैं। रोने की बात भूल जाते हैं। हटाओ, हमारे मालिक ने जाकर जिम्मा ले लिया है। अब भैरव की लाश का दाह होगा। कल दोपहर को लाश निकलेगी। उन्हे रोने वाली रूदाली की जरूरत है। दो रांड़ों को ले आये है। मालिक-महाजन के मरने पर रोने के लिए रांड़ें आती हैं। दो रांड़ें तो भैरव की ही थी, अब सूखी कौआ हो गयी है। वे काम की नही है। तुम जाओ, रोओगी, लाश के साथ जाओगी। रुपये मिलेंगे, चावल मिलेंगे। किरिया-करम के दिन कपड़ा और खाने को मिलेगा।'

सनीचरी के कलेजे में जैसे भूकंप हुआ। वह बोली, 'रोऊँगी ? मैं ? तुझे पता नही, मेरी आँखो में रोना नही आता ? मेरी आँखें जल गयी है।'

दूलन निस्पृह कठोर आवाज मे बोला, 'बुधुआ की माँ, जो रोना तू बुधुआ के लिए नही रोयी, उस रोने को तुझसे नहीं कह रहा हूँ। यह है रोजी के लिए रोना। देखेगी कि जैसे गेहूँ काटती है, मिट्टी ढोती है, वैसे ही रो भी लेगी।'

'हमे मानेगा कौन ?'

'दूलन काहे के लिए है ? अच्छी रोने वाली न मिलने से भैरव की इज्जत कैसे रहेगी ? मालिक-महाजन को लाश बन जाने पर भी इज्जत चाहिए। भैरव का बाप रामावतार रांड़ें रखता था, उनकी देखभाल करता था। उसी ममता मे रांड़ें उसके मरने पर आकर रो गयी। भैरव, दैतारि, मक्खन, लछमन—इनकी भी रांड़ें हैं। लेकिन खेतमजूर और रांड़ों को यह लोग पैरों के नीचे रखते हैं। इसी से रूदाली नही मिलती है। सब खतरनाक खचड़े हैं। सबमे हरामी गंभीरसिंह है। रांड़ रखी, वह घर की औरत बन गयी। रांड़ रहती तो औरत को दूध-घी पर रखता। रांड़ के मरने पर औरत से बोला, तुझे अब न पालूंगा। रांड की लड़की रांड, जाकर काम कर।'

'छी-छी !'

'वह लड़की तो तोहरी मे रंडियो के बाजार में पड़ी है। पाँच रुपये की रंडी अब पांच पैसे की रंडी है। अच्छी बात, बुधुआ की बहू भी तो तोहरी मे है। वही हालत है।'

से लगा लिया।

'ओ धतुआ की माँ ! क्या कर रही है ?'

'हरुआ को लिये जा रही हूँ।'

'क्यों ?'

'धतुआ की वहू की गोद में बच्चा है। उसका दूध पियेगा।'

'क्यों ? मेरा नाती है, मैं उसे पालूँगी।'

'सभी अपने नातियों को पालते हैं, तू भी पालेगी। लेकिन धतुआ के बाप ने कहा है कि एक काम पकड़ा है।'

'कहाँ ?'

'गौरमेन रेल-लाइन की मरम्मत करेगी। ठेकेदार के पास धतुआ के बाप ने पेसगी लिया है, बीस मजूर देगा।'

'तू नहीं जायेगी ?'

'गैया गाभिन है। उसे छोड़, मालिक के घर पूजा है। जंगल की सफाई, रसोई के लिए लकड़ी चीरना—वेगार के काम भी हैं।'

'दूलन गजू ! बहुत बड़ा खचड़ा बुड्ढा है। काम में पगला कर मुझे...।'

'सो जैसा समझ।'

धतुआ की वहू का दूध पीकर हरुआ की जान बच गयी। जितने दिनों तक ठेकेदारी का काम चला सनीचरी के घर चूल्हा नहीं जला। दूलन की बहू सनीचरी की रोटी और अचार दूलन के साथ ही दे देती। जितना आटा लगता, सब बाद में सनीचरी ने चुका दिया। लेकिन क्या सारे ऋण चुकाये जा सकते हैं ?

दूलन आदि ने देखा था, परमू गंजू ने कहा था, बिलकुल अकेली हो गयी है। सम्बन्ध में जिठानी बन जाओ, नहीं तो तुम्हारे घर के दरवाजे-खिड़की-छाजन लाकर अपने आँगन में कोठरी डाल दूँ।

नटुआ दुसाध सनीचरी के आँगन की सब्जियाँ हाट में बेच लाता। उस समय गाँव के लोग इस तरह न खड़े हो जाते तो क्या सनीचरी जिन्दा रहती ? बुधुआ की कस्बी पत्नी की बात किसी ने नहीं उठायी। पर सनीचरी को पता लग गया था। हाट में जो लोग एक रुपये में चार तरह की दवाइयाँ बेचते हैं उनमें से एक ने वहू को समझाया था। वहू को गया-आरा-भागलपुर

'उसकी बात कौन सुनना चाहता है?'

दूलन बोला, 'काली धोती पहनना।'

'वही तो पहनती हूँ।'

दूलन ही उन्हें ले गया। चलते-चलते बिखनी बोली, 'इस तरह का काम बीच-बीच में, उसके बाद मालिक की खेती का काम जुटे तो अच्छा है, नहीं तो पत्थर तोड़ने का काम हो—दो के पेट भर जायेंगे।'

सनीचरी बोली, 'गाँव में यह बात न होगी।'

'होने पर होगी।'

भैरव सिंह का गुमाश्ता बच्चनलाल दूलन को पहचानता था। लछमन ने उसे शवयात्रा के साथ के सारे इन्तजाम का भार दिया था। सारा इन्तजाम करना मामूली बात न थी। बच्चन के अपने यहाँ दो कुदाल, एक अलगनी और पीतल की दो बटलोइयों की जरूरत थी। इन्हें क्रिया-कर्म के काम में लगाना पड़ेगा, बड़ी मुसीबत है। सनीचरी को देखकर उसे सहारा मिला। बोला, 'तीन-तीन रुपये मिलेंगे।'

दूलन बोला, 'महाराज मरे और उनकी रोने वालियों को तीन रुपये? पाँच रुपये, हुजूर!'

'क्यों?'

'ऐसा रोयेंगी हुजूर, कि सुनकर आप बख्शीश देंगे। लछमनजी ने कहा था कि दस-बीस जो भी लगे रोने वाले चाहिए। इसके लिए दो सौ रुपये मजूर हैं।'

गुमाश्ते ने गहरी साँस ली। पता नहीं, दूलन को कहाँ से सारी बातें मालूम हो जाती हैं!

'पाँच ही रुपये दूँगा। जा, बाहर जाकर बैठ।'

'और पाव-भर चावल भी दोगे।'

'गेहूँ दूँगा।'

'चावल देना, हुजूर!'

'दूँगा।'

'अभी उनको पेट भरकर जलपान दीजिये। अच्छी तरह खाये बिना रोयेंगी कैसे?'

दिखायेगा—नौटंकी-सिनेमा-सर्कस दिखायेगा, रोज पूरी-कचौड़ी खिलायेगा। उसी आदमी के साथ वह चली गयी।

बच्चे को क्यों नहीं ले गयी ?

सनीचरी को बचपन में देखी हुई मोती की माँ की बात याद आती। मोती को मालिक ने लेना चाहा था, मोती की माँ ने उसे नहीं दिया। मोती लाइन के कुलियों को इकट्ठा करने वाले ठेकेदार के साथ पल गया। मोती की माँ सनीचरी की माँ के जाँते में गेहूँ पीसने आती थी और कहती थी, 'मालिक के हाथ में लड़की देने से मुँह तो देखने को मिल जाता है।'

सनीचरी ऐसा न कहती। जब वह चली गयी, तो मानो खो गयी। वही अच्छा है। नहीं तो वह मालिक के घर रानी बनकर रहती। सनीचरी और हरुआ बाहर गुलाम बनकर मेहनत करते, वह बहुत अपमान की बात होती। उसके सिवा, सनीचरी को पहले की जानकारी से पता था। वह के वैसा काम करने पर गाँव के आदमी नाम से न सही, काम से निकाल देते। वैसा होने पर गाँव में रहना न होता। भूखे और घोर गरीब का काम होता है दूसरे भूखे घोर दरिद्रों की सहायता करना। वह मदद न रहे तो मालिक के दिये दूध-घी को खाकर भी गाँव में रहना न होता।

धीरे-धीरे सनीचरी सहज और स्वाभाविक हो गयी। अपने सामर्थ्य-भर हरुआ को पाला-पोसा। गाँव के बूढ़े-बुढ़ियाँ, बड़े-बूढ़े, सभी हरुआ से कहते, 'तेरी दादी ने बड़ा दुख सहा है। उसको दुख मत दिया कर, हरुआ !'

हरुआ सिर झुकाये सुनता रहता। उसकी चौदह बरस की उमर होने पर सनीचरी उसे ले गयी थी। रामावतार का बेटा लछमनसिंह अब मालिक-महाजन था। हजार गरीबपरवर हो, लेकिन अब जमाना और था। मालिक भी नये जमाने में नये ढंग का था। लछमनसिंह खेत के मजूरों, किसानों को वश में रखने के लिए अब गुंडे रखता रा। घुड़सवार, बन्दूक वाले गुंडे। रामावतार लाठी मारता था, जूते लगाता था, लेकिन मिजाज ठीक रहने पर उनसे बातें करता था। लछमनसिंह बाप की उन बातों को कम-जोरी समझता था। वह काफी दूरी रखता था।

सनीचरी उसके ही पास गयी। बोली, 'मालिक, सब कुछ तो जानते हो। सनीचरी से बड़ी अभागिन कभी नहीं जन्मी। यह लड़का मेरा नाती

'दूलन ! सोच रहा हूँ कि कितने हरामी मरे होंगे जब तू पैदा हुआ होगा। जा, बाहर जा। जलपान दे रहा हूँ।'

भैरवसिंह की बड़ी भैरवी को बुला भेजा कि रोने-वालियों को भरपेट गुड़-चिउरा दो। प्रसाद के बाप किसी चीज की कमी नहीं छोड़ गये थे।

भरपेट चिउरा-गुड़ खाते-खाते सनीचरी समझ गयी कि रोना बेचकर उसे खाना मिलेगा, इसीलिए आँखों में आँसू रह गये थे।

दोनों रांडों ने पहले तो इन देहाती बुढ़ियों पर ध्यान न दिया। पर सनीचरी और बिखनी ऐसे ऊँचे स्वर में रोयीं, ऐसे बना-बनाकर भैरवसिंह के गुणों का बखान किया कि बाजारी रांडें भी चकरा गयीं। रोते-रोते सनीचरी और बिखनी मरघट गयीं। उस दिन एक-एक को नकद विदाई पाँच-पाँच रुपये और ढाई सेर चावल मिला। बच्चन ने कह दिया कि 'किरिया के दिन फिर आना।'

'जरूर आयेंगे, हजूर !'

किरिया के दिन खाना और कपड़ा मिला। पूरी-कचौड़ी और बेसन के लड्डू। सनीचरी और बिखनी खाना भर बांध कर ले गयीं। सनीचरी दूलन की बहू को भी कुछ दे आयी। दूलन ने सब पता लगाया। हरामी बच्चन को इसके लिए दो सौ रुपये मिले हैं। बीस रुपये में काम निकाल लिया।]

'वह तो होगा ही, लटुआ के बाप !'

'अपनी सहेली से कह दे, नियम से हाट आये-जाये। हाट जायेगी, सारी दूकानों के मालिक-महाजन के यहाँ। दूकान-दूकान चक्कर लगाने से पता चलेगा कि मालिकों के घर में कौन बीमार है, कौन मर गया ? नहीं तो पता नहीं चलेगा। इसके बाद जहाँ भी जायेगी, वहाँ कह देगी, मैं उसके लिए रूदाली ला दूँगी।'

'कैसे ?'

'तोहरी जायेगी। रंडी बाजार।'

'हाय भगवान !'

'तेरी सहेली जायेगी।'

बिखनी बोली, 'जाऊँगी।'

दूलन बोला, 'कहीं इतनी रंडियाँ थीं ? यहाँ सारे राजपूत मालिक-

है। इसे कुछ काम दो। नही तो इसकी जान नही बचेगी।'

लगता है, उस वक्त लछमनसिंह का मिजाज ठीक था। उसने कहा, 'हाट मे मेरी दूकान मे माल ढोयेगा। झाड़ू-पानी करेगा। हर महीने दो रुपये और खुराकी मिलेगी।'

'हुजूर की किरपा है।'

सनीचरी नाती को ले, उठकर चली आयी थी। मोहनलाल से देवता की प्रसादी लाकर तावीज मे रख दी और उस तावीज को गले में बाँधकर हरुआ को हाट भेज दिया। उससे उसने बहुत-कुछ कहा था।

'हाट मे तमाम लोग गाय-भैंस लेकर आते है। हरुआ, तू वहाँ मत जाना। भैंसा लात मारेगा तो मर जायेगा।'

'नही, दादी !'

'किसी बुरे आदमी की बातो मे मत आना।'

'नही, दादी !'

शुरू के कई महीने हरुआ ने बहुत मन लगाकर काम किया। महीने के रुपये दादी को दे देता था। जलपान को मिले सत्तू, गुड़ बाँध-बाँध कर ले आता। खा-पीकर धीरे-धीरे शकल निकल आयी। धीरे-धीरे मन बहका। एक बार रुपये नही दिये, एक रगीन बनियान खरीद ली। फिर एक बार प्लास्टिक का माउथ-आर्गन खरीद लिया। उस बार सनीचरी ने बहुत डराया-धमकाया था। उसके बाद लछमन ने जब खुद कहा कि हरुआ दूकान पर नही रहता, हमेशा मैजिक वाले के पीछे-पीछे घूमता फिरता है—तो सनीचरी ने हरुआ को बहुत मारा था। बोली, 'कुचाल चलेगा, तो तेरी टाँगें काट डालूंगी। घर बिठाकर खिलाऊँगी, पर कुपथ न जाने दूँगी।'

उसके बाद हरुआ ने कुछ दिनों मन लगाकर काम किया। उसके बाद भाग गया। नाटुआ ने आकर बताया कि हरुआ मैजिक वालों के साथ चला गया है।

'जाने दे।'

'जाने दे' कहने पर भी सनीचरी घर न बैठी रह सकी। एक हाट से दूसरी हाट, एक मेले मे दूसरे मेले में बहुत खोजा। नाती के लिए रोने की बात उसके मन मे नही उठी। मन मे यही आया था कि ऐसा ही होगा।

महाजन चारों ओर हैं न ? उन्हीं से रंडियाँ फैल गयी हैं।'

दूलन की पत्नी बोली, 'रंडियाँ हमेशा से रही हैं।'

'नहीं, हमेशा में यहाँ नहीं रही हैं। जितनी बुराइयाँ है, सब ये लोग लाये है। ये भी हमेशा से हैं।'

'न, पहले यह मुलुक था छोटानागपुर के राजा के कब्जा में। तब यहाँ पहाड़, जंगल और आदिवासी लोगों का टोला था। सब, बहुत-बहुत पहले की बात है। उसी से तहसील में लोग बलोया मनाते हैं।'

दूलन ने जो क़िस्सा बताया वह बहुत ही व्यंजक था और किस तरह जबरदस्त राजपूत इस आदिवासी और घने बसे अंचल में घुसकर जमींदार से शुरू कर जमींदार-महाजन, मालिक-गरीबपरवर बन बैठे, उसे समझने में बहुत ही सहायक था। यह राजपूत लोग थे छोटानागपुर के राजा की सम्मिलित सेना के लोग। लगभग दो सौ बरस पहले इनके तरह-तरह के अत्याचारों से परेशान होकर कोल लोगों ने विद्रोह किया। कोल-विद्रोह मालूम पड़ते-न पड़ते राजा ने इन्हें उकसा दिया। कोल-विद्रोह का दमन करने के बाद भी इनका लड़ाई का जोश ठंडा न हुआ। यह लोग निरीह कोल लोगों को मारते ही रहे। शान्त गाँवों को जलाते रहे। हरदा और डोनका मुंडा लोगों ने फिर तीर-कमान तेज करना शुरू किया। फिर कोल-विद्रोह का उपक्रम हुआ। तब राजा ने इन राजपूतों को छितरी बस्ती के टाहाड़ जंगल में उतार दिया। उनसे कह दिया, 'सिर पर तलवार चला दो। जहाँ तक तलवार जाये उतनी दूर तक क़ब्ज़ा कर लो। सूर्योदय से सूर्यास्त तक तलवार चलाते रहो। तुम सात सरदार हो, इस तरह जितनी जमीन मिले उतनी जमीन में खेतीबाड़ी करो।'

तभी राजपूत टाहाड़ में उतर पड़े और तभी से यहाँ उनकी जोत है। एक शताब्दी से दूसरी शताब्दी में इनकी जायदाद बढ़ गयी, कम नहीं हुई। अब यह जमीन-जायदाद बढ़ा रहे है। वे पहले आपस में संबंधी थे। अब संबंध-सूत्र क्षीण हो गया है। लेकिन पद-मर्यादा में सब बराबर रहना चाहते हैं।

पुराने खपरैलों की छाजन वाले मैले मिट्टी के घरों की टोली में अन्त्यज लोग रहते है। आदिवासियों की बस्ती की शकल भी गरीबों की-सी है।

तभी जबकि हरुआ के लौटने की आस नहीं थी कि अचानक उसे विखनी के साथ देखा। विखनी उसके साथ छुटपन में खेला करती थी। वह काले कंबल का घाघरा पहनती थी, इसलिए सब लोग उसे 'काली कमली विखनी' कहते थे। विखनी कंधे पर एक पोटली लादे जल्दी-जल्दी चल रही थी, चलते-चलते उसने असावधानी में सनीचरी को धक्का दे दिया।

'तू कौन है रे ? दिखायी नहीं पड़ता है ?'

'दिखायी तेरे बाप को नहीं देता।'

'क्या कहा ?'

'जो तूने सुना।'

अजीब झगड़ा हुआ। सनीचरी को बड़ा अच्छा लग रहा था। ज़ोरों का झगड़ा करने से मन का बहुत-सा मैल दूर हो जाता है, सब-कुछ साफ़ हो जाता है। इसलिए धतुआ की माँ चील-कौओं के साथ भी झगड़ती रहती थी। झगड़ा करने से मन अच्छा रहता है, शरीर अच्छा रहता है, शरीर का खून बन्दूक की गोली की तरह दनादन चलता रहता है। लेकिन दोनों ने जब एक-दूसरे की ओर देखा तो विखनी बोली, 'यह क्या ? तू सनीचरी है न ?'

'तू, तू कौन है ?'

'विखनी, काली कमली विखनी।'

'विखनी ?'

'हाँ रे !'

'तेरा तो लोहरदगा में ब्याह हुआ था।'

'मैं तो कब से जुजुभातू में हूँ।'

'जुजुभातू ? और मैं रहती हूँ टाहाड़ में। एक बेला की तो राह है, और कभी भेंट नहीं होती ?'

'चल, कहीं बैठें।'

दोनों एक पीपल के पेड़ की छाया में बैठीं। दोनों ही एक-दूसरे को आड़े-आड़े देख रही थीं। दोनों ही निश्चिन्त हुईं, यह जानकर कि किसी की हालत किसी से अच्छी नहीं है। विखनी के भी हाथों में, गले में, माथे पर सनीचरी की ही तरह गहनों के गोदने के निशान थे और आदत के

इनके बीच-बीच मे मालिको के विशाल मकान हैं। मालिकों मे मुकदमेबाज़ी और आपसी लाग-डाँट चलती रह सकती है, लेकिन मालिक लोग विशेष मामलों में एक होकर रहते है। नमक, मिट्टी का तेल, पोस्टकार्ड के सिवा इनको कुछ मोल नही लेना पटता। हाथी, घोडा, भैंस चरागाह, उपपत्नी, जारज सन्तान, उपदश या दूसरे यौन रोग—'जिसकी बदूक उसकी ज़मीन" यह विश्वास कमोबेश सभी मे है। घरेलू झगडे अनगिनत है। देवता इनके समर्थक हैं। इनमें सभी न घरेलू झगडो के नाम से जमीनों को देवार्पण कर रखा है। दैतारिसिंह के पाँव मे छह उँगलियाँ हैं। बनवारीसिंह की पत्नी को घेघा है। नथुनीसिंह के घर में भुस-भरा बाघ है।

इनकी बातो की याद दिला कर दूलन बोला, 'इनकी इज्जत-आबरू रखने के लिए रूदाली—रोनेवाली औरतों—की जरूरत होती है। बस, लाइन दिखा दी, अब काम से लग जा।'

सनीचरी और बिखनी ने सिर हिलाया। उन्हें ज़िन्दगी में आसानी से कुछ नही मिलता था। मकई और नमक पाने के लिए जान निकल जाती थी। चाहे बच्चा पैदा हो, चाहे मालिक मरे, यह महाजन के पास लगी हुई थी। अपने वर्ग मे मान रखने के लिए ये लोग बुरी तरह ख़रच करते थे। उस पैसे मे से कुछ सनीचरी के घर मे भी आता था।

सनीचरी और बिखनी लड़ गयी। इस जीवन में सब लड़ते हैं। बिखनी इस गाँव की लड़की नही थी। लेकिन बडी आसानी से वह गाँव के जीवन मे शामिल हो गयी। फ़सल की बुआई और कटाई के वक्त लछमन के पास फुटकर मजूरी करती। दूसरे समय हाट-बाजार, बस-स्टॉप की दुकानो पर चली जाती। वहाँ से वह यह समाचार लाती कि मालिकों के मकान मे कौन मरा है, किसका दम निकल रहा है? उसके बाद दोनों काला कपडा धोकर पहन लेती। आँचल में भुने आटे का चूर्ण बाँध लेती। उसी चूर्ण को खाते हुए दोनों बूढ़ियाँ मालिक के घर पहुँचती। सनीचरी मालिक के गुमाश्ते से बातें करती। इस बात के लिए विवरण भी बँधा हुआ था।

'हुजूर, ऐसा रोना रोऊँगी कि उसमें रामनाम सुनायी न देगा। पाँच-पाँच रुपये लेंगे, और चावल। किरिया-करम के दिन खाना लेंगे, कपड़ा लेंगे। दर मे भाव-ताव न करें, वह काम न होगा। और रुदाली चाहिए तो ला

मुताबिक दोनो ही कानो के छेदो मे सोला का डंठल ठूँसे हुए थीं। सनीचरी और बिखनी ने बीड़ियाँ सुलगायी। दोनों ही के बाल रूखे थे।

'सनीचरी, क्या हाट आयी थी?'

'ना रे, नाती को खोजने आयी थी।'

सनीचरी ने बहुत थोड़े में हरुआ की बातें, अपना हाल—सब-कुछ बताया। बिखनी ने सब-कुछ सुनकर कहा, 'दुनिया से माया-ममता क्या चली गयी है? या तेरे-मेरे भाग का दोस है?'

सनीचरी बड़े दुख के साथ मुसकरायी। बोली, 'आदमी नही, बेटा नही, नाती जहाँ रहे भला रहे।'

बिखनी ने बताया, तीन लडकियों पर एक लडका हुआ। बेटे का बाप कब का मर गया, बिखनी ने ही लडके को पाला-पोसा, दूसरे की बछिया पालने को लेकर धीरे-धीरे चार गाईं, दो दुधारू बकरियाँ, सब-कुछ किया। लड़के का ब्याह कर दिया। फिर लड़के के गौने के समय महाजन से उधारी लेकर गाँव को दही-चिउरा-गुड़ खिलाया था।

'उसके बाद?'

'महाजन ने अब उसी कर्ज के बदले घर-दुआर ले लिया। लड़का गया ससुराल।'

'ससुराल' कहकर बिखनी ने थूका। बोली, 'ससुर के लड़का नही है। और दो जमाइयों की तरह लड़का भी उसका गुलाम बन जायेगा। मैंने कहा, गोरू बेचकर उधारी चुका देती हूँ। पर लडका गाय-गोरू ससुराल छोड़ आया। मैं भी बिखनी हूँ। मैंने दो बकरियाँ इस बाजार मे बेच दी। लडके को पता नहीं है। बस, टेंट मे बीस रुपये लेकर चल दी हूँ।'

'अब कहाँ जायेगी?'

'पता नही। तेरे तो कहने को भी बेटा नही है। मेरा रहने पर भी नहीं-सा है। चली जाऊँगी डालटनगंज, या बोकारो, या गोमो। टेसन पर भीख माँग लूँगी।'

सनीचरी ने ठंडी साँस ली। बोली, 'मेरे साथ चल। दो कोठरियाँ है, भाँय-भाँय कर रही हैं। कोठरियों में लेटने के लिए माचे है। बुधुआ ने बनाये थे। आज भी बाहर भिंडी-मिर्चा-बैंगन होते है।'

दूंगी।'

गुमाश्ते ने भी सब मान लिया। न मानता तो चारा क्या था? भैरवसिंह की शवयात्रा में इनको देखकर सब इनको ही बुलाते। यह पेशेवर थी। दुनियादारी अब शौक की चीज नहीं, पेशे की चीज बन गयी थी। खेत के मजूरों के हिसाब में हेरफेर करना, चक्रवृद्धि सूद के अंक बढ़ाने में गुमाश्तों की होशियारी रहती थी। दस रुपये महीने में ही उनकी खेती-गृहस्थी, हल-बैल और चाहने पर एक से अधिक पत्नियाँ रहती थी। अपनों से बाहर की मौत पर रोना भी पेशे का था। इस कारबार में बड़े-बड़े शहरों में पेशेवर लोग जबरदस्ती झगड़ पड़ते। सनीचरी इस अंचल में इस पेशे में पड़ी थी। यह स्थान शहर न था। तोहरी में लोग भी अनगिनत न थे। इसी से सनीचरी जो कहे, वह मानना पड़ेगा।

केवल रोने का एक रेट।

रोते हुए लोटने का सवा पाँच रुपये।

रोते-लोटते हुए सिर पीटने का साढ़े पाँच रुपये।

रोते, छाती पीटते मरघट जाकर मरघट में लोटपोट होने के लिए छह रुपये देने होंगे।

किरिया में कपड़ा चाहिए। वह कपड़ा काला हो तो अच्छा है।

यह थे रेट। उसके बाद, 'तुम राजा लोग हो, चावलों के साथ दाल-निमक-तेल नहीं मिलेगा? घर पर लछमी बाँध रखी है। थोड़े-से चावल-तेल से तुम्हें कुछ पता न चलेगा। लेकिन सनीचरी चारों ओर तुम्हारा नाम लेती फिरेगी।'

कारबार खूब चलने लगा। भैरवसिंह की शवयात्रा में जो रोये थे, उनको लाना जैसे इज्जत की बात बन कर रह गया। धीरे-धीरे लाला और साहू लोगों ने भी सनीचरी को बुलाना शुरू किया। गोकुल लाला के पिता के मरने पर गोकुल ने कहा था, 'सनीचरी, किरिया तक रोज आना।'

गोकुल उसे रोज सत्तू और गुड़ देता था। कहता था कि तुझे देने से पुण्य होगा।

गोकुल ने अच्छा कपड़ा भी दिया। मालिक-महाजनों की तरह सबसे सस्ता जनता-कपड़ा नहीं ढूँढता था। बिखनी ने उन दोनों कपड़ों को हाट में

'मेरा रुपया खरच हो जाने के बाद ?'

'तब देखा जायेगा। तेरा रुपया तेरे पास रहे। सनीचरी अभी भी अधपेटी कमा लेती है।'

'तो चल। हाँ रे, पानी का सुख है ?'

'नदी है। पचायती कुएँ का जल बड़ा तीता है।'

'जरा ठहर।'

बिखनी फिर हाट गयी। थोड़ी देर बाद लौटकर आयी। बोली, 'जूँएँ मारने की दवा मोल ले आयी हूँ। मिट्टी के तेल के साथ सिर में लगाकर सिर धो डालूँगी। जितनी मन की ज्वाला है, वैसी क्या जूँओं की ज्वाला होती है !'

राह चलते-चलते बिखनी बोली, 'नतनी शायद रात में रोयेगी। मेरे साथ लेटती थी।'

सनीचरी बोली, 'थोड़े दिन के लिए। फिर भूल जायेगी।'

सनीचरी का घर देखकर बिखनी बहुत खुश हुई। फ़ौरन पानी छिड़ककर घर-द्वार साफ़ किया। नदी देखने गयी। एक गगरी जल लायी। बोली, 'आज रात चूल्हा नही जलाऊँगी। रोटी और अचार लेकर चली थी।'

बिखनी घर-गृहस्थी वाली थी। दो दिनों मे ही उसने सनीचरी का घर-आँगन लीप-पोत दिया। सोडा और साबुन से अपने और सनीचरी के कपड़े धोये। कथरी और चटाई को धूप दिखायी। अपनी गृहस्थी का कब्जा बहू के हाथ में चला जा रहा था, इसलिए उस समय वह किसी काम मे दखल न देती थी। वह अभिमान मे थी, पर बहू कहती कि उसकी सास कामचोर थी। गिरस्ती का नशा, बिखनी की समझ से, आदमी को, दुखी आदमी को निकम्मा बना देता है। यहाँ पता नही कब तक रहे ! सनीचरी की गृहस्थी थी—बिखनी ने एक दिन कुदाल लेकर आँगन खोदना शुरू किया। बोली, 'थोड़ी मेहनत से सब्जी बहुत होगी।'

जूँओं की दवा से सनीचरी के सिर से भी शरणागत जीव निर्वंश हो गये। गहरी नीद मे रात काटकर सनीचरी समझी कि जूँओं के काटने से नीद नहीं आती थी, उसमे मन की जलन न थी। दिल मे कितनी भी जलन हो, मेहनती शरीर को नीद आ जाती है।

बेच दिया।

गोकुल के घर की मिली चीजों की बात सुन कर दूलन बोला, 'यह अच्छी बात याद आयी। इसके बाद जहाँ जाना, वहाँ किरिया तक आना-जाना रखना। रूदाली देखकर वे भी कुछ-न-कुछ देंगे। ऐसे वक़्त कोई इतना मोल-तोल नहीं करता।'

'हाँ, वे भी देंगे।'

सनीचरी ने अवज्ञा दिखाने के लिए तबाकू का धुआँ छोडा। बोली, '*किरिया के खर्च का हिसाब लगा कर अपने बाप-भाई के मरने पर आँखों में आँसू नहीं आये? गंगाधर सिंह के-से आदमी ने ताऊ के मरने पर मुर्दे* को घी नहीं लगाया, डालडा मला था, यह मालूम है?'

'वे खुद रो लेते तो तुम लोगों का क्या होता?'

'थोड़ा तो रो सकता है।'

'जाने दे। काम की बात सुन।'

'बोल।'

'बड़े लोगों के हाल हैं। नथुनीसिंह की माँ मरने वाली है। नथुनी का घर तो दूर है। नथुनी ने तुम लोगों का पता लगाने को कहा है।'

'मर रही है! मरी तो नहीं।'

'अरे, नथुनी की बात सुनेगी तो समझेगी कि इन लोगों के मन में कितना पाप रहता है। नथुनीसिंह की सारी जमीन-जायदाद कुल ही तो उसकी माँ की जायदाद है। उसकी माँ की है, यह पता है?'

'न। तुम्हारी तरह इस जगह के तमाम लोगों की जनमपत्री किसको मालूम है, यही बताओ?'

'उसकी माँ पराक्रमसिंह की इकलौती बेटी है। पराक्रमसिंह का कैसा जुल्म था। जब छोटा था, तब देखा था कि लगान वसूली का जुल्म क्या होता है! उनकी प्रजा, बूढ़े हाँथीराम महतो को घोड़े से बांध घोड़े को दौड़ा-कर हाँथीराम को मार डाला गया था।'

'मैंने भी सुना है।'

'पराक्रम की सारी जायदाद नथुनी की माँ को मिली। उसी माँ की दौलत से उसका ऐसा बोलबाला और इतना घमंड है। वही माँ आज बहुत

दिनो से बुरी खांसी भोग रही है। खांसने मे ताजा खून आता है। रोग है या छूत है।'

'न, न, बुधुआ को तो हुआ था।'

'बुधुआ भला आदमी था। नथुनी की माँ तो बुरी है।'

'उसे छोड़। क्या कह रही थी ?'

नथुनी ऐसा भला लड़का था कि माँ को उस किनारे एक कोठरी बनाकर उसमें रख दिया था। खटिया के साथ एक बकरी बांध दी थी, बस वही तक इलाज था। न हकीम का न वैद का इलाज, न डॉक्टरी सुई का इलाज। 'अभी तक बुढ़िया जिन्दा है। नथुनी चन्दन और शाल की लकड़ी मँगा रहा है, बड़ी धूमधाम से माँ को जलायेगा। माँ के मरने पर किरिया मे दान के लिए गाँठ-का-गाँठ कपडा आ रहा है। किरिया मे ब्राह्मणो को खिलाने के लिए घी-चीनी, दाल-आटा लायेगा। बर्तन भी देगा, बर्तन मँगा रहा है।'

'हाय भगवान, अभी तो मरी नही!'

माँ दिन-रात हगती-मूतती पड़ी रही। शाम को एक बार मोती दुसाधन उसे साफ़ कर देती थी। 'अब दुसाध के छूने पर माँ की जाति नही जा रही थी। एक दाई लगायी है। वह रात को बुढ़िया की कोठरी में सोती है। माँ जिन्दा है, उसे जिन्दा रखने के लिए एक रुपया खर्च नही करेगा। लेकिन माँ का दाह करने के लिए, माँ की किरिया करने के लिए नथुनी तीस हज़ार रुपये खर्च करेगा।'

'यह कहा है ?'

'बहुत चिल्लाता है। तभी तो कहता हूँ कि उनका उल्टा कायदा है। जिन्दा आदमी को देखेंगे नही। मर जाने पर धूमधाम से किरिया-करम कर इज्जत बढायेंगे। बुढिया जल्दी मर जाये तो नथुनी को चैन आये। इनके मकान पर किरिया तक बराबर जाना।'

'कही जो कुछ न दे तो ?'

'देगा रे देगा। न देने पर नथुनी गोकुल लाला से नीचा हो जायेगा न ? उसकी जात-बिरादरी में हेठी होगी।'

कहावत है कि माघ का जाड़ा बाघ का जाड़ा। माघ की शीत में ठंड लगने से नथुनी की माँ मर गयी। सनीचरी किरिया तक आती-जाती रही।

अब खांसी की बीमारी है। लेकिन गंभीरसिंह मर रहे थे दूसरे रोग से। बेशुमार औरतों का साथ करने से देह में बुरी बीमारी हो गयी थी। शरीर सड-सड़ कर गला जा रहा था। इसीलिए इतना याग-यज्ञ का शोर-शराबा था। बीमारी के कष्ट से दवा-दारू न खाकर गंभीरसिंह मृत्यु को समीप बुला रहा था।

गुमाश्ता बोला, 'शुक्लपक्ष में मरना चाहता है।'

'कैसन ?' सनीचरी को ताज्जुब हुआ। 'मालिक-महाजन सब कर सकते है। सो तबियत है तो शुक्लपक्ष में ही मरेंगे।'

'कौन जाने ?' गुमाश्ता निर्लिप्त दार्शनिक भाव से बोला। 'शुक्लपक्ष में मरने पर सीधे बैकुंठ जाते है। कृष्णपक्ष में मरने से युधिष्ठिर की तरह पहले नरक के दर्शन होते है, उसके बाद स्वर्गवास होता है।'

पुराणों के पात्रों के बारे मे सनीचरी को कोई गभीर ज्ञान नही है। फिर भी उनके महत्व के बारे मे उसका विश्वास है। कैलेंडर मे युधिष्ठिर की तसवीर देखने से उसके मन मे त्रिलोक कपूर और युधिष्ठिर, अभि भट्टाचार्य और श्रीकृष्ण इत्यादि एकाकार है। इसी से सनीचरी ताज्जुब से, बोली, 'कैसन ? हाँ हजूर, मालिक परवर का जुधिष्ठिर है ?'

गुमाश्ते ने इस अज्ञ व्यक्ति को शान्त स्वर मे समझा दिया। मालिक-महाजन जो कहते है वही होता है। पाप और पुण्य देखने की गलती है। बुरे लोग कहते है कि ग़रीबपरवर ने बाप के ज़िन्दा रहते अँग्रेज़ी राज मे डाके डाले, और स्वतत्र भारत मे बहुत-सी लाशें गिरायीं, लछमन के बाप का घोडा चुराया, अपने हाथो दुसाध टोली जला दी, बहुत-से लडके-लडकियो को नष्ट किया, वह महापापी है। मालिक उस पर ध्यान नहीं देते। इसीलिए क्या महापाप से उसे बीमारी हो गयी है, उसे जानने के लिए घर मे ज्योतिषियो का मेला लगा है।

'कुछ पता लगा ?'

'क्या पता ?'

'पाप का ?'

'जरूर। बचपन में मालिक ने एक गाभिन गाय को डडा फेंककर मारा था। यही एक पाप है।'

नथुनी की तीन पत्नियाँ थी। बड़ी बहू मुँह फुलाकर रोज आटा और गुड़ दिया करती थी। कहा करती, 'बुढ़िया होकर मरी, उसकी किरिया में इतना खरच क्यों ?'

नथुनी की मँझली बहू बड़े अमीर ज़मीदार की इकलौती लड़की थी। धनी जमीदार ने इकलौती लड़की का ब्याह मातृधन से धनी होने के कारण नथुनी से किया था। उसने भी बराबरी का ब्याह करना चाहा था। तकदीर खोटी थी कि बड़ी बहू और छोटी बहू इकलौती न थी। इकलौती अकेली मँझली बहू ही थी। वह पति के घर को गरीब का घर समझ कर सौतों को टेढ़ी निगाहों से देखती थी। गुस्से का कारण था कि बड़ी और छोटी बहुएँ बेटे की माँ थी, वह लड़की की माँ थी। इसलिए लोगों की नजरों में गिरी हुई थी। बड़ी बहू की बात सुनकर वह व्यंग्य से मुसकराकर कहती, 'किरिया में तीस हजार रुपये का एक रुपया होता है ? सैकड़ो बरस मेरे बाप जियें, लेकिन उनके मरने पर दिखा दूँगी किरिया क्या होती है !'

बड़ी बहू कहती, 'सो तो खर्च करना ही होगा। तेरी बुआ को कलंक लगा था न, वह कलक ढांकन नही होगा ?'

'तुमने तो हँसा दिया, दीदी ! मेरी बुआ को कलंक ? मेरे फूफा का नाम गया शहर मे सब जानते है। तुम्हारी बहन जो जेठ के घर बैठ गयी और विधवा हो गयी, वह बात तो कहती नही।'

इसी पर जोरो का झगडा हो गया। लेकिन मँझली बहू ने पुण्य किये थे। उसकी बात भगवान ने सुन ली और मँझली बहू के बाप चेचक से मर गये। मँझली बहू ने सनीचरी को बुलवा भेजा। बोली, 'सनीचर और मंगल को लाश दूसरे को खोजती है, यह सच है। नही तो सास मरी और साथ-ही-साथ मेरे बाबा को चेचक क्यो हो गयी ? सुन सनीचरी, यह रुपया बख्शीश ले।'

'चेचक ?'

'हाँ रे।'

सनीचरी बहुत भोली बनकर बोली, 'मैंने तो आप लोगों से सुना है कि ऊँची जात वालों को चेचक नही होती। चेचक तो नीची जात वालों को ही होती है, हम लोगों के यहाँ। इसीलिए तो हम लोग गौरमेन से टीका लेते

'फिर भी कहती हूँ कि चाहने पर मालिक शुक्लपक्ष में मरेंगे।'

'ज़रूर। अब तक देखा नहीं, मालिक ने जो चाहा वह नहीं हुआ। पर यह भी कहे दे रहा हूँ कि मालिक जो कर रहे हैं, वह बहुत अच्छा कर रहे हैं। उस भतीजे के हाथ में जायदाद पड़ने से तीन-पाँच हो जायेगी।'

'क्यों?'

'मालिक ने जो कुछ किया, अछूत होने पर भी सब हिन्दू घरों में किया। कोई औरत गैर-हिन्दू नहीं है। भतीजे की रंडी तो मुसलमान है।'

'हाय राम!'

'तैयार रहना बच्चू! इतने दिन नौकरी की। किरिया हो जाने के बाद यहाँ नहीं रहना है। किरिया हुई और मैं गया। मालिक ने कहा है कि मोहरसिंह का दाह और किरिया लोग भूल जायें, ऐसा काम करना होगा।'

'जान लड़ा देंगे, हुजूर!'

सनीचरी लौट कर चली आयी।

दुर्भावना लेकर वह घर लौटी। एक-एक दिन कर छह दिन हो गये। बिखनी का क्या हुआ? उसका गाँव भी घोर गाँव था। बाहरी दुनिया के साथ कोई सम्पर्क न था। बसों पर बैठकर कोई कहीं न जाता था। राँची से बिखनी का हाल लाकर कौन दे? ठंडी साँस लेकर सनीचरी ने कथरी-बिस्तर धूप में डाल दिये। चार भुट्टों को चक्की में पीसा। उसके बाद पंचायती झोंपड़ी की मरम्मत के लिए गयी। इस काम में मेहनत करना आवश्यक रहता है। हमेशा देखभाल न करने से मिट्टी के घर में दीमक लगकर वह खोखला पड़ जाता है। उस काम को निबटाकर कुछ डालें और पत्ते सिर पर लाद घर आने पर उस आदमी को देखा।

अनजान आदमी, सिर मुँडा हुआ, खाली पैर।

'बिखनी मर गयी।'

सनीचरी पल-भर में सब समझ गयी, और पूछा, 'तुम उसके देवर के लड़के हो?'

'जी।'

सनीचरी का कलेजा बैठ गया। लेकिन तमाम मौतों, बहुत वंचनाओं,

है और देउता की पूजा भी करते हैं।'

'गौरमेन का टीका गौ के खून का होता है।'

यह बात कहते ही नथुनी को मँझली दद्दूटीके की बात उड़ा गयी और बोली, 'तू तो उस वक्त थी? बड़ी बहू के साथ मेरी गरमा-गरमी हुई थी? सो मेरी जो बात है वैसा ही काम है। बाप के सिवा मेरा कोई नहीं है। यहाँ तो दुसमनों में रहती हूँ। जो बेटों की माँ हैं, उनकी ही कदर है, मैं तो लड़की की माँ हूँ।'

'आपकी भी कदर है।'

'वह क्या मेरी क़दर है? मेरे बाप मोहरसिंह के रुपयों की कदर है। बाप मेरा ब्याह दूर नहीं करना चाहते थे, इसी से तो सौतों का घर मिला है। नहीं तो हम चौहान राजपूत हैं, इस घर में ब्याह होता?'

'तकदीर में जो लिखा है वह तो होगा ही।'

'यह सच है रे, सुन, मैं बाप के यहाँ चली। तू और बिखनी तो जायेंगी ही, और भी बीस रांडें लेकर जाना होगा। उनको सौ रुपये और चावल दूँगी। तुम दोनों को पचास रुपये और चावल। किरिया तक वहीं रहना, खाना, पीना और किरिया में कपड़ा-लत्ता लेकर तब लौटना।'

'हुजूर, आपके बाबा तो मरे नहीं।'

'शरीर सड़ गया। बहुत जवान शरीर था, बहुत दूध-घी खाया शरीर। ऐसा शरीर छोड़कर प्राण निकलना चाहते हैं? मेरी सास के मरने पर तुम लोगों को मोटा चावल, खिसारी की दाल मिली थी।'

'और तेल, नमक, मिर्चा मिला था।'

'कितना मिला, वह क्या मुझे पता नहीं? मेरी बड़ी सौत का हाथ कितना बड़ा है, सो क्या मैं जानती नहीं? मैं दूँगी चावल, दाल, तेल, नमक, आलू और गुड़।'

'हुजूर गरीबों की माँ-बाप है।'

'पर हाँ, रोने-सा रोना होना चाहिए।'

'रोऊँगी, और जमीन पर लोट जाऊँगी।'

'जमीन पर लोटेगी?'

'जमीन पर लोटूँगी और सिर भी पीटूँगी।'

बहुत अन्यायों से भरा उसका धैर्य और सयम था। उसने आगन्तुक से बैठने को कहा। खुद भी बैठी, बहुत देर तक चुप रही। उसके बाद धीरे से बोली, 'कितने दिन हुए ?'

'चार दिन हुए।'

सनीचरी ने उँगलियो पर गिन कर कहा, 'उस दिन मै गभीरसिंह के घर थी। क्या हुआ था ?'

'साँस से कलेजे मे कफ जकड़ गया था।'

'यहाँ से जाते-जाते ही ?'

'राह में ठडा सरबत पिया था।'

'उसके बाद ?'

याद आया कि रगीन शरबत, हाजमे की गोली, बेल का मुरब्बा—यह सब मोल लेकर खाने का बिखनी को बड़ा लालच था।

'उसके बाद हँफनी हुई। मेरा साला अस्पताल में काम करता है। डाक्टर को दिखाया, सुई का इलाज कराया।'

'मैंने वह कभी नही किया।'

बनिये की दूकान पर झाड़ू मार कर सनीचरी तिलचट्टों को घायल कर देती थी। मिट्टी की हँडिया मे तिलचट्टों को उबालकर उस पानी को पिला देती और बिखनी की साँस कम हो जाती।

'वह बेटे से मिली थी ?'

'वह कहाँ आया ? अब उसे भी खबर दे जाऊँगा। काकी क्या तुम लोगों के पास कुछ रख गयी हैं ?'

'कुछ नही ! कहती थी, मरने पर भी तुम्हारे पास कुछ है, यह नही मालूम। राह-राह फिरती रही...।'

'मुझे भी पता नही। पता होता तो ले जाता।'

'अब जाओ, बेटा ! बस से जाओगे, बस की सड़क भी दूर है।'

वह आदमी चला गया। अब सनीचरी अकेली बैठी अपनी हालत को समझने की कोशिश कर रही थी। मन मे क्या हो रहा था ? दुख ? नही, दुख नही, डर। आदमी मर गया, बेटा मर गया, नाती चला गया। वहू भाग गयी, सनीचरी की जिन्दगी मे दुख कब न था ? तब ऐसा सब पर छा

'सिर भी पीटेगी ?'

'कपार फट जायेगा।'

'तुम दोनो को पाँच-पाँच रुपये और। रुपयों की कोई बात नही। सनीचरी, मेरे बाप का दाह और किरिया ऐसी होगी कि मुलुक में चर्चा रह जायेगी। उसे देखकर मेरा आदमी और सौतें जल-भुन मरेंगे। मैं अपने बाप की इकलौती बेटी हूँ। बाप जो छोड़े जा रहे हैं, उनकी इज्जत रखकर किरिया-दाह करके दिखा दूँगी। रोज चाँदी के गिलास में उसने दूध पिया, जवानी में रंडी रखी, बूढ़े होने पर भी रंडी रखी। विलायती के सिवा सराब नही पीता था। नयी बहू मुझे दुख देगी, इसीलिए माँ के मरने पर ब्याह नही किया।'

'कुछ रुपये दीजिये। बजारी रांड़ों को पेसगी देना होगा। वह लोग एक नबर की खचड़ी है ?'

'ले।'

सारा काम ज़ोरों का हुआ। मालिक-महाजन के घर आदमी के मरने पर दाह-किरिया मे जो खर्च होता है, उसका मान क्षण-भर में फैल जाता है। रूदालियो की क़दर भी बढ जाती है। नतीजा होता है कि अंदाज से बाहर जो ख़र्च होता है उसे मालिक लोग दुसाध, गंजू, धोबी, कोलों की गरदन तोड़कर निकाल लेते है। सब अर्थों में मोहरसिंह की अंत्येष्टि नमूना बन गयी और खर्च का अधिकांश ब्राह्मण ले गये। नथुनी की बहू फिर पति के घर न लौटी। जिसमे ससुर की जायदाद नथुनी को न मिले, इसलिए बेटी के ब्याह में बेतहाशा ख़र्च किया। यह जरूर था कि वह कई बरस बाद हुआ।

सनीचरी ने उसके सौभाग्य की बात दूलन से कही। दूलन भद्दी हँसी हँसकर बोला, 'कलियारी मे सब यूनाइन बनते हैं। सो रूदाली, और रांड़ों को लेकर तू भी एक यूनाइन बना ले। तू बनजा पिसिडेन !

'हाय राम !'

'अब बजारू रांड़ों को खोज।'

'कैसन ?'

बिखनी हुक्का छोड़कर बोली, 'ला दूगी रांड़ों को। मालिक-महाजन तमाम औरतों को खराब कर देते हैं। वे रंडी बन जाती हैं।'

जाने वाला दुख नहीं था। बिखनी के मर जाने से उसके पेशे पर चोट पड़ी है, खाने पर हाथ पड़ा है, इसी से डर लग रहा है। डर क्यों लग रहा है? उमर हो गयी है, इसलिए। सनीचरी ऐसों का जीवन अन्तिम सांस तक मेहनत का जीवन है। उम्र माने बुढ़ापा। बुढ़ापा माने काम न कर पाना। काम न कर पाना माने मौत। सनीचरी की अपनी मौसी बुढ़िया हो गयी थी, ऐसी बूढ़ी कि उसे गठरी की तरह उठाकर कोठरी में ले जाना पड़ता था। जाड़ों के दिनों में धूप सेंकने के लिए उसे बाहर बैठाकर सब काम पर चले गये थे। आकर देखा कि बुढ़िया मर कर काठ हो गयी है।

सनीचरी ऐसी मौत नहीं चाहती। मरे क्यों? पति मरा, बेटा मरा, तो सनीचरी क्या अफ़सोस से मर गयी? दुख से इंसान मरता नहीं। बहुत अधिक शोक के बाद भी आदमी रोज नहाता है, खाता है। मिर्चें चरे जा रही है, यह देखकर उसने उठकर बकरी को भगाया। आदमी सब-कुछ करता है। लेकिन खाना न मिलने से मर जाता है। सनीचरी जब इतने अफसोस के बाद नहीं मरी, तो बिखनी के शोक से नहीं मरेगी। दुख तो बहुत है, पर सनीचरी रोयेगी नहीं। पैसा, चावल, नया कपड़ा पाये बिना रोना विलासिता है।

सनीचरी दूलन के घर गयी।

दूलन ने मामले की गंभीरता समझी। बोला, 'देख बुधुआ की माँ! जमीन का कब्जा नहीं छोड़ते हैं, सो तेरे लिए रोने का काम जमीन है। कब्जा छोड़ने से नहीं चलेगा। तू मजा नहीं देखती। एक-एक आदमी मरता है, तुम लोग जाती हो, वे लोग रोने-धोने की धूमधाम को लेकर इज्जत की लड़ाई लड़ रहे हैं। गंभीरसिंह को ही देखो न! उसको जो बीमारी हुई है उसका डाक्टरी इलाज करने से आदमी चंगा हो जाता है। उसकी वह कोशिश ही नहीं करता। मरने पर धूमधाम की बात सोचता है।'

'उनकी किस बात में इज्जत है, किसमें लड़ाई है, वही जानें।'

'तुझे भी जानना होगा।'

'जान कर क्या करूँगी?'

'बुधुआ के बाप के मरने पर उसकी मजूरी का काम मालिक के खेत-खलिहान में नहीं किया?'

'धत, वह दूसरी जात है।'

'न, न। तू नही जानती।'

'तोहरी में हाट के दिन जाने से रंडी मिलती है।'

दूलन को कुछ याद आया। बोला, 'अरे सनीचरी, नवागढ़ के गंभीरसिंह को जानती है?'

'बाप रे, उन्हें नही जानूँगी? हाथी पर सवार होकर वह दिवाली के मेले में घूमते हैं। इतनी बड़ी नाक और झुलाये फिरता है रंडी।'

'बहुत खराब काम किया है।'

'नया क्या किया है?'

'उसकी तो बँधी हुई रंडी मोतिया है। उसे बहू की इज्जत के साथ रखा था। मोतिया की बेटी गुलबदन को चाँदी की झाँझ पहनाकर गोदी में नचाता था। कहा था कि मोतिया के मरने पर गुलबदन की शादी कर देगा। आज देखते है कि वह गुलबदन तोहरी जाती है। रोते-रोते आँखें लाल हो गयी हैं। बोली, पैदा करना जानता है, पालना-पोसना नही सीखा है। मुझे निकाल दिया। मैंने पूछा, क्यों? वह बोली, बुड्ढे का निकम्मा भतीजा बहुत दिनों तक जमा रहा। कहने गयी तो आँखें निकालकर बोला, माँ को मरे तीन महीने हुए तू घर पकड़कर क्यो बैठी है? भतीजा जो कहता है वह मान ले, नही तो चली जा। रंडी की लड़की, तुझे खाने की कौन कमी है?'

'बड़ा हरामी है।'

दूलन खखार कर खाँसा। बोला, 'मेरे दिल में दुख हुआ। गुलबदन बोली, उसके भतीजे के पास रहूँ तो अपनी लड़की से यह बात कह पाती? और अगर रहूँ तो मेरे सन्तान न होगी? वह भी एक दिन लात खाकर निकाल दी जायेगी, तो यही ठीक है, बाजार जाऊँगी।'

सनीचरी ठंडी साँस लेकर बोली, 'ऐसा रूप! उसे कोई सेठ ले जायेगा!'

बिखनी समझदार की तरह बोली, 'अपनी माँ को देखा है, अब क्या वह बँधी रखैल बनेगी?'

बिखनी तोहरी गयी। लौटकर बोली, 'बाप रे, माई रे! रुपया देंगे यह सुनकर रंडियों की भीड़ लग गयी।'

'उनको देखा?'

'जरूर किया।'

'बिधनी के मरने पर उसका काम भी करेगी।'

'कैसन ?'

'खुद जायेगी,' दूलन बिगड़कर चिल्लाया, 'तेरे पेट का काम है। अपने आप जायेगी।'

'तोहरी ?'

'हाँ, तोहरी। जायेगी, रंडी जमा करेगी। नहीं तो गंभीरसिंह का भतीजा और गुमाश्ता सब रुपया मार बैठेंगे।'

'मैं जाऊँगी।'

'जरूर जाना।'

'वहाँ...।'

'बुधुआ की बहू है। यही न ?'

'तुमको मालूम है ?'

'जरूर मालूम है। वह भी बरबाद रंडी है न, उसे भी बुलायेगी।'

'उसको भी ?'

'बिलकुल, उसे भी खाना-पहनना होता है न ? रंडियों को बुलाकर रोना मजेदार तमाशा है। मालिक-महाजन के रुपये पाप के रुपये होते हैं। उसका बहाव अटूट है। ले आना कुछ बाजारू रंडियाँ। उनमें से भी तो मालिक-महाजनों ने कितनों को रंडी बनाकर तमाम को ठोकर मारी हैं, मारते हैं न ?'

'मारते हैं।'

कौन किस तरह रंडी बनी, यह सब बातें सनीचरी नहीं जानती। लेकिन याद आया, पेट की आग से बुधुआ की बहू ने घर छोड़ा था, गुलबदन ने गंभीरसिंह के भतीजे को 'भाई' माना था। लेकिन गंभीरसिंह के भतीजे ने उसे रंडी के सिवा कुछ न समझा। सब जैसे बहुत गड़बड़ हो। सनीचरी सब-कुछ सोच कर कुछ तय नहीं कर पा रही थी। लेकिन दूलन क्या कह रहा था ?

'इतना पाप-पुन्न देखने मत जा, बुधुआ की माँ! पाप-पुन्न मालिकों के काम की चीज है। वे ही उस हिसाब को अच्छी तरह समझते हैं। हम-तुम

'देखा।'

'कैसे देखा ?'

'सारी चौअन्नियां रंडियां हैं, बुढ़िया हो गयी हैं। फिर भी सुरमा लगाये ढिबरी लेकर खड़ा रहना पड़ता है। बुड्ढा मर गया है, यह जानकर चली आयेंगी। अच्छी बात है!'

'क्या ?'

'बुधुआ की बहू। तेरे बेटे की बहू को भी देखा।'

'तोहरी में ?'

'हाँ। तुझ से भी ज्यादा बुढ़िया हो गयी है।'

'छोड़ उसकी बात।'

'उसने खुद ही बताया। आज दस बरस से वहाँ है। बेटे की बात पूछ रही थी।'

'तूने क्या कहा ?'

'क्या कहती ? क्यों कहती ? मैंने बात ही नहीं की।'

'अच्छा किया।'

घघेंडे की तरकारी और आटे की लिट्टी खाते-खाते सनीचरी को बहू की बात याद आयी। उसे बहुत भूख थी। कौन बरस बीता था ? उस बरस लाइन पर हाथियों का झुंड आया था और एक खड़े इंजन को भी गिरा दिया था। बुधुआ के मरने के साल। वह आम का पेड़ इतना-सा था, अब वह फल दे रहा है। दस बरस तोहरी में हुए। अच्छा हुआ कि हरुआ कहीं भाग गया। माँ का नतीजा देखकर नहीं गया।

खाना खाने के बाद दोनों ने तम्बाकू पी। सनीचरी बोली, 'उसकी कसम! बुधुआ के मरने पर भी मैं उसे न फेंकती।'

'न, न, उसे कभी फेंकती ?'

'बहुत गरीबी देखी।'

'बहुत।'

सनीचरी को फिर कोई बात न सूझी।

उसके बाद मोहरसिंह मर गया।

बड़ी धूमधाम से किरिया हुई। रांड़ बुढ़ियों ने सनीचरी और बिखनी

तो भूख का हिसाब समझते हैं।'

'सच बात है।'

'तब फिर क्या ? चली जा।'

'गांव में सब मुझे बुरा नही कहेंगे ?'

दूलन बड़े अफ़सोस के साथ हँसा। बोला, 'पेट के लिए कोई काम करने पर उसमें कौन बुराई देखता है ?'

सनीचरी ने उसकी बात समझी।

गभीरसिंह सत्रह दिन बाद मरा। जब उसको साँस का दौरा उठा, तभी गुमाश्ते ने सनीचरी को खबर भेजी। सनीचरी ने कहला भेजा, 'मैं आऊँगी, लोगों को लेने जा रही हूँ।'

सनीचरी ने काली धोती पहन ली और तोहरी चली गयी। लोगों से पूछकर रंडीपट्टी का पता लगाने में उसे जरा भी शर्म न आयी। पेट का मामला सबसे बड़ा मामला होता है। वह पुकारते-पुकारते उस पट्टी मे घुसी, 'रूपा, बुधनी, सोमरी, गंजू ! कहाँ हो तुम सब ? आओ, आओ। रूदाली का काम है।'

जान-पहचान की सारी वेश्याएँ एक-एक कर आ गयी। वहाँ पर भीड़ जमा हो गयी। बहुत रंडियाँ थी। पाँच रुपये से लेकर चौअन्नी तक की वेश्याए थी।

'हुजूराइन आप ?'

'बिखनी मर गयी है न।'—सनीचरी हँसी। उसके बाद भीड़ में पहचानी हुई सूरत को देखकर बोली, 'बुधुआ की वहू ? वहू, तू भी आ। गुलबदन, तू भी चल। गंभीरसिंह मर रहा है। रोकर रुपया लो और उसके मुँह मे नोन मल दो। सरम क्या है ? जो मिले वसूल कर ले। चल-चल। सबको पाँच-पाँच रुपये, सबको चावल मिलेंगे, किरिया में धोती।'

वेश्याओं मे भाग-दौड़ मच गयी। जवान वेश्याएँ बोली, 'हम ?'

'सब चलो। बूढा होने पर यह काम तो करना पड़ेगा। अपने रहते-रहते तुम लोगों को शुरू करा जाऊँ।'

सब को बड़ा मजा आया। गंगू ने सनीचरी को मोढ़े पर बिठाया। रूपा

से नमस्कार कर कहा, 'हुजूर, फिर जरूरत हो तो पता देना। आ जायेंगी।'

सनीचरी और बिखनी को कपड़ों के साथ चमचमाती पीतल की रकाबी और बाँस की छतरी भी मिली। बिखनी ने उसे हाट में बेच दिया। रुपये हाथ में रहते-रहते कीड़े लगा मक्का का बोरा खरीद लिया। बोली, 'चक्की से पीसने पर आटा हो जायेगा। कूटने से दलिया बनेगा, समझी?'

धीरे-धीरे जीवन व्यवस्थित हो गया। किसी के मरने पर बँधा रोजगार था। नहीं तो बाकी समय आधा या चौथाई पेट खाओ। न जुटे तो? कोई परवाह नहीं। बरस में एक-दो से अधिक मरने का भाग्य न होता। सबकी तरह खेतमजूर की मेहनत करो, नहीं तो मालिक का खेत गोड़ो, जंगल में जाकर सब की तरह मूल-कन्द ढूँढो।

बिखनी ने सबको ताज्जुब में डाल दिया। लड़के को एक बार भी देखने नहीं गयी, सनीचरी के आँगन में मिर्चों के पौधे उगाकर हाट में मिर्चें बेचीं। उसके बाद बोली, 'लहसुन लगा कर देखें। लहसुन अच्छा बिकता है।'

धीरे-धीरे उनकी शोहरत बढ़ गयी। सनीचरी को सब बुलाते थे। हाँ, पैसा लेती। लेकिन सचमुच सर पीटती, सचमुच जमीन पर लेटती। और मरे हुओं की तरह-तरह से बड़ाई करके बिलपती। उसे सुनकर मृतकों के सगों के भी दिलों में होता कि जो मर गया वह पक्का बदजात था, उससे बड़ा शैतान दूसरा नहीं। वह स्वर्ग का देवता था, छलने के लिए धरती पर आया था।

सब-कुछ आश्चर्यजनक ढंग से चल रहा था। दो बरस बहुत मन्दे निकले। नथुनी की बड़ी बहू का भाई शोथ रोग से मरने बैठा था। अस्पताल में चंगा हो आया। सनीचरी के महाजन लछमन की विमाता का ढंग और भी बुरा था। वातज्वर में मौत निश्चित थी, किन्तु कहीं से एक सत्यानासी वैद्य ने आकर उसे जिला दिया।

सनीचरी ने ठंडी साँस लेकर कहा, 'नसीब है।'

पारसनाथ नाऊ भी बहुत खफ़ा हुआ। बोला, 'यह धरम की बात नहीं है।'

'कैसन?'

'देख न तू, बुधुआ की माँ! पहले आदमी को हारी-बीमारी होने से

चाय और बीड़ी मोल ले आयी। बड़ा जोश था। उसके बाद सब नवागढ़ चली।

गंभीरसिंह का भतीजा, गुमाश्ता—सब लोग देखकर ताज्जुब में पड़ गये। गुमाश्ता फुसफुसा कर बोला, 'रंडी टोली को झाड़कर ले आयी है। करीब सौ रंडियाँ है।'

सनीचरी बोली, 'क्यों नहीं? मालिक ने कहा था कि ऐसा सोर मचाना कि किस्सा बन जाये। सो क्या दस रंडियों में किस्सा होता है? हटो, हटो, हमारा काम हमको करने दो। अब मालिक हमारे हैं।'

गंभीर की लाश में सड़े घाव की बदबू थी। उसकी पेट-फूली लाश को घेर कर रोने वाली रंडियाँ सिर पीट कर रोने लगी। गुमाश्ते की आँखों से आँसू बहने लगे। अब कुछ न बचेगा, सारे पैसे बँट जायेंगे। यह सर पीटना सनीचरी की शरारत है। सर पीटने से दूने रुपये। भतीजा और गुमाश्ता बेबस दर्शक बने खड़े रहे। सिर पीटते-पीटते, रोते-रोते गुलबदन सूखी आँखों से भद्देपन से मटक कर भतीजे की ओर देखकर मुसकरायी। उसके बाद सनीचरी का रोना ध्यान से सुनकर उसे दुहराना शुरू किया।

वह मर जाता था। जनम के साथ-साथ मरन भी चलना चाहिए। नहीं तो धरती का काम कैसे चलेगा? रोग होने पर बूढ़ा आदमी मरेगा। वह नहीं, डाक्टर, वैद्य, हकीम सभी बूढ़ों को जिला देते है। यह तो ठीक काम नही है, बुधुआ की मां!'

सनीचरी साँस छोडकर बोली, 'तुम्हें क्या कहूँ, बताओ? जनम में, ब्याह में, मरने मे तुम रहते हो। ब्याह की बात उठाने में भी तुम्हारी जरुरत होती है। लेकिन बताओ तो हमारी क्या हालत हुई है?'

लेकिन बिखनी निराश नही हुई। बोली, 'अभी समय नही हुआ, इसी से मरना नहीं हुआ। काल आने पर क्या कोई बचेगा?'

दूलन बोला, 'यह कुछ नही रे! पहले से ज्यादा खाने लगी है। इसी से थोडी इधर-उधर की फिकर करती है। मालिक-महाजन को नहीं देखा? लछमनसिंह की भली माँ तो गेहूँ की बिक्री का रुपया देखकर रोने बैठ जाती थी। इस बरस गेहूँ हुए, बेंचकर रुपये मिले। अगले साल अगर वैसे गेहूँ न हुए तो?'

सनीचरी बोली, 'सब बातों में क्या मजाक ठीक है?'

उसके बाद सनीचरी का भाग्य खुला, इसी बरस। बिखनी ने हँसते-हँसते आकर कहा, 'बड़ी अच्छी खबर है।'

'क्या?'

'वह बैठकर बताने की है।'

'खबर क्या है?'

'गुस्सा होती है?'

'बता तो, खबर क्या है?'

'गंभीरसिंह मर रहा है।'

'किसने कहा?'

बिखनी ने सब खोल कर कहा। खबर दी पारस नाई ने। नाई की दी खबर झूठ नही होती। नथुनी की माँ को खाँसी की बीमारी हुई थी। सनीचरी को अच्छी तरह याद है।

'हाँ-हाँ, याद है। बोल न, बिखनी!'

'नथुनी ने अपनी माँ को जिस तरह रखा था, वह कायदा अब हर घर

डाइन

चैत के महीने मे वर्षा नही होती है। बैशाख और जेठ तपते हुए आये और गये, असाढ़ धूमावती बनकर आया। बादल दिखायी देते थे, छिप जाते थे। कुरुडा की दार्शनिक, निराशावादी बुधनी उरांव गंभीर संतोष के साथ बोली, 'ओह, इस बार सूखा तो पडा ही, अकाल भी हुआ।'

वे कुरुडा नदी का पानी भर रही थी। सनीचरी बोली, 'हां, लच्छन बहुत खराब है। आसमान मे गिद्ध और चीलें मँडरा रही हैं, देखा है?'

मोती बोली, 'अब की सरकार अकाल में मरने नहीं देगी। पहले से ही खिचडी देगी।'

बुधनी बोली, 'सुना है?'

'आदमी आया था। तोहरी को रिलीफ आयेगी। सड़क बनानी होगी। मजूरी देंगे, खिचड़ी, माइलो देंगे।'

बुधनी बोली, 'तो अकाल गाँव में घुसेगा, तो जाऊँगी कैसे? पहले ही चली जाऊँगी। अकाल आकर सूने गाँव मे रहे।'

इस बात पर उस समय किसी ने ध्यान नही दिया, लेकिन बहुत जल्दी बात नये ढंग से दिखायी पडी और सभी बोले, 'अकाल आकर सूने गाँव मे रहे, बात असगुन बुलाने जैसी हुई। कुरुडा इस समय अशुभ और अमगल को बुला रहा है। एक गिद्ध बातो को हवा मे से झपट्टा मार कर उठा लेता है और डाइन को पहुँचा देता है।'

उस समय डाइन रहने की जगह खोज रही थी। अकाल के साथ जो

मे चल रहा है। खाँसी माने तपेदिक। शिव का असाध्य रोग। इस रोग ने जिसे पकड़ा, उसका इलाज करना शिवजी का अपमान करना होता है। गंभीरसिंह का अपना कहने को कोई नहीं है। सब भतीजे को मिलेगा। बुड्ढे को खाँसी रोग होते ही भतीजे ने झटपट पूरा घर संभाल लिया। गंभीरसिंह को यहाँ रख दिया। बकरी लाकर कमरे में बांध दी। बकरी देख कर गंभीरसिंह ने कहा, कमरे में इसे बांधने से तो कोई जिन्दा नही रहता। मैं क्या नही बचूंगा? जिन्दा न रहने पर ऐसी किरिया करना कि देखकर सब ताज्जुब करें। सब यह सोचें कि हाँ, कोई मरा था।'

'उसके बाद क्या हुआ?'

'मरेगा तो। भतीजे के करने से कुछ नही होगा। बुड्ढे ने वकील को बुलाकर किरिया के लिए लाख रुपया खरच करने को कहा है।'

'क्यों?'

'कहता है, रुपया सारा खतम कर जायेगा। भतीजा जमीन-जायदाद-खेती का जो मिले सो करे, मेरे बाल-बच्चे नही है। इस बज्जात के लिए नकद रुपया नही छोड़ जाऊँगा।'

'तब फिर?'

'आज नही तो कल बुड्ढा मरेगा।'

'तब तक?'

'मैं एक बार चक्कर लगा आऊँ।'

'कहाँ जायेगी?'

'राँची।'

'राँची? क्यों?'

'पूछ रही है क्यों? हाट मे मेरे देवर के लड़के से भेंट हुई थी। उसने कहा, चाची, जरा चल। उसकी लड़की की शादी है।'

'लड़की की शादी?'

बिखनी गहरी साँस लेकर बोली, 'कहता है कि उस ब्याह में वह अभागा भी आयेगा। मेरा बेटा। तू कहती है कि बेटे को देखना चाहती है तो घर के पास उसकी ससुराल जा। सो मैं जाऊँगी नहीं। देवर के बेटे के घर जाकर एक बार देख आने पर कोई कुछ कह न सकेगा। उसे भी यह नही

कुछ हुआ सब डाइन के कारण ।

बच्चे रिलीफ मे दिया हुआ सोयाबीन का दूध पीकर गरदन उलट कर कै करते-करते मरे जा रहे हैं। गाय-भैंस मर रहे है। पेडों से चक्कर खाकर कौए मरे जा रहे हैं। डाइन के रहने से यह सब हो रहा है।

डाइन का कोई ठीक-ठिकाना नही है। रोज जिनके साथ उठते-बैठते हो, उन्ही में डाइनें हो सकती है। डाइन के आसपास रहने से ऐसी बडी-बडी आश्चर्यजनक घटनाएँ हो सकती हैं जिन्हे न किसी ने देखा हो, न सुना हो।

मुरहाई मे एक गंजू बुढिया चकमक पत्थर से आग निकाल कर बीड़ी पीने चली। चकमक पत्थर से आग के बजाय खून निकला। कही अभी-अभी पैदा हुआ बच्चा अँगीठी को पैरो से ठेलता सड़क पर चला जा रहा है। कही मुंडा लोगों के कब्रिस्तान मे दिखायी दिया कि मुर्दे समाधि का पत्थर हटाकर बैठे गाना गा रहे हैं।

यह सब क्यों होता है, कोई सोच नही सकता। टूरा मुंडा-गाँव था। वहाँ के प्रधान ने कहा कि उसकी जवान लड़की टाहाड़ से टूरा लौटने की राह मे हवा में गायब हो गयी।

चारों ओर उलट-फेर है। सब जगह आतंक फैला हुआ है। अन्त मे सब टाहाड़ के हनुमान मिश्र के पास गये। वे हिन्दू, ब्राह्मण, शिवमन्दिर के पुजारी और उस क्षेत्र के एक मुख्य व्यक्ति थे। हनुमानजी उपवास कर हत्या दे रहे थे। उसके बाद बोले, देवता ने उन्हे एक भयंकर सपना दिखाया है। 'मैं अकाल हूँ' कहती एक भयानक औरत, नगी, एक लाल रग के बादल पर बैठकर उड गयी। पंचांग मे कहा है कि वह डाकिनी थी। इस डाकिनी की खोज कर भगाना होगा। उसे मार कर खून-ख़राबी करने से या जला कर मारने से सब लोगो का सत्यानाश होगा।

डाइन क्या कुरुडा, मुरहाई, हेसाड़ी—इस तरह के सब गांवों के केंद्र बनाकर फिर रही है। इसका कारण है कि इन सारे गाँवो के और इसी तरह के गाँवो के रहने वाले महापापी हैं।

हनुमान मिश्र ने इस पाप के मामले की इस तरह से व्याख्या की—वे महापापी हैं। नहीं तो नक्सल गड़बडी, जे०पी० आंदोलन, आपातस्थिति—

अब मे पुलिस ने इन्हीं सारे गांवो मे गड़बड़ क्यों की ? ऊँची जातवालों को क्यों नहीं छुआ ? वे महापापी हैं—सारे गंगू-दुसाध-धोबी-ओरांव-मुंडा। अन्त के दो दल तो पापियो के पापी हैं। आज अपने असभ्य देइ-देउता, कल मिशन के यीशु, परसों हिन्दुओ के देवता ! पूजा का कोई विचार नहीं। उससे वे अकाल मे, सूखे मे, पुलिस के नंगे नाच मे किसी देवता से रक्षा नहीं पाते।

—वे महापापी हैं। नहीं तो सूखे और अतिवृष्टि मे वे क्यों मर गये ? भीख माँगने मे लज्जा नहीं आती। मेहनत से डरते है, कामचोर हैं, फिर कहते हैं कि काम नहीं मिलता।

डाइन को भी इन पापी बस्तियो में अनुकूल आबहवा मिलती है। लेकिन डाइन को तलाश कर भगा न पाने मे उनका ही सत्यानाश है।

यह बातें कह कर हनुमान मिश्र ने डर का एक बड़ा-सा अशरीरी प्रेत हवा में छोड़ दिया। अज्ञात भय से सब सूखने लगे।

सब एक-दूसरे पर अविश्वास करने लगे। अपने प्रिय और जाने-पहचाने लोगों के कामों पर भी अविश्वास करने लगे।

मुरहाई का सोदन गंगू अपनी बुढ़िया माँ को रात में उठ कर बाहर जाते देख उसके पीछे लग गया। माँ हमेशा की तरह बाहर से निपट कर उठ आयी। आकर दरवाजा बन्द करने पर अचानक सोदन को लगा कि कोठरी में आकर जो पुआल के बिस्तर पर लेटी है वह उसकी माँ नहीं है। डर के मारे सोदन चिल्लाता हुआ निकल गया और पड़ोसियों को पुकारा। पड़ोसी लोग सोदन की माँ को बत्ती जला-जला कर देखते हैं कि उसके पैर धरती पर पड़ रहे हैं या नहीं, जमीन पर छाया पड रही है कि नहीं ? इसके बाद सोदन की माँ का हाथ सबके सामने नहन्नी से काट कर देखा गया कि खून लाल है या काला ? उसके बाद बुढ़िया को मुक्ति मिली। लेकिन अपने बेटे ने उसे डाइन समझा, इस दुख के मारे सोदन की माँ हरम देउ के थान पर जा बैठी।

उसका संकल्प बिना खाये मर जाने का था, लेकिन उपवास की औंघाई मे जो नींद आयी, तो उसे मन-ही-मन लगा कि सोदन को डाइन ने पकड़ लिया है। तभी वह उठ कर चीखने लगी, 'सोदन, ओकर साथ मत आइसो। ऊ डाइन है।' आकर देखती है कि जो सोचा था वही है। सोदन एक मरा

साही का पीछा कर रहा है। उसने सोदन को पत्थर मार कर लँगड़ा कर दिया और तब बच्चे को बचा सकी। साही रूपी डाइन निराश होकर भाग गयी।

सारे पति-बाप-भाई-बेटे औरतों पर नजर रखने को लाचार हो गये। जमीन पर परछाईं पड़ रही है या नहीं, मैदान मे मल-मूत्र त्याग करने के बाद जब वापस आते है तो साथ मे सिर के ऊपर कही कौआ उड़ता हुआ आता है या नही, रात मे बाहर निपटने के बाद कोठरी मे आकर जो कुंडी लगाये वह आदमी है या नही? इन सब बातो पर कड़ी नजर रखी जाने लगी। डाइन को खोज निकालना आसान काम नही है। सब एक-दूसरे पर शक करने लगे जिससे कि बहुतेरी न होने वाली घटनाएँ हो जाती हैं और हो गयी।

हर बरस अकाल में हेसाडी का दैतारि दुसाध अपनी माँ को टीन की एक कटोरी देकर बस-जक्शन पर बैठा जाता था, इस बार भी उसने बैठा दिया। हर बार दैतारि की माँ एक-दो महीने भीख माँगती, रात मे बरगद के नीचे सो जाती, बसों के क्लीनर लोगों के पास। क्लीनर भी घोर गर्मी मे बरगद के नीचे ही पेड़ की छाया के बाहर पक्के चबूतरे पर लेटते थे। हर साल वे दैतारि की माँ को नीद मे बड़बड़ाते सुनते थे। इस बार पहली रात के बाद ही उन लोगो ने शोर मचाया। बोले, रात में वह किस पिशाच को बुला रही थी? 'आओ, आओ' कह रही थी।

दैतारि की बुढ़िया माँ ने मामले की गम्भीरता को ठीक से नही समझा। वह पोपले मुँह से हँस कर बोली, 'काली गौ को। नींद मे सपना देखा कि वह बछड़ी गोठ मे घुस नही रही है।' इसके बाद उसके खिलाफ केस को महत्व मिला। सपना, काली गौ! काला रग अशुभ होता है, उसके लिए चीख-पुकार! क्लीनर बोले, 'भाग यहाँ से। नही तो ढेले मार कर भगा देंगे।'

बडे ताज्जुब की बात थी। बुढ़िया तीन मील पैदल चलते-चलते मुँह के बल गिर कर मर गयी। अधमरे और मरभुक्खे सियारों के झुड की कृपा से बुढ़िया का सस्कार भी दैतारि को न करना पड़ा। शीघ्र ही सबने निश्चय किया कि सियार नही, डाइन ही दैतारि की माँ को खा गयी।

डर मे रहते-रहते मानव का स्नायु-मंडल विद्रोह कर देता है। उस पर

की आशा की थी। पर सब-कुछ उलटा हो गया। उनके मन में उस समय पछतावा दिखायी पड़ा। उन्होंने जमीन पर लेटकर किरिया खायी कि एक-दूसरे को भाई-बहिन की नजरों से देखेंगे।

लेकिन प्यार मुश्किल से दूर होने वाली बीमारी होती है। मानी कुछ दिनों तक बहुत ही शान्त रही। बरम बोला, 'फसल होने पर तेरी फिर शादी करा दूंगा। तेरा देवर अब जवान पट्ठा हो गया है। उसकी तबियत भी है।'

इस बात पर मानी की आँखों से आँसू बहने लगे। भाई की ममता समझ में आयी। भाई की बात से कलेजे में बहुत चोट लगी। वह परसाद को प्यार करती थी। धीरे से बोली, 'वह देखा जायेगा। फसल तो उठे।'

'फसल! पानी का क्या हाल है?'

'पानी पड़ेगा।'

'पानी पड़ेगा? बादल मँडराते है, टिकते नहीं।'

पानी के न होने से भुट्टा, मड़ुआ की खेती बरबाद होने की फिकर में भाई-बहन क्षण-भर के लिए एक-दूसरे के निकट आ गये थे। बाप के मरने पर कामचोर पत्नी और बूढ़ी माँ को लेकर बरम खुशियाँ मनाता रहता था। मानी के आने के बाद भाई-बहन ने गृहस्थी संभाल ली थी। फसल काटने-उठाने, चक्की में पिसाने, हाट ले जाने में मानी ही सर्वेसर्वा थी। बरम बोला, 'परसाद की बात भूल जा।'

'भूल जाऊँगी।'

'पड़ोसी का घर उजाड़ना ठीक नहीं।'

'नाहीं।'

मानी ने सारी बातें मान ली। उसके बाद बोली, 'घर छा डालो। पानी टपकता है।'

'रस्सी है?'

'है। और दो लच्छियाँ डोरी तुझे भूरा के यहाँ से मिल जायेंगी। पिछली बार ली थी।'

'मैं ले लूंगा।'

घर की बात पर दोनों को एक साथ ध्यान आया कि परसाद बड़ा

अगर अकाल का भी आतंक हो तो पाथियों का दल उसकी मार सहन नहीं कर सकेगा।

जो रिलीफ़ देते है उन्हीं रिलीफ अफसर, मिशन के कार्यकर्ता, सेवा-संघ के साधु—सभी ने देखा कि पीड़ितों की आँखों में चेहरे पर भयंकर क्रूरता और रूखापन है। उनकी आँखें चकरी की तरह घूमती रहती हैं, मानो कुछ ढूंढ़ रही हों। बड़ी ताज्जुब की बात थी। इनके बारे में पहले यह मालूम था कि इन अंचल के आदिवासी, स्वभाव में अनुभवहीन थे। अकाल के दिनों यह लोग मिशन के दरवाज़े पर बच्चों को छोड़ कर चले जाते थे। आग लगने पर, गाँव राख हो जाने पर फ़ौरन वहाँ नहीं लौटते थे। कारण पूछने पर कहते, हमारे पास बच्चे मर जायेंगे, मिशन उनकी जान बचा लेगा। घर जलने पर न लौटते, क्योंकि घर बनता है मिट्टी से, पेड़ों के पत्तों से। एक लोहे की कड़ाही और कमर का बलोया—फरसा छोड़कर घर में पैसे से खरीदी कोई चीज नहीं रहती। किस लालच से लौटें?

इन लोगों ने देखा कि यह आकर्षणहीन लोग अकाल के समय एकदम निर्लिप्त होकर बैठ जाते हैं। चेहरे पर और आँखों में किस तरह की दीवार खड़ी रहती है! उस रुकावट को हटा कर इनके मन में कोई मानवी कुतूहल नहीं उठाया जा सकता है। रिलीफ़ लेने में व्यस्त कंकाल-मात्र जननी की गोद में कंकाल-से शिशुओं के आगे समाजसेवी महिलाओं ने 'देखो बेबी, खिलौना देखो' कह कर झूम-झूम कर नाच दिखाकर भी पाया है कि बच्चे काँच की दीवार के उस पार से क्रूर उदासीनता से ताकते रहे।

इस बार इनकी आँखें और चेहरे बहुत सजीव थे। जाग्रत, चंचल और क्रूर।

ग्राम-सेवी मंडली की रिपोर्ट और भी बुरी रिपोर्ट है।

जैसे—गाँव के बाहर से किसी लेंड़ी कुत्ते के आने पर पहले अन्य लेंड़ी कुत्ते ही उसे भगा देते।

अब आदमी उन्हें निर्दय क्रूरता से ढेले मारकर निकाल देते हैं।

रिलीफ़ लेने के बाद, इस गर्मी में भी सब आग जलाकर सोते हैं। सारे आदमी रात को पारी-पारी से जागकर पहरा देते हैं।

रिलीफ़ देने के साथ टीका और इंजेक्शन देना नियत था। हर रात

इस समय जो वे निकम्मे जमा हुए है, उसके पीछे भी डाइन की माया है या नही, कौन कह सकता है ? इसे लेकर अभी झगडा-बखेड़ा नही। अपना-अपना घर सभालो। ज्यादा गड़बड करने से जूते मार कर सीधा कर दिया जायेगा।

यह कुछ बातें सोचने मे बडी करुणापूर्ण और हृदय-विदारक थी। इनका अर्थ भी था। कुछ बरस पहले होती तो महाजनी अत्याचार, अनशन, अकाल, सूखा इनका मनोबल तोड़ न देते। वे चीजें उनके जीवन का अभिन्न अग थी।

एक जमाने मे कुरुडा नदी न थी। कोयल की धारा का रास्ता बदलने से दो सौ बरस पहले यह हो गया। इस बात को यह लोग नही समझते। नदी सदा से है, क्योंकि बाप-दादे के जमाने से वे नदी देखते आये हैं।

जीवन मे कब महाजन-जमीदार नही थे, यह भी उनकी समझ मे बाहर की बात है। यह लोग बाप-दादे के जमाने से महाजन-जमीदार का शोषण देखते आ रहे हैं। इसलिए यह अभिशाप चिरकालीन है।

लेकिन पुलिस का अत्याचार सदा से नही रहा है। नक्सल गड़बड, जे० पी० आन्दोलन, आपातकालीन स्थिति और पुलिस उनकी जिन्दगी को तहस-नहस कर रही है। यह उनकी समझ मे नही आता। लेकिन जीवन समाप्त हो गया है।

महाजनी जुलुम, अकाल, सूखा के बाद भी जात-पाँत के हिसाब से, ग्रामसमाज की नजरों में दंडनीय अपराध की ओर इनका ध्यान था। पुलिस के जुल्म ने इनके जीवन का प्राणरस सोख लिया है।

अब फिर परसाद और मानी को दड देने का काम मन मे नही रहा। गाँव की अर्थनीति में हर काम के योग्य युवक-युवती आवश्यक है। इन्हें भगा देना भी संभव नही है।

गाँव के बुजुर्ग हुमरू ने खँखारकर गला साफ़ करते हुए कहा, 'परसाद, मानी ! हम तो जीते-जी मरे हैं। तुम नये सिरे से मत मारो ! तुम लोगों को भगा दें ? कहाँ जाओगे ? क्या करोगे ? परसाद के बहू-बच्चा कहाँ जायेंगे ?'

परसाद और मानी ने —जूते खायेंगे, गाली खायेंगे, मार खायेंगे इत्यादि

पाकर वे उसे अपने देश ले जायेंगे। उसने भी कहा था कि डाइन की तलाश करने में मोटे तौर पर हर-एक को हर-एक पर अविश्वास करना पहली आवश्यकता है। बताया था कि ज़रूरत पड़ने पर अपने पर भी अविश्वास करना पड़ेगा।

मिश्रजी के मन में बात बैठ गयी थी। उन्होंने कहा था, 'अरे अभागो! तमाम समय तो अकेले मैदान में या पहाड़ पर या जंगल में घूमते थे !अपनी छाया पड़ती है या नहीं, सिर के ऊपर कौआ या गिद्ध या चील उड़ रहे हैं या नहीं, यह देखना तेरा अपना ही काम है।'

खुद ही अपने ऊपर सन्देह करो, अपने पर नज़र रखो—इस आदेश से डरे हुए लोगों के मनों में परिवर्तन और उत्साह आ गया। डाइन को खोज निकालना होगा, और उसे जान से मारना न होगा।

कुरुडा का पहान बोला, 'कुछ समझ में नहीं आता। पहले तो ऐसी डाइन आती नहीं थी? उस बार सनीचरी की बुआ जब डाइन समझी गयी...।'

वह चुप हो गया। उसकी ओर सुनने वालों की आँखों में शरारत झलकने लगी। उन लोगों ने बुढ़िया को पत्थर मारकर ख़तम कर दिया था और लकड़बग्घे के रात्रि-भोजन कर जाने से पुलिस उनको पकड़ नहीं सकी।

'वह कहता है, इस बार क्या हुआ? सब नया हो गया!'

सनीचरी का बेटा बोला, 'पता नहीं, टाहाड़ के मिश्रजी ने ऐसा डर भर दिया था।'

सब नये ढंग का था। रिलीफ दी, रिलीफ़ गयी। आकाश में देखो, फटे बादल चक्कर लगा रहे हैं। धान की पौध मानो मर गयी है। पेड़ों के पत्तों में रस नहीं है, जैसे कि प्रसूता की जीभ हो। उस दिन बिसरा मजू की बहू ने बच्चा जना। बच्चे के मुँह में एक दाँत था। भेड़िये-लकड़बग्घा-सियार दिनदहाड़े रास्ते में घूमते थे।

लगता था कि फिर जंगल की आग लगेगी। आकाश आग बरसायेगा। सब-कुछ जल जायेगा। उन दिनों क्या देवी-देवता थे? फिर नया संसार सिरजेगा?

यह सारी बातें सवेरे होतीं। रात में पहान की पत्नी ने सुना कि पहान

की आशा की थी। पर सब-कुछ उलटा हो गया। उनके मन मे उस समय पछतावा दिखायी पडा। उन्होने जमीन पर लेटकर किरिया खायी कि एक-दूसरे को भाई-बहिन की नजरो से देखेंगे।

लेकिन प्यार मुश्किल से दूर होने वाली बीमारी होती है। मानी कुछ दिनों तक बहुत ही शान्त रही। बरम बोला, 'फसल होने पर तेरी फिर शादी करा दूंगा। तेरा देवर अब जवान पट्ठा हो गया है। उसकी तबियत भी है।'

इस बात पर मानी की आँखों से आँसू बहने लगे। भाई की ममता समझ मे आयी। भाई की बात से कलेजे मे बहुत चोट लगी। वह परसाद को प्यार करती थी। धीरे से बोली, 'वह देखा जायेगा। फसल तो उठे।'

'फसल ! पानी का क्या हाल है ?'

'पानी पड़ेगा।'

'पानी पड़ेगा ? बादल मँडराते हैं, टिकते नही।'

पानी के न होने से भुट्टा, मडुआ की खेती बरबाद होने की फिकर मे भाई-बहन क्षण-भर के लिए एक-दूसरे के निकट आ गये थे। बाप के मरने पर कामचोर पत्नी और बूढ़ी माँ को लेकर बरम खुशियाँ मनाता रहता था। मानी के आने के बाद भाई-बहन ने गृहस्थी सभाल ली थी। फसल काटने-उठाने, चक्की मे पिसाने, हाट ले जाने मे मानी ही सर्वेसर्वा थी। बरम बोला, 'परसाद की बात भूल जा।'

'भूल जाऊँगी।'

'पडोसी का घर उजाडना ठीक नही।'

'नाही।'

मानी ने सारी बातें मान ली। उसके बाद बोली, 'घर छा डालो। पानी टपकता है।'

'रस्सी है ?'

'है। और दो लच्छियाँ डोरी तुझे भूरा के यहाँ से मिल जायेंगी। पिछली बार ली थी।'

'मैं ले लूंगा।'

घर की बात पर दोनों को एक साथ ध्यान आया कि परसाद बड़ा

रो रहा है और किसी को पुकार रहा है, 'आ, आ, पास आ ! पास आ रे।'

'किसे पुकार रहे हो ?'

'परछाईं को। पेसाब करने गया था, परछाईं साथ में गयी। कोठरी में लौटा तो छाया न थी।'

'छाया नहीं थी ?'

'नहीं रे !'

'क्यों ?'

'मैं समझा कि डाइन बन गया हूँ।'

इससे ही समझ में आता है कि पहान-पुरोहित के साथ देवता का सीधा आदान-प्रदान है। यह अकाट्य सत्य भी पहान को आतंक के ग्रास से नहीं बचा सकता। पहान की पत्नी पति से अधिक मनोबल वाली थी। उसने झटपट दो ढिबरियाँ जलायीं और पति से बोली, 'वह रही छाया। डाइन पहान को पकड़ सकती है ?'

इसके बाद बुधनी उराँव ने कुरुडा के जंगल में लकड़ी जमा करते-करते अचानक देखा कि कुंड के पानी में एक बालदार हाथ की छाया है। तभी उसने समझ लिया कि वह डाइन बन गयी है। समझते ही वह लकड़ी फेंक कर घुटनों के बल बड़े ध्यान से पानी में अपना रूपान्तर देखने लगी। फिर दूसरा बालों भरा हाथ देखकर 'मैं डाइन हूँ' कहकर ऐसी चिल्लायी कि भालू के-से ख़तरनाक जानवर भी घबराकर उसके ऊपर से उछल कर भाग गये। बुधनी को तब होश आया और वह लकड़ी फेंक कर गाँव की ओर भागी।

बुरुडीह के बिसरा दुसाध ने एक दिन अपनी एकमात्र संपत्ति—काली बछिया को ही मार डाला। बछिया तो बछिया। लेकिन बिसरा महुआ पीकर बछिया को जवान लड़की समझ कर उसे पुकारता रहता। काली बछिया की मौत बिसरा दुसाध के-से आदमी के जीवन में भयंकर सर्वनाश ला सकती है, और वही हुआ। बिसरा कई दिन पागलों की तरह लाल आँखें किये धुत बना सूने गोठ में बैठा रहा। उसके बाद, बछिया के बिना अपने भविष्य को उसने सूना समझा। बछिया बड़ी न होगी, बछड़ा नहीं बियायेगी, दूध न देगी, बछिया ख़रीदने का कर्ज चुकती न होगा, जिन्दा रहने के लिए

अच्छा घर छाता है। ढीले पत्तों को सुतली से वह ऐसा बाँध देता था कि छप्पर आसानी से टूटता नही था। ठंडी साँस लेकर मानी अपना दाब लेकर जगल चली गयी।

परसाद ने यह लक्ष्य किया। दो-चार दिन बाद वह जंगल मे मानी से मिला।

मानी और परसाद जानते थे कि इस तरह मिलना-जुलना ठीक नही है। इस प्यार से उन्हे कुछ न मिलेगा। फिर भी हताश होकर एक-दूसरे मे डूब गये।

जगल मे पत्तों का विस्तर। बहुत निराशा मे कुछ भी न छोड़ा जायेगा, यह जानकर भी एक-दूसरे से उनका मिलना होता। आँसू-भरे मानी घर वापस आती। इन दोनों ने लगभग अँधेरे मे देखा कि कुरुडा नदी पर पत्थर पर बैठी प्रायः नंगी, काली भयकर युवती है। उसके शरीर का मध्य भाग फूला है और वह किसी पक्षी का कच्चा मास खा रही है। पक्षी जल के किनारे रहने वाली टिटिहरी है। मास तेल से खूब भरा हुआ है। उन्हें देखकर युवती बहुत गुस्से की नजर से देखने लगी। उसने दाँत निकाले, उसके बाद हिलते-हिलते चीख उठी—'आँ आँ—आँ।' भैंस की तरह। भैंस को जलते लोहे से दागने पर वह इसी तरह चीखती है। महाजन गुलबदन की हजार भैंसें हैं। उनको लोहे से दागकर निशान लगाकर रखना पड़ता है। नही तो चोर चुराकर टाहाड के जानवरों के हाट मे बेच देते।

'डाइन !' परसाद और मानी ने डरकर कहा। उसके बाद छिपकर मिलने की सावधानी को भूल गाँव की ओर भागे। अकाल मे मुरहाई के लोगों ने गाँव नही छोड़ा था। पर कुरुडा और हिसाडी निर्जन हो रहे थे। सभी तोहरी चले गये थे।

यह खबर पाकर गाँव के बुजुर्ग ने नगाड़ा बजाया। नगाड़े की गभीर कर्कश आवाज से विपत्ति का सकेत निकल रहा था। इस नगाड़े की पुकार डाइन को लेकर है, यह भी सब लोग रक्त के सकेत से ही समझते थे। कुरुडा नदी मे बाढ़ नही थी, पानी नही था। कही आग लगी नही है, गाँव के खेतों में जगली हाथी घुसे नही हैं। जरूर यह डाइन होगी।

'डाइन ?'

फिर उधार लेना पड़ेगा—ये सब बातें याद आते ही वह बछिया बांधने वाली रस्सी से रात में गोठ की महतीर से झूल गया। धान को उसने लड़के को एक लट्टू मोल ले दिया था। घर के छप्पर की मरम्मत की थी। पत्नी से कहा था, 'अरे, बछिया डाइन नहीं थी। बेकार में बेजबान को मार दिया।'

पत्नी ने समझा कि उस समय की परेशानी दूर कर पति फिर ठीक हो गया है।

बिसरा दुसाध उस जगह का सबसे होशियार टोटकों की दवाइयों को जानने वाला गुणी था। गाँव के लोगों के सुख-दुख में वही एकमात्र सहारा था। और वह पानी का पता जानने वाला था। धरती के नीचे कहाँ जल है, उसे मालूम था। इस तरह के आदमी की मौत ने ग्राम-समाज की धारणा पर सीधे चोट की। वह सदा अँधेरे में रहने वाले गाँवों के लिए काम का था। इस काम की जरूरत उसके जीवन में ऋणमुक्ति या स्वच्छन्दता तो नहीं ला सकी, हाँ, इसने उसे सम्मान दिया था। गरीबों या वंचितों के लिए दुसाध-से लोग, आसमान की हवा की तरह ही अमोघ और सर्वव्यापी [illegible] हैं। स्वच्छन्दता नहीं होने से बिसरा के मन में अलग से कोई क्षोभ न था। स्वतन्त्रता उसे नहीं थी तो औरों को भी नहीं थी। गरीबों के कम्युनिस्ट व दुसाध-गंजू-ओरांव-मुंडा—एक 'कामरेड' वर्ग में हैं।

'बिसरा के मरने की जड़ में भी डाइन का डर!' महान ने लोगों से कहा, 'आज बिसरा गया, कल अगर मुराई लोहार मर जाये? हम लोग [illegible] काम नहीं करायेंगे? परसों भरत के मरने से हम लकड़ी का काम कराना छोड़ देंगे? डाइन को खोज निकालो। मैं हत्या दूंगा, उपवास करूंगा, जिससे कोई डर नहीं रहेगा, मुसीबत न होगी।'

डाइन के आतंक की बात ग्राम-सेवी संघ को भी मालूम हुई और उन्होंने आदिवासी-कल्याण मंडल के कार्यकर्ताओं को बताया। कार्यकर्ताओं ने सरकारी आदमियों के हिसाब से यह समाचार पुलिस को दिया। [illegible] डाइन को तलाश करने के नाम पर बुड्ढे-बुढ़ियों की हत्या होने पर वह दंडनीय अपराध होता। वहीं पर उनका कर्तव्य समाप्त हो गया। [illegible] कार्यकर्ता सत्ता को भूलकर इन्सान के रूप में उस डर के [illegible] और हनुमान मिश्र को इक्यावन रुपये दे एक तावीज़ पहन आये।

'डाइन।'

'कहाँ ?'

'कुरडा की छाती पर।'

'क्या कर रही है ?'

'चिड़िया का कच्चा मास खा रही है।'

'तब ?'

'भगाना होगा।'

'कैसे भगायेंगे ?'

'क्या करेंगे ?'

'मारेंगे।'

'ना—आ।'

पहान बहुत जोरों से चीख़कर बोला, हनुमान मिश्र का रोकना वह नहीं मान सकता, क्योंकि वह हिन्दू नहीं है। फिर वह जानता है कि माने बिना कोई चारा नहीं। हनुमान मिश्र का प्रभाव और सम्मान इतना अधिक है, उनके पास इतने रुपये हैं कि पुलिस और सरकारी कर्मचारी, महाजन और ज़मींदार सभी उनके कदमों पर हैं, कि उनके रोकने पर डाइन को जलाकर मारने का आदिम अधिकार भूल जाना पड़ता है।

पहान ने डर से काँपते-काँपते सूखे हाथों से नगाड़े पर चोट की। गाँव वालों से कहा, 'अब सब दूसरी तरह हो गया है। ऐसा सूखा, ऐसा आसमान कभी नहीं देखा। डाइन भी दूसरी तरह की है।'

'दूसरी तरह की ?'

'हाँ।'

पहान ने सतर्क और सदिग्ध पशु की तरह सूखी गरदन फेरी। 'डाइन आँखों से ख़ून पीती है, नन्हे बच्चों की जान ले लेती है।'

'जान ले लेती है !'

'इस डाइन के साँस लेने में मौत है। साँस से बादल उड़ते हैं, ये पेड़ों को फलहीन बना देते हैं, मड़ुआ के खेत को बाँझ कर देते हैं। यह दूसरी जात की डाइन है।'

धरम और परसाद ने अपना झगड़ा भूलकर एक-दूसरे की ओर देखा।

फिर उधार लेना पड़ेगा—ये सब बातें याद आते ही वह बछिया बाँधने वाली रस्सी से रात में गोठ की शहतीर से झूल गया। शाम को उसने लड़के को एक लट्टू मोल ले दिया था। घर के छप्पर की मरम्मत की थी। पत्नी से कहा था, 'अरे, बछिया डाइन नहीं थी। बेकार में बेजबान को मार बैठा।'

पत्नी ने समझा कि उस समय की परेशानी दूर कर पति फिर ठीक हो गया है।

बिसरा दुसाध उस जगह का सबसे होशियार टोटकों की दवाइयों को जानने वाला गुणी था। गाँव के लोगों के सुख-दुख में वही एकमात्र सहारा था। और वह पानी का पता जानने वाला था। धरती के नीचे कहाँ जल है, उसे मालूम था। इस तरह के आदमी की मौत ने ग्राम-समाज की संरचना पर सीधे चोट की। वह सदा अँधेरे में रहने वाले गाँवों के लिए काम का था। इस काम की ज़रूरत उसके जीवन में ऋणमुक्ति या स्वच्छन्दता तो नहीं ला सकी, हाँ, इसने उसे सम्मान दिया था। ग़रीबी या तंगी को बिसरा दुसाध-से लोग, आसमान की हवा की तरह ही अमोघ और सर्वव्यापी समझते हैं। स्वच्छन्दता नहीं होने से बिसरा के मन में अलग से कोई क्षोभ न था। स्वतन्त्रता उसे नहीं थी तो औरों को भी नहीं थी। ग़रीबी के कम्यूनिज़्म में दुसाध-गंजू-ओराँव-मुंडा—एक 'कामरेड' वर्ग में हैं।

'बिसरा के मरने की जड़ में भी डाइन का डर!' पहान ने ज़ोरों से कहा, 'आज बिसरा गया, कल अगर मुराई लोहार मर जाये? हम लोहे का काम नहीं करायेंगे? परसों भरत के मरने से हम लकड़ी का काम कराना छोड़ देंगे? डाइन को खोज निकालो। मैं हत्या दूँगा, उपवास करूँगा, तुमको कोई डर नहीं रहेगा, मुसीबत न होगी।'

डाइन के आतंक की बात ग्राम-सेवी संघ को भी मालूम हुई और उन्होंने आदिवासी-कल्याण मंडल के कार्यकर्ताओं को बतायी। कार्यकर्ताओं ने सरकारी आदमियों के हिसाब से यह समाचार पुलिस को दिया, क्योंकि डाइन को तलाश करने के नाम पर बुड्ढे-बुढ़ियों की हत्या होने पर वह दंडनीय अपराध होता। वहीं पर उनका कर्तव्य समाप्त हो गया। सरकारी कार्यकर्ता सत्ता को भूलकर इंसान के रूप में उस डर से थरथर काँपते और हनुमान मिश्र को इक्यावन रुपये दे एक तावीज़ पहन आते।

सब लोग हमको मार सकते हैं, हम डाइन को क्यों नही मार सकते ?

'परसाद, मेरी बात मानेगा, या मैं तेरी बात मानूं ?'

'पता नही ! मैं परसाद हूँ, तुम पहान हो। जो कहोगे, हम वही सुनेंगे किंतु...।'

'क्या ?'

परसाद ने गला साफ़ करते हुए कहा, 'टाहाड़ के ठाकुर तो हमारे पाप की बात कह गये, हमने सुन ली। न कैसे सुनते ! पाप किया, पापी कहा।'

'लेकिन क्यों कहा ?'

'लेकिन पाप क्या अकेले मेरा है ?'

'तो मेरा पाप है ?'

सनीचरी अभी तक सिर की जूँएँ बीन रही थी। वह बोली, 'तुम गलत समझ रहे हो, पहान ! तीज-त्यौहार पर तुम हो ! देउता के साथ तुम्हारी बात होती है। पूजा में कोई भूल हो तो वह तुम्हारी होगी। चूक हुए बिना पाप नहीं होते। अब अपने आप अपने पाप की बात सोचोगे, या डाइन भगाओगे ?'

पहान समझता है कि इस समय उसे आगे आना होगा। नहीं तो उसकी सर्वशक्तिसपन्नता के बारे में लोगों के मन में सदेह पैदा हो जायेगा।

उसने कहा, 'लड़के आयें। औरतें घर जायें। लड़के-लड़कियों को लेकर घर में कुंडी लगा लो। परसाद ! तुम दल में आगे जाओ।'

'क्यों ?'—मानो लाज-शरम भूल गयी।

'उसने देखा है। राह दिखायेगा।'

शाम को रोशनी धीमी हो रही थी। पहान ने आग जला, हाथ जोड़कर फिर मंत्र पढ़े। उसी आग से युवक, प्रौढ़, वृद्ध लोगों ने मशालें जलायीं। टेंट में पत्थर रखे। उसके बाद पहान दोनों हाथ चिपटाकर चक्कर लगा दौड़ते हुए आग लेकर घूम आया। सिर पर और छाती में मिट्टी मल ली, आकाश की ओर हाथ उठाकर चीख़ उठा, 'हा बाबा हरमदेउ, तुम्हारी कृपा से मैं डाइन को भगाता हूँ।'

यह कहकर उसने कान पकड़कर सिर झुकाया। किसी अँधेरे मन की दुनिया में निकाले उसके आदिम और असमर्थ देवता ने उसकी पुकार सुनी

लिए प्रिय था। वह जगह अभागी थी और उस अचल में कांस के जगल मे हवा चलने से ऐसा लगता कि कोई 'हाय-हाय-हाय' कर रो रहा हो।

ऐसे मुरहाई मे डाइन पहले-पहल पकडी गयी। इसका कारण था कि उक्त रामरिख धोबी के लड़के और बरम गजू की विधवा बहन मे जात-पांत से असमर्थित अवैध प्रेम था।

अभागी जगह में अभागा प्यार। जात-पांत की कठोरता मे यहां अवैध प्रेम कभी भी पूर्णता नही पाता था। फिर भी बीच-बीच में प्रेम कूद पड़ता और जिन पर आक्रमण और अधिकार करता उन्हें बुरी तरह मारता।

रामरिख का लडका परसाद और बरम की बहन मानी ने बचपन से एक-दूसरे को देखा था। परसाद की वहू मानी की सहेली थी। मानी का पति भी परसाद की जान-पहचान का था। गाँव के सम्बन्ध से मानी परसाद के लड़के की बुआ थी। अचानक करम-पूजा मे नाचने जाकर दोनो एक-दूसरे के प्रेम में पड़ गये।

कई दिन दोनो एक-दूसरे को आँखो-ही-आँखो खोजते रहे। कुछ ही दिनो मे दोनों एक-दूसरे से मिलने के लिए हाट से लौटने की राह मे जगल से ईधन ले घर लौटने का बहाना तलाश करते रहे। अन्त मे दोनों पकडे गये।

परसाद की वहू ने आकर मानी को गालियां दी और घर लौट कर रोने बैठ गयी।

बरम अपनी बहन को काट डालने के शुभ सकल्प की घोषणा कर पर-मिट पर किरासिन लेने गया।

रामरिख की माँ बुद्धिमती थी और बहुत कुछ देखे हुए थी। बरम के घर आकर आँगन मे बैठ अपनी घृणा का स्पर्श बचाकर कुछ देर हुक्का पिया। उसके बाद बोली, 'जो होना था सो हो गया। ज्यादा शोर करने से फायदा नही। मेरी बहू सुखी-साखी है। जवान लड़के का मन नही होता! मानी है बांझ विधवा। शरीर का खून शरीर में दौड़ने से तेज हो जाता है। तुम अपना घर सभालो।'

गांव-समाज के कुछ लोगों ने रामरिख और बरम को बुलवा भेजा, कई बरस तक हमारे निरदोस रहने पर भी बाहर से पुलिस आकर हमारी जिन्दगी जला गयी। वही सूखा, वही अकाल। वही अब डाइन का डर।

और जवाब दिया। पहान का मान एक उल्लू ने रखा। पहान के विकट चीत्कार से डरकर उल्लू नीम के पेड के कोटर से क्याँ कर चिल्लाता हुआ बेवक्त उड गया। तीसरे पहर और संध्या के ब्याह के वक्त उल्लू उड़ने का वक्त नहीं होता है।

पहान इससे बहुत खुश हुआ और सिर उठाकर बोला, 'देउता ने सुन लिया।'

अब वे कतार बाँधकर चिल्लाते हुए प्राचीन युद्धनीति मे भागते रहे। गाँव के बाद जंगलों में पगडंडी पकड़कर नदी पर। भागते-भागते पहान बोला, 'सावधान! मशाल सावधान! बन जल जाने से सब पर जरीमाना, जेल। वन न जलना चाहिए।'

परसाद की जंगल जलाने की तबीयत हुई। जंगल-विभाग और पुलिस से झगडा करने की साध हुई, अपने को निडर समझा। डाइन भगाने के काम ने उसमें दु.साहस भर दिया था। अचानक मन में आया कि इस तरह भागने का मौका हमेशा नहीं मिलेगा, अभी मिल रहा है। जब मिल रहा है, तो इस भागने की गतिमयता रक्त में रहते ही वह मानी को लेकर भागे। दु.साहसी बने बिना जात-पाँत की रोक तोड़ना असंभव है। हमेशा रक्त मे दु.साहस नहीं रहता। इस समय रक्त दु:साहसी है। वह कह रहा है, वह देखो।

सब लोग मशालें उठाकर खडे रहे। मशाल की लाल शिखाएँ कुरुडा के काले पानी में काँप रही थीं। हर पत्थर से टकराकर काला जल फेनिल होकर बह रहा था। गाँव वालों की डरी हुई आँखों मे पानी का गोल चक्कर लग रहा था कि साँप की कुंडली खुल रही हो।

एक बड़ा-सा पत्थर था। उस पर एक भीषण काली युवती नंगी खड़ी थी। उसका शरीर विकृत था, पूरा दिखायी नहीं देता था। मुंह के चारों ओर पंख और खून लगा था। उन लोगों को देखकर युवती ने हाथ उठाया। हाथ में पक्षी का टूटा पंख था।

'डाइन!'—सब एक साथ बोल पड़े।

डाइन की आँखों में प्रत्याशा जल उठी। वह हिलने लगी और बिना आवाज़ किये हँसने लगी।

को गैर-आदिवासी, गजू, दुसाध और धोबी भी मानते थे।

मुरहाई गाँव दुरारोग्य, अनाहार-भूख-अकाल, सूखा-बेगार-महाजनों की शरारत इत्यादि भोगता था। जब रोग की ज्वाला कुछ कम होती तभी जात-पांत की समस्या लेकर आपस मे लठैती करते, आपसी झगड़ा मिटाते और इस तरह से ही जीवन को घटनाओं से भरा रखते थे।

हर जगह की अपनी विशिष्टता थी। हेसाडी के लडके-लड़कियाँ खचड़ा थे। कुरुडा के ओरांव कामचोर थे। बुरुडा के आदमी गुस्सैवर थे। मुरहाई में बूढ़े-बुढ़ियों मे हर दस-पन्द्रह बरस मे कोई-न-कोई डाइन बन जाता।

उस समय वे दूसरो की गाय-भैंस को बाण मारते, दूसरों की पत्नी को रात मे बाहर बुलाते और कुत्ते का पिल्ला बन कर काट लेते, नहीं तो चूहा बनकर सब लोगों के मक्का के बोरों को दाँतो से कुतर डालते।

उस बार शिवरात्रि के बाद बच्चे धड़ाधड दूध की उल्टी कर हाथ-पैर ऐंठकर मरने लगे। सरकारी डॉक्टर ने कहा, 'मिश्र जी के शिवमन्दिर में देवता के सिर पर दूध चढाया गया। दूध गन्दे बहबच्चे मे फट गया। एक दिन का वही बासी दूध बच्चो को पिलाया गया तो वे मरते नहीं ?'

किसी ने उनकी बात का विरोध नही किया। रामरिख की बीवी ने अपनी तीन वर्ष की लडकी को जमीन मे गाड कर कई जात-बिरादरी वालों को बुलाया। अँधेरे में उन्होंने सलाह की। उसके बाद मोहरी धोबिन के घर चले गये। मोहरी बुढ़िया लटकी खाल की मरभुक्खी थी। वह बहँगी मे जो दूध लायी थी उसी को रामरिख की लडकी ने पिया था।

मोहरी के घर के छप्पर में आग लगा कर उन्होने मोहरी को बाहर निकाला। अधजली हालत मे उसे डाँटते हुए ले गये। डर और जलने की पीडा मे मोहरी पत्थर पर मुँह के बल गिर पड़ी और मर गयी।

यह हुआ मारने के उद्देश्य से मोहरी पर हमला करना। रामरिख और उसका चचेरा भाई आज भी जेल काट रहे हैं।

इसके लगभग दस बरस पहले रोतो मुडा की विधवा बहू डाइन बन गयी थी। खुशी की बात है कि नाक काट कर खून बहाने के बाद ही वह इंसान बन गयी। उसे जान से नही मारना पड़ा।

इन सब बातों के कहने का मतलब हुआ कि मुरहाई स्थाग डाइनों के

'हँस रही है।'

पहान सूखा शरीर और रुग्ण हाथ लिये बढ़ा। डर ने उसे क्रूर बना दिया। उसके साथी भी डर के मारे हिंस्र हो उठे।

पहान बोला, 'हरमदेव के नाम पर, सारे बोंगाओं के नाम पर तुमको भगा दूंगा।'

डाइन भी अब आक्रामक हो उठी। वह भी दोनों हाथ उठा सिर को झटककर बालों को पीछे कर वन-नदी-आकाश फाड़ती हुई चीख उठी, 'अँ—आँ—अँ।' पत्थरों पर पैर रखती हुई वह आगे बढ़ी, उसकी आँखें जल रही थीं।

'मारो पत्थर।'

पत्थरों की बौछार होने लगी। डाइन ने भी पत्थर उठाये। उसके शरीर पर पत्थर पड़ रहे थे। तुम लोग खून न बहाना। खून से सैकड़ों डाइन पैदा हो जायेंगी। डाइन का खुला मुँह ज़रा-सी देर में बहुत बड़ा हो जाता है।

'पत्थर मारें?'

'मार पत्थर।'

डाइन जोर से पत्थर फेंकती। पहान के सिर पर लगा। पहान के माथ से खून बहने लगा।

'मार, मार। नहीं तो वह मारेगी।'

पत्थर बरसते रहे। परसाद अपनी मशाल शून्य में फेंककर उछल पड़ा। आकाश में एक के बाद एक मशाल थी। भयंकर चीत्कार हुआ। अँधेरे में पत्थरों की बौछार।

'अ-अ-अ' की चीखों से आकाश फटा जा रहा था। डाइन पानी में उतरती है, और बिजली की तेजी से नदी के उस पार पहुँचती है।

इधर से लोग उसे भगाते हैं, पत्थर फेंकते हैं, चिल्लाते हैं।

डाइन किधर जा रही है, यह समझाने के लिए 'अ-अ-अ' शब्द सहायक होता है। भागते-भागते पहान ने कहा, 'डाइन हेमाडी की ओर गयी। गाँव जागे। हम बच गये।'

वह बार-बार माथे का खून पोंछता है और विजय के उन्माद से कहता

लिए प्रिय था। वह जगह अभागी थी और उस अचल में कांस के जगल मे हवा चलने से ऐसा लगता कि कोई 'हाय-हाय-हाय' कर रो रहा हो।

ऐसे मुरहाई में डाइन पहले-पहल पकड़ी गयी। इसका कारण था कि उक्त रामरिख धोबी के लड़के और बरम गजू की विधवा बहन में जात-पाँत से असमर्थित अवैध प्रेम था।

अभागी जगह मे अभागा प्यार। जात-पाँत की कठोरता मे यहाँ अवैध प्रेम कभी भी पूर्णता नही पाता था। फिर भी बीच-बीच मे प्रेम कूद पडता और जिन पर आक्रमण और अधिकार करता उन्हें बुरी तरह मारता।

रामरिख का लडका परसाद और बरम की बहन मानी ने बचपन से एक-दूसरे को देखा था। परसाद की बहू मानी की सहेली थी। मानी का पति भी परसाद की जान-पहचान का था। गाँव के सम्बन्ध से मानी परसाद के लडके की बुआ थी। अचानक करम-पूजा मे नाचने जाकर दोनो एक-दूसरे के प्रेम मे पड़ गये।

कई दिन दोनो एक-दूसरे को आँखो-ही-आँखो खोजते रहे। कुछ ही दिनो मे दोनो एक-दूसरे से मिलने के लिए हाट से लौटने की राह मे जगल से ईंधन ले घर लौटने का बहाना तलाश करते रहे। अन्त मे दोनो पकड़े गये।

परसाद की बहू ने आकर मानी को गालियाँ दी और घर लौट कर रोने बैठ गयी।

बरम अपनी बहन को काट डालने के शुभ सकल्प की घोषणा कर पर-मिट पर किरासिन लेने गया।

रामरिख की माँ बुद्धिमती थी और बहुत कुछ देखे हुए थी। बरम के घर आकर आँगन में बैठ अपनी घृणा का स्पर्श बचाकर कुछ देर हुक्का पिया। उसके बाद बोली, 'जो होना था सो हो गया। ज्यादा शोर करने से फायदा नही। मेरी बहू सूखी-साखी है। जवान लडके का मन नही होता! मानी है बाँझ विधवा। शरीर का खून शरीर मे दौड़ने से तेज़ हो जाता है। तुम अपना घर संभालो।'

गाँव-समाज के कुछ लोगो ने रामरिख और बरम को बुलवा भेजा, कई बरस तक हमारे निरदोस रहने पर भी बाहर से पुलिस आकर हमारी जिन्दगी जला गयी। वही सूखा, वही अकाल। वही अब डाइन का डर।

है, 'आज सभी थान पर जायेंगे। आज सोना नही है। नाचेंगे। आज महुआ पियेंगे।'

'कल क्या होगा, हे !'

'क्यों ? पूजा होगी।'

पहान फिर हरमदेउ को पुकारता है और भागता है। डाइन की चीखें क्रमशः पूर्व दिशा के अंधकार मे विलीन हो गयी।

जिलाद के मैदान में गयी।

जाये ! जिलाद के मैदान में अब डाइन-पिशाचों की हवा घूमे। वही तो जायेगी।

सब लोग गाँव के किनारे पहुँचकर नदी के किनारे ठिठककर खड़े हो गये और उचक-उचककर डाइन की क्षीण आवाज सुनने लगे। आवाज अंधकार में मिल गयी। वे लोग फिर भी खड़े रहे। उसके बाद चारों ओर का सन्नाटा मानो पानी की तरह बिना आवाज किये बढ़ता आ रहा था। वे डूबते जा रहे थे, डूब गये।

पानी मे डूबे आदमी की तरह वे फिर विवश होने लगे। डाइन भगाने के उन्माद ने इन निरन्न, आतुर, सरकार और प्रशासन से उपेक्षित मनुष्यों को कुछ देर के लिए भेड़िये की तरह हिंस्र बना दिया था।

हिंस्रता समाप्त होने पर वे फिर दीन हो गये। सहसा उन्हें डर लगने लगा।

वे एक-दूसरे की ओर देखने लगे।

पहान इस अँधेरे मे ही मन का राडार चलाकर उनके मन के बदलाव को समझता था। इनका दिल बहुत फुसफुसा, बहुत पोला है। उसे दानेदार कर ग्रेनाइट-सा कठोर बना डाइन की ओर उकसा देना होगा। किन्तु डाइन के चले जाने पर फिर नरम और फुसफुसा हो जाता है।

पहान के हृदय में अब स्नेह दिखायी पड़ा। वह इन आतुर रंक लोगों के प्रति बड़ा वात्सल्य अनुभव कर रहा था। उसे यह ध्यान नही रहा कि वह भी भूखा और रंक है। उसे लगता है कि वह राजा है।

बड़ी ममता के साथ वह बोला, 'तुम डर क्यों रहे हो ? एँ ? अंधेरे मे चेहरे नही दिखायी देते, आवाजों से डर की साँसों को समझ रहा हूँ।'

इस समय जो वे निकम्मे जमा हुए हैं, उसके पीछे भी डाइन की माया है या नहीं, कौन कह सकता है ? इसे लेकर अभी झगडा-बखेडा नही। अपना-अपना घर सभालो। ज्यादा गड़बड़ करने से जूते मार कर सीधा कर दिया जायेगा।

यह कुछ बातें सोचने मे बडी करुणापूर्ण और हृदय-विदारक थी। इनका अर्थ भी था। कुछ बरस पहले होती तो महाजनी अत्याचार, अनशन, अकाल, सूखा इनका मनोबल तोड न देते। ये चीजें उनके जीवन का अभिन्न अंग थी।

एक जमाने मे कुरडा नदी न थी। कोयेल की धारा का रास्ता बदलने से दो सौ बरस पहले यह हो गया। इस बात को यह लोग नही समझते। नदी सदा से है, क्योंकि बाप-दादे के जमाने से वे नदी देखते आये है।

जीवन मे कब महाजन-जमीदार नही थे, यह भी उनकी समझ मे बाहर की बात है। यह लोग बाप-दादे के जमाने से महाजन-जमीदार का शोषण देखते आ रहे हैं। इसलिए यह अभिशाप चिरकालीन है।

लेकिन पुलिस का अत्याचार सदा से नही रहा है। नक्सल गडबड, जे० पी० आन्दोलन, आपातकालीन स्थिति और पुलिस उनकी ज़िन्दगी को तहस-नहस कर रही है। यह उनकी समझ मे नही आता। लेकिन जीवन समाप्त हो गया है।

महाजनी जुलुम, अकाल, सूखा के बाद भी जात-पाँत के हिसाब से, ग्रामसमाज की नजरो मे दडनीय अपराध की ओर इनका ध्यान था। पुलिस के जुल्म ने इनके जीवन का प्राणरस सोख लिया है।

अब फिर परसाद और मानी को दड देने का काम मन में नही रहा। गाँव की अर्थनीति मे हर काम के योग्य युवक-युवती आवश्यक है। इन्हे भगा देना भी सभव नहीं है।

गाँव के बुजुर्ग हुमरू ने खँखारकर गला साफ़ करते हुए कहा, 'परसाद, मानी! हम तो जीते-जी मरे है। तुम नये सिरे से मत मारो! तुम लोगों को भगा दें? कहाँ जाओगे? क्या करोगे? परसाद के बहू-बच्चा कहाँ जायेंगे?'

परसाद और मानी ने —जूते खायेंगे, गाली खायेंगे, मार खायेंगे इत्यादि

'क्या डाइन चली गयी ?'

'गयी, गयी। हमारे मांदे के खून से सनसन नहीं आ रहा है ? लगता है कि शरीर में भी दर्द नहीं है।'

'डाइन गयी ?'

'हाँ। गयी नहीं ? हवा से सनसन में नहीं आ रहा है ?'

वे लोग गाँव की ओर लौटे। चलते-चलते सबके ही मन में आया कि शरीर में व्यथा का चिह्न नहीं है। हवा अच्छी लग रही है। सनीचरी का नाती बोला, 'अब कुरडा में मछली मिलेगी ! ओः, मछलियाँ छिपा रखी थीं !'

'पानी बरसेगा, जुताई होगी।' गहरे विश्वास के साथ पहान बोला, 'वे बादल रोक देती हैं, खेत की फसल छिपा देती हैं, बन में शिकार का फंदा लगाने पर साही छिप जाती है।'

'पूजा होगी ?'

'कल।'

'आज ?'

'नाच-गान-महुआ। बरम छाती फाड़कर गायेगा, घर से ढोलक ले आ।'

'पेट में कपड़ा बाँधकर गुलबदन बनूंगा।'

'धुर ! क्या होली है जो स्वाँग करेगा ?'

'महुआ ?'

'भीमचन्द देगा। मुझसे वादा है, मानती है, बच्चू ने दिया नहीं। जरूर देगा'।

धरम बोला, 'भीमचाँद की भट्टी हेसाडी की राह पर नहीं है। रात में जाने की जरूरत क्या ? महुआ मैं दूंगा।'

पहान के थान पर आग जली। आज रात सोना निरापद नहीं है, यह जताते हुए पहान का यह आयोजन है। डाइन को मारना होगा, यह पहान जानता था। डाइन को भगाने की बात का पहली बार पता चला। अज्ञान के [illegible] कोई [illegible] नहीं होगा। डाइन लौटकर आ सकती है। इसी से [illegible]

वरम ने कल ही नीमचाँद की भट्टी से नीमचन्द की मदद से दस बोतल एक नम्बरी महुआ चुराया था। तीस रुपयों का माल था। हाट में बेचने पर नगद रुपये मिलते। आधे उसके, आधे नौकर के होते। फूस के नीचे छिपाकर बोतलें लाने में उसे बड़ी होशियारी करनी पड़ी थी। आज इस सकट के कारण उस माल को निकालना पड़ा।

माल निकाला, अपनी जाति के लोगों की ख़ातिर करने के लिए भी निकाला। वह जब दस बोतल महुआ दे रहा है, तो जाति वाले भी जिसके यहाँ जो ताडी है वह दें। औरों की ख़ातिर के लिए जातिवाले ताडी लायें। वे अगर ताड़ी ला सकते हैं तो सभी ला सकते हैं। किसके घर में ताड़ी नहीं है, या नहीं रहती है?

सनीचरी दूसरी औरतों के साथ भुने चावल, भुनी मकई, प्याज और मिर्चा ले आयी। पहान से बोली, 'घर में बड़ा डर लग रहा है। हमने प्याज, मिर्चा दिया है। हम महुआ न पियेंगे?'

पहान का चेहरा हँसी से खिल उठा। वह बोला, 'तू बड़ी चालाक है रे! मुझसे कबूल करा लिया। पी। तुझे मैं ताड़ी दूँगा।'

महुआ और ताडी। मकई भाजा की चाट। नगाड़े पर चोट। बरम ने अब गाना शुरू किया और सबने टेक पकड़ी। बहुत दिनों बाद गाँव में मानो उत्सव का वातावरण हो। महुआ के नशे में सबके कलेजे से पत्थर उतर गया। हनुमान मिश्र की घोषणा के बाद से सब लोग जैसे डाइन के आतंक की चक्की में बन्द हो गये थे।

जब सब लोग ज़रा नशे और गाने में मतवाले हो रहे थे, सनीचरी की टेढ़ी कमर का नाच देख-हँसने में लगे थे तो परसाद और मानी ने आँख-ही-आँख में एक-दूसरे को देखा।

इस रात में और इस परिवेश में मानो कुछ था। परसाद ने सर हिला-कर इशारा किया। दोनों थोड़ा-थोड़ा खिसकते-खिसकते पहान के घर के पिछवाड़े गये।

परसाद ने मानी का हाथ पकड़ा। इस रात में, इस परिवेश में मानो कुछ हो। मानी ने अपने को परसाद के हाथों में छोड़ दिया।

अब दोनों भाग चले। हेसाडी की ओर नहीं, तोहरी की ओर। बहुत

'देखूं। पर माँ-बेटा—दोनो अच्छे रहने पर भूल न जाना।'

'दूंगी। अँगूठी दूंगी।'

अँगूठी नहीं लूंगी। एक बर्कन बछिया चाहिए।

'दूंगी।'

बर्कन माने गाय। गाय माने गाभिन गाय। दूध बेचो, बछिया बड़ी हो तो बेचो, कर्ड लो। एक गाय रहने पर नाती का जीवन चल जायेगा। सोचते-सोचते सनीचरी ने घर जाकर खन्ती उठायी। जरा झुटपुटा होने पर शाम को जिलाद के मैदान से गोली-गाछ की जड़ लेगी।

नाती बोला, 'किरा लार्गेगा (भूख लगी है)।'

सनीचरी ने उसको एक टोकरी मुट्ठे की खीलें दी। भगत की बहू ने दी थी।

जिलाद के मैदान जाते-जाते सनीचरी के मन मे चाँद-सूर्य की तरह दो चिरकालीन दो संक्षिप्त वाक्य उठे—'किरा लार्गेगा' और 'मालू फुलार आरगुड़ा' (पेट नही भरा)।

ताका-बेडे-चान्दो-बिल्को—हवा, आकाश, चाँद, तारे चिरकाल के है।

'भूख लगी है' और 'पेट नही भरा'—दो बातें चिरकाल की हैं। निश्चय ही आदि अतीत में भी किसी ओरांव का पेट किसी दिन भरा नही। निश्चय ही इन दो बातों की सृष्टि इसी कारण हुई थी।

सनीचरी को लगा कि हेसाडी गाँव की बूढी के लिहाज से वह एक बड़े काम की तरह काम करने जा रही है। भगत की पत्नी को खुश कर बर्कन बछिया लेकर नाती का भविष्य बनाये दे रही है।

सीधी बात। गोठ में एक गाय। दूध बेचो, उपले बेचो, भगत की बहू के हाथो बछिया बेचो। हेसाडी से गाँव में एक ओरांव जीवन-भर जिन्दा रह-कर अन्त में अपनी कमाई मे से देखने लायक समाधि के पत्थर के सिवा कुछ नही छोड़ जाता है। और पत्थर तो जड़ और मुर्दा चीज है। सनीचरी एक गाय छोड जायेगी। गाय माने जिन्दगी बिताने का एक सहारा।

जो बर्कन मिली न हो, उसकी खुशी का सपना देखती हुई मगन सनी-चरी मैदान में जा पहुँची। यहां बडे-बडे पत्थर पडे थे। देखकर लगता, बीच में ऊँचे-ऊँचे खम्भे से दो पत्थर आदि-जनक-जननी हों। दूसरे पत्थर

अधिक बँधे हुए उनके जीवन में तोहरी बाहरी संसार का द्वार था। तोहरी से लकड़ी ढोने वाले ट्रक पर राँची, हजारीबाग, धनबाद जाना होता है।

पहान की पत्नी ने उनको जाते देख लिया। वह कुछ न बोली। परमाद की पत्नी बाँझ कहकर उससे घृणा करती थी। उसके हाथों से प्रसाद के लड्डू नहीं लेती थी। पहानी ने उसका बदला अब लिया।

दूसरे दिन गाँव के लोगों से उसने अवश्य बताया। जिन्होंने डाइन को पहले देखा था उनकी क्या सामर्थ्य थी कि अन्याय और दुष्कर्म की पुकार पर उपेक्षा करते ? इस प्रकार परमाद और मानी के भागने की घटना ने भी डाइन के किस्से के साथ गुँथकर विशाल परिप्रेक्ष्य पा लिया।

एक अमरीकी पत्रिका में कुरुडा बेल्ट में डाइन का हाल रंगीन तसवीरों के साथ एक चित्ताकर्षक रम्य रचना के रूप में बहुतों ने पढ़ा होगा। सबका पढ़ना तो संभव नहीं है, क्योंकि पत्रिका का मूल्य आजकल बारह रुपये है और पत्रिका ख़रीद कर पढ़ना आजकल शिक्षा का अंग कहा जाता है। जो लोग अपने देश के कल्याण के लिए अँग्रेज़ी उठाये दे रहे हैं, वे भी छिप-छिपकर तूफान की तेज़ी से एक मीटिंग से दूसरी मीटिंग का टूर करते-करते पत्रिका आदि पढ़ते हैं और सफ़ाई के तौर पर कहते हैं कि प्रतिपक्ष क्या सोच रहा है, इसको तो जानना ही होगा ! लेकिन बात यह है कि जो लोग पत्रिका चलाते हैं, उनको नहीं मालूम, मीटिंग में व्यस्त यह सारे बाबू लोग उनको 'प्रतिपक्ष' सोचते है। इस दुनिया में इस प्रकार मतलब की सारी चीज़ें अज्ञात रह जाती हैं और कवि का वह गीत सत्यता को प्राप्त होता है, 'जय, अजाना की जय।'

यह सारे बाबू लोग बहुत ही प्राचीन-प्रेमी है। वे अँग्रेज़ी हटा देते है और समझते है कि अँग्रेज़ी जल्दी ही एक संग्रहालय में प्रदर्शन के लिए रख दी जायेगी।

जिस कारण अँग्रेज़ी गायब हो जायेगी, या भारतवर्ष में मर जायेगी, उस कारण से वे अपने बाल-बच्चों को अँग्रेज़ी माध्यम के स्कूल में पढ़ाते है। बाबू लोगों की मानसिक प्रक्रिया बहुत ही जटिल और सरल होती है। एक ही मानसिकता के कारण वे ढोकरा कामा या पुरुलिया के मुखौटों के कला-

उनके बाल-बच्चे हों। उन पत्थरों के बीच में से होकर कुरुडा नदी की शाखा जिलाद निःशब्द वह रही थी। पानी में भीगने से पत्थरों के नीचे की मिट्टी गीली हो रही थी। वहाँ सफ़ेद फूलों से गोली के पौधे प्रकाश फैला रहे थे।

सनीचरी की आँखें अँधेरे में खो गयी। आकाश में प्रकाश की आभा थी। चारों ओर धरती अँधेरी थी। पत्थर की जड़ में अँधेरा और भी घना था। सनीचरी बड़ी उम्र की थी। दिन में भी आँखों में धुंधलापन रहता था। उसने देखा कि एक जगह अंधेरा मानो बिछा पड़ा है, किसी ने वहाँ रख दिया है, उसने वहाँ खन्ती चलायी। उसके साथ-ही-साथ जैसे मोनो-लिथ—बड़ा पत्थर—छिटक पड़ा, समाधि का पत्थर गरज उठा हो, आदिम अंधकार ने उन्मुक्त रमणी-रूप धारण कर लिया हो। दोनों हाथ उठाये धुंधले आसमान की ओर बाल फैलाये अन्धकार चीख़ उठा, 'आँ—आँ—आँ।'

सनीचरी डर के मारे जड़, पत्थर-सी हो गयी। डाइन ने पत्थर उठाया और एक हाथ से पत्थर पर टिक कर सनीचरी को पत्थर मारा।

सनीचरी उस समय किस तरह भागती—यह भी उसे ज्ञान न रहा। आत्म-रक्षा की प्रवृत्ति सहजात होती है, इसलिए डाइन को देखने के बाद भी खन्ती डाल, पत्थर फेंक भाग खड़ी हुई।

उसके पीछे पैरों की आहट थी। 'आँ—आँ—आँ' भयानक आर्तनाद से चारों ओर की भूमि और आकाश फट रहे थे। प्राचीन उराँव लोगों की समाधि के पत्थर चचल हो रहे थे। सनीचरी चक्कर खाकर औंधी गिरी और बेहोश होते-होते उसे प्रेत की उँगलियों का स्पर्श लगा। उसके बाद सब अँधेरा हो गया।

वह वहीं पड़ी रही, वहीं पड़ी रहती। बहुत ही आश्चर्यजनक घटना का मेल हुआ। उसी शाम को माथुर हेसाडी आया। पहान उसका पुराना दोस्त था। पहान के लिए वह एक बोतल एक-नम्बरी माल लाया था, वह उसे दिया। आदिवासी गाँव में पहान जिसे मान लें, वह वहाँ मान लिया जाता है।

माथुर ने कहा, 'हेसाडी में रात में कहाँ रहूँगा? तुम्हारे ही साथ ठीक होगा।'

कारों या पकी मिट्टी के घोड़ों के कुम्हारों की जाति की मौत जल्दी करते हैं और उनकी तैयार की हुई कलावस्तु कलकत्ते में देखकर 'लोक कला' बताकर शोर मचाते हैं।

कुरुडा की डाइन की बात के अन्तर्राष्ट्रीय समाचार बनने की खबर भी कम अस्थिर करने वाली नहीं है। समाचार संग्रह कर जिन लोगों ने उसे लिखा वह पटना-स्थित वही श्वेतांग कृष्णभक्त थे जिन्होंने हनुमान मिश्र को आस्ट्रेलिया की गाय का घी देना चाहा था।

इस श्वेतांग का नाम था पीटर भारती। भारत में यह बार-बार आये-गये और नाना रूपों में दिखायी पड़े थे। लोक भारती के पगले छात्र-रूप में यह एक बार साल के जंगल की छाया में 'यह तो भला लगा था' गाते फिरते थे।

दूसरे रूप में यह स्वदेश लौट गये और लगभग बरस-भर बाद इतिहास-शोधार्थी के रूप में भारत लौटे और भारत-नेपाल बॉर्डर पर बैठे रहे। उस समय इतिहास छोड़कर वे नेपाल-भारत बॉर्डर का नकशा खींचते थे। फिर वे स्वदेश को गायब हो गये।

अन्य रूप में ये पर्वत-विशेषज्ञ, भूतात्विक के रूप में भारत लौटे और यह जानकर भी कि कलकत्ता में कोई पहाड़ नहीं है कलकत्ता में बैठे रहे और स्वतन्त्रता-दशक के समय में तरह-तरह के आचरण करते रहे। कलकत्ता की दीवारों पर लिखे हुए की, भिखारियों की, कालीघाट में बलि दिये जाने वाले बकरों की, भरकर बिखरे हुए डस्टबिन की तसवीरें खींचने की-सी सरलता दिखायी। चड़क[1] के मेले में संन्यासियों के साथ पद्मपुकुर में नाचे। ग्वालों के साथ तारकेश्वर में जल चढ़ाया। यह सब करते-करते सहसा एक दिन वे बहुत-से रिपोर्टरों और फोटोग्राफरों के सामने ग्रांड होटल में बेहोश हो गये।

होश आने पर वे एक रूपांतरित साहब हो गये। तब वे बोले, 'सपने में एक विशालकाय सन्यासी ने उनसे कहा—अरे पागल! अब कब तक पारसमणि ढूंढ़ेगा?'

यह कहकर उन्होंने ताज्जुब से मुंह फाड़ा। उस फटे मुंह में पीटर ने युग-

1. चैत्र संक्रान्ति का शैव मेला।

'गिधना उरांव और अंग्रेजों की लड़ाई की कहानी बतायी थी।'

'पूरी कहानी नही कही थी।'

'क्या नही कहा ?'

'तुम उस गिधना उरांव के नाती के नाती हो, यह नहीं बताया था।'

'बताने से क्या फायदा ?'

'तो छिपाया क्यो ?'

पहान की आंखें धुंधली हो आयी, सारे गैर-आदिवासियों के प्रति खून में पला अविश्वास आंखो मे उतर आया।

उसने कहा, 'बताने से क्या फायदा ? गिधना उरांव को फांसी लगी। उसका भाई कालना गोली खाकर मरा। उसके बाद मेरे पुरखे घर छोड़ कर भाग गये। बताकर क्यः मरना है ?'

'अब कहने मे कौन-सा डर है ?'

'हमें हमेशा डर रहता है। तुम वह नही समझोगे। इतनी बातो से क्या फायदा ? शराब पियो। बीडी लाये हो, बीड़ी दो।'

'एक बात और है।'

'क्या ?'

'सनीचरी को बुलाओ। उसने बताया था कि उसे डाइन-पिशाच का पता है।'

'अभी आयेगी।'

'कहाँ गयी है ?'

'जिलाद के मैदान मे।'

'डाइन का डर नही है ?'

पहान की आँखें धूर्त और सतर्क हो उठी। वह बोला, 'उसे शायद डाइन का डर नही है।'

माथुर ने सामने देख उदासीन स्वर मे कहा, 'शायद डाइन होती नहीं। हो सकता है कि हनुमान मिश्र ने किसी पुराने झगड़े को लेकर डाइन की कहानी उड़ा दी हो।'

बाँभन ! देउता ! पुलिस-अफसर, एम० एल० ए०—सभी उसके घर ठहरते है, पैरों पर लोटते हैं। उस दिन पटना से साहब आया था। वे झूठा

युग में अपना भारतीय रूप देखा। उसके बाद उसी खुले मुँह मे पटना स्टेशन की तसवीर देखी। अतएव पटना ही उनके भाग्य का निर्दिष्ट स्थान था।

अन्तिम रूपांतर मे पीटर पटना आये। कृष्ण की कृपा से सब क्षण-भर मे हो गया। कृष्ण-चेतना आश्रम, देशी-विदेशी सेवक-सेविकाएँ, कतार-के-कतार स्टेशन-वैगन, रुपयों का भी अन्त न था, क्योंकि बहुत-से धनी लोग आकर साश्रुनयन ब्लैंक चेक पीटर के हाथो मे देकर धन्य हुए। स्वामी आनन्द भारती पीटर को दीक्षा देकर पीटर भारती बना, उसके हाथों मे आश्रम सौंप एयरोप्लेन से उडकर हिमाचल चले गये।

पीटर भारती की भारत-प्रेम की कथा सुविदित है। एक जन्म से दूसरे जन्म मे उसके सारे सूत्र बँधे हुए थे। उसका आश्रम लोकभारती का साल-वन-प्रेमी पूर्वकालीन छात्र-छात्राओं का, नेपाल के हिप्पियों का था। आश्रम की हवा मे छिपे हुए स्टीरियो पर सदा शान्ति-संगीत बजता रहता जिससे कि यहाँ घुसते ही आनन्द आ जाता।

हनुमान मिश्र के साथ मेलजोल होने से पीटर भारती को पहली बार डाइन का समाचार मिला और उसने समाचार मे दिलचस्पी ली। जिस कारण से भारतीय देवताओ की पीटर भारती पर अपार कृपा थी, उसी-लिए वह डाइन की ख़बर का अनुसरण करता रहा। उसे वह खुद न करता। तोहरी में उसे शरण माथुर मिल गया। माथुर स्कूल-अध्यापक था। पटना में उसके ससुर एक हिन्दी दैनिक के प्रधान सवाददाता थे, जिससे कि माथुर बीच-बीच में स्थानीय संवाद को छोटे लेख के रूप मे लिख भेजता और छपे अक्षरो मे अपना नाम देखकर स्वर्ग-सुख पाता।

तोहरी की तरह के बाजार के स्थान से पटना के अखबार मे लिखा हुआ छपने से माथुर की स्थानीय प्रतिष्ठा काफ़ी थी। माथुर बहुत धनी ठेकेदार का बेटा होकर भी बहुत भला, मेहनती और उच्चाकांक्षी था। वर्तमान मे वह यहाँ के किसी प्राचीन कोल-विद्रोह के इतिहास को लिखने के लिए सामग्री खोज रहा था। यह उसकी डॉक्टरेट की थीसिस होगी।

तथ्यो के संग्रह के कारण वे गाँव में फिरते है, इसलिए कुरुडा नदी के बहाव का अचल उनका परिचित है।

पीटर भारती के साथ माथुर का एक समझौता हुआ। पीटर ने कहा,

के पेड बड़ी जल्दी-जल्दी बड़े हो गये और जंगल के दूसरे पेड़ों के बीच की जगहें भर गयी।

लेकिन खैर के पेड़ लगाने का जो उद्देश्य था, कुटीर उद्योग के रूप मे कत्था बना कर आदिवासियों की दशा सुधारना, वह न हुआ। वन-विभाग ने देखा कि खर्च बैठाने पर परता नही पडता था।

बालू पर डाइन के पैरो के निशान देख-देख कर हमने नदी पार की। मशाल उठाये चिल्लाते-चिल्लाते मर्द बढते चल रहे थे। आगे-आगे पहान था। वह दोनों हाथ उठाये चिल्लाता हुआ चल रहा था। उसके पास कोई हथियार न था। वह बहुत घबराया हुआ था। सनीचरी उसकी बचपन की बहिन थी।

'वह रही।' कह कर पहान चिल्लाया और ठिठककर खड़ा हो गया। सामने पत्थर के ऊपर कुछ हिल रहा था।

मुझे लगा कि भालू था। भालू दो पैरो पर खड़ा रह सकता है। भालू के नाखून बहुत तेज होते है। सनीचरी की पीठ पर मैंने जो घाव के निशान देखे थे वे बहुत तेज नाखूनो से मांस नोचने के निशान थे। सत्य तो यह है कि मैंने भालू की सम्भावना को मन से निकाला नही।

लेकिन जो पत्थर के ऊपर उठ कर खडा हो गया, वह भालू नही था। उसकी चीख़ से आसमान फट पडा। भैंसे को गरम लोहे से दागने पर वह उसी तरह 'आँ—आँ—आँ' कर चिल्लाता है। लेकिन चीख आदमी के गले की थी। चीत्कार के साथ ही एक क्रुद्ध गर्जन था। उसके बाद वे लोग पत्थर बरसाने लगे।

मर्द लोग मशाले फेंककर भाग रहे थे। पहान बोला, 'अभी जो भागेगा, वह उसकी जान खा जायेगी। कोई भागेगा नही। उन लोगो ने उसे मुरहाई से भगाया है, हम भी भगायेंगे।'

मशाल उठा कर वे मौत का-सा साहस लेकर सामने दौडे, और पत्थर बरसाने लगे। डाइन भगाने का इस बार का ढँग टाहाड के हनुमान मिश्र के बताये ढग-सा था। पत्थर बरसा कर डाइन को भगाना होगा। पत्थरों से इस डाइन को हराना पड़ेगा। डाइन का खून बहने से सत्यानाश है, उसकी जान लेने से भी सर्वनाश हो जायेगा।

'तुम पूरी खबर दोगे। अन्त में क्या होता है, यह देखोगे। मैं तुमको पाँच हजार रुपये दूंगा।'

माथुर यह बात सुनकर हँसा। बोला, 'मेरे पिता इस क्षेत्र के सबसे बड़े लकड़ी के ठेकेदार हैं। उनके पास बहुत रुपये है। मैं मास्टरी करता हूँ। इसलिए वे खफा है। मैं रुपयों के लिए यह काम न करूँगा।'

'तो फिर?'

'मुझे इस डाइन के मामले मे दूसरा सन्देह है। मैं तुमको रिपोर्ताज जरूर भेजूंगा। किन्तु जब लेख छपेगा, मेरा नाम तुम छापे मे स्वीकार करोगे।'

'जरूर।'

'अपने रिसर्च के काम के लिए उन सारी जगहों पर जाना ही होता है, इसीलिए तुमको रुपये खर्च नही करने होंगे, नाम चाहिए।'

इस तरह बात हुई। अब उक्त अँग्रेजी पत्रिका के पाठक कह सकते हैं कि लेख में शरण माथुर का नाम तो था नही।

इसके जवाब में दो बातें हैं :

(1) नाम क्यों रहता? माथुर के साथ तो बात हुई थी पीटर भारती को। लेख प्रकाशित हुआ कुर्ट मूलर के नाम से। कुर्ट मूलर को माथुर का नाम स्वीकार करने की कोई विवशता न थी।

(2) माथुर की रिपोर्ट मे अकाल-मुरहाई-हेसाडीं, क्रम से विवरण था। छपा लेख जिस स्वरूप में प्रकाशित हुआ उसके साथ माथुर के विवरण का कोई मेल नही था।

कुर्ट मूलर ने असाध्य काम किया।

यूरोपीय डाइन को निकाल बाहर करना, नात्सी और दूसरे स्वेच्छाचारी शासन मे कम्युनिस्ट अथवा यहूदी लोगों का निर्यातन इत्यादि के साथ मिलकर डाइन की तलाश का लोमहर्षक विवरण उसके हाथों मे एक फड़कती कहानी बन गया।

लेख मे काफ़ी तसवीरें थी।

सेविका आइलीन भारती को काले रंग मे डुबा डाइन बनाकर तसवीर खींची गयी। चिड़ियाखाने मे लगी डाइन के हाथों मे मुर्गी या रोस्ट देख

मशाल की रोशनी मे वे लोग पाषाण-युग मे लौट गये। मैं उस प्रस्तर-युग के पत्थरो के फेंकने वाले युद्ध का बीसवी शताब्दी का दर्शक था। यह लड़ाई मेरी भी लड़ाई थी। जिन्दा रहने के लिए लड़ना होगा। लेकिन मैं किसी तरह भी उनके साथ मन-ही-मन शामिल न हो पा रहा था। इस समय, लड़ाई के समय मेरी तरह के अपने को अलग रखने वाले, डॉक्टरेट के लोभी लड़के को भी अपनी पहचान हो गयी। हमारी तरह जो लोग है, वे युद्ध के समय दूर खड़े रहकर युद्ध देखते हैं और दूसरों के युद्ध के काय-कारण से उसकी वास्तविकता का पता लगाते हैं।

पत्थरो की लड़ाई मे, सबके मिल कर एक को मारने के कारण सबमे प्रतिहिंसा जागने लगी। मैं उनके मन की भयकर भयजनित तीव्र प्रतिहिंसा की गन्ध नाक मे पाता रहा। वायलेन्स की गन्ध। और बीच-बीच मे उन लोगों ने उस पर मशालें फेंकी। मशाल के ललछौहे सुंदकते प्रकाश मे सहसा डाइन का फूला और विकृत चेहरा देखा। वह विकृत पतले से बदन की काली, नग्न युवती थी।

पत्थर समाप्त हो जाने पर वह 'आँ—आँ—आँ' चिल्लाती हुई उतर आयी। यह लोग और जोरों से पत्थर फेंकने लगे। ककड़ियाँ नही, बड़े पत्थर। यह पत्थर सर में लगने पर डाइन का खून बहता, लेकिन इन लोगो को उसका कहाँ ध्यान था ?

डाइन जगल की ओर भागती रही। 'आँ—आँ—आँ' की भयकर चिल्लाहट थी। वे भाग रहे थे। भागते-भागते उसे जगल मे खदेड़कर लौट आये। मैं खड़ा रहा।

लौटकर पहान बोला, 'आज रात को सोना नही है। जो सोयेगा, उसका खून पी जायेगी। सब मेरे घर चलो। मद लाओ, जिसके घर मे जितनी हो। हल्ला मचाते हुए रात-भर जागो। कल पूजा होगी।'

बिलकुल इसी तरह मुरहाई गाँव मे हुआ था। वहाँ पहान की पुकार पर सारे गाँववाले जागे थे। उसी रात को वहाँ के दो प्रेमी भाग गये। उन लोगों ने कहा था कि वह भी डाइन के अभिशाप से हुआ, क्योंकि जो भागे, उन्होंने ही डाइन को देखा था।

हम लौट आये। यह लोग मद खुद चुआते हैं। घर-घर ताड़ी रहती

कर माथुर को ताज्जुब हुआ। कहानी के अन्त में डाइन के क्लोज-अप में मुख की अभिव्यक्ति ऐसी यथातथ्य हुई थी कि आइलीन भारती को उसी चेहरे के आधार पर उक्त कहानी पर बनी 'द विच' फिल्म में नायिका की भूमिका मिली। फिल्म अमरीका के आरिजोना में बनेगी, क्योंकि वहाँ की भूमि पलामू की भूमि के ही समान है। तसवीर की विशिष्टता होगी कि उसमें भारतीय भूमिका में श्वेतांग और श्वेतांगों की भूमिका में भारतीय अभिनय करेंगे।

माथुर ने इतनी घटनाओं की बहुलता की कल्पना भी न की थी। विश्वास के साथ वह अपनी साइकिल लेकर डाइन की कहानी के पीछे भागा।

डाइन का दूसरा पता चला हेसाडी में।

हेसाडी के लोगों को डाइन के मामले में पहले बड़ा डर लगा। हर कोई अपनी छाया देखकर डर के मारे यह देखता कि छाया साथ लगी है या नहीं? रजस्वला और गर्भवती स्त्रियों के स्वजन लोग सन्देह की नजर से देखते। काली गौ, बकरी और कुत्तों पर अपनी चमडी के कारण ढेले पड़ते।

डाइन के डर से इस आवश्यक अनुष्ठान का कड़ाई से पालन हुआ। पहान नियमानुसार सावधान रहता और पूजा के फूल धरती में गाड़ देता। मुर्गी का गला काटकर गरम खून सब ओर छिड़कता।

इसके बाद जब डाइन का पता चला तो सब निश्चित हुए।

हेसाडी की सनीचरी आजकल बहुत परेशान थी। बच्चे को माँ के सर थोपकर उसके बेटे और बहू मर गये थे। वह हेसाडी गाँव की दाई, प्रसूता की भूत झाड़ने वाली और बच्चों की चिकित्सक थी। उसका परिणाम था कि वह हमेशा जंगल-झाडी घूमकर जडी-बूटी, जड़-पत्ते-कन्द जमा करती रहती। इतने दिनों तक वह डाइन के डर से जंगल में नहीं घूमी थी।

उसका नाती उससे बहुत हिला था। बच्चे को माँ के सर थोपकर उसके बेटे और बहू मर गये। बच्चा केवल सात बरस का था। घर के काम के लायक न था। मनीचरी ने लाचार होकर अपने को गाँव के जीवन में अपरिहार्य बना लिया। परचून की दूकान का दूकानदार भगत उसकी सामर्थ्य का विश्वास नहीं करता था। एक-एककर पत्नियों के मर जाने पर

है। यह लोग 'टंक' बनाते हैं। उसका नशा बहुत कड़ा होता है।

सब लोग जब शोर मचाते हुए रात में जाग रहे थे तो पहान ने मुझसे डाइन की एक सच्ची घटना बतायी।

पहान के घर के बरामदे में माथुर और पहान बैठे हुए थे। दूर गाँव के आदमी और औरतें शराब पीकर रात को जाग रहे थे। डाइन को भगा देने की मन में एक तरह की खुशी होती है। मुरहाई के लोगों को हुई थी, इन लोगों को भी हुई। यह लोग यहाँ गीत गाकर रात को जाग रहे थे। गीत होली का था। होली इन लोगों का वार्षिक शिकार-पर्व का दिन भी होता है। यह गा रहे थे :

होली में गया शिकार करने
लड़का मेरे मन का।
ओ रे वह पूरब गया।
ओ रे वह पच्छिम गया।
साँझ भई, जली होली की अगिन,
वह तो लौटा नहीं।
मैं बनी निरलज्ज, खड़ी कुरडा के पार,
जब लौटूं तो, हिरना शिकार का
ढोऊँगी मिल उसके साथ
लौटूंगी चूर-चूर।

माथुर गीत सुन रहा था और सोच रहा था। एक मन लेकर आया था। जो कुछ देखा उससे हेसाडी के लोगों के बारे में नयी-नयी भावनाएँ हो रही थीं। डाइन की बात सच-झूठ जो भी हो, इनके डर, भयजनित क्रोध और हिंसा बहुत सच्ची चीजें हैं। और भी सच है हनुमान मिश्र का मामला। उनकी बात वक्त पड़ने पर अहिन्दू आदिवासियों के भी काम आती थी, यह प्रमाणित हो गया। सारी जमीनों का क्षरण होता है। हनुमान मिश्र की श्रेष्ठता जिस पर प्रतिष्ठित है वह जमीन धीरे-धीरे ग्रेनाइट-सी कड़ी होती जा रही है।

डाइन भी कम क्रूर नहीं थी। क्यों? वह सचमुच डाइन थी? लोहा-आग, कुछ चीजों से डाइन पराजित मानी जाती हैं। पत्थर से डाइन पराजित

उसके लड़के ने तीन शादियाँ की। मक्का कहना था कि यह सनीचरी का काम है।

दुनिया-भर को सनीचरी का द्वार खटखटाना पड़ता था। अन्त में सनीचरी ने मन्त्र-पढा पानी, मन्त्र पढा तेल, तेल मालिश इत्यादि कर भगत की पत्नी का अच्छा प्रसव कराया। भगत के दिये हुए मडुआ या मक्का ने अभी तक उसकी जान बचायी थी। 'बिखिल' या चावल सनीचरी के लिए दूर का स्वप्न था। तीज-त्योहार पर चावल का भात मिलता था। मक्का या मड़ुआ का घाटो ही उन लोगों का प्रमुख भोजन था।

डाइन को लेकर सनीचरी और पहान के बीच एक गुप्त सलाह हुई।

सनीचरी ने पूछा, 'क्या समझते हो ?'

'तू क्या समझती है ?'

'तुम्हारे रहते मैं समझूँ ? तुम पहान हो। तुम जो कहोगे हम उसी को मानेंगे।'

'पहले तू बता न !'

सनीचरी ने घास का गट्ठर उतारा। हेसाडी बस-जंक्शन पर वे लोग ग्वालों को घास बेचा करते थे। बस के जंक्शन का नाम भी हेसाडी था, लेकिन सनीचरी के लिए वह 'कोहा हेसाडी' या 'बड़ा हेसाडी' था। सात मील के अन्दर उनका गाँव आदि हेसाडी था।

घास का गट्ठर उतार कर सनीचरी ने दूसरी औरतों को पुकारकर कहा, 'तुम जाओ, मैं पहान से बातें कर रही हूँ।'

'पहानी को मालूम है ?'

औरतें हँसकर चली गयी। पहान ने सनीचरी को एक बीड़ी दी और एक खुद सुलगायी।

सनीचरी बोली, 'किस तरह हुआ ? मुरहाई से डाइन अगर हेसाडी की ओर आयी तो उसकी आँ नही सुनी ? जिलाद के मैदान मे अगर गयी तो वहाँ मैदान के पिसाच की हँसी नही सुनी ? बिनको (बादल) आये, बदली हुई, यह तो होने की बात नही है !'

पहान ने ठंडी साँस ली और आधी बीडी बुझाकर टैंट मे रख ली। भौंह सिकोड कर बोला, 'अगर डाइन है, तो उसे जलायेंगे क्यों नही ? उसके

रहती हैं ! डाइन-शास्त्र मे यह एक नयी बात हुई । डाइन मृत्यु से भी हारती है । अब भी डाइन मान कर किसी पर सन्देह होने से उसकी हत्या कर दी जाती है ।

डाइन करती क्या है ? दूर से, नज़र से चट से दूध में दही छोड देती है, बकरी और गायों को मार देती है, खेती नष्ट कर देती है, सूखा बुला देती है, अकाल कर देती है, छोटे बाल-बच्चो की जान ले लेती है, रजस्वला लड़की को अपने दल मे खीच लेती है, गर्भिणी के गर्भ मे घुस जाती है ।

डाइन पर क्या केवल यही लोग विश्वास करते है ? माथुर की माँ किसी के सामने बाल-बच्चों को खाना नही देती, कहती कि नजर लग जायेगी । माथुर की बहू या बहिनें गर्भावस्था मे शाम को आँगन मे बाल नही काढती । कहती, खराब हवा लग जायेगी ।

माथुर तो उसे मान लेता। वह खुद एम० ए० पास है। उसके अपने भाई लोग बी० ए० और बी० एल० पास है । तोहरी के हिसाब से ही क्यों, उस अचल के हिसाब से वह बहुत शिक्षित परिवार है। उस पर माथुर के पिता लकडी के अच्छे-खासे ठेकेदार है । तमाम लारियाँ, बड़े गोदाम, लकडी की कटाई-चिराई का कारखाना है ।

उनके घर पर कौन नज़र डालता ? कौन बुरी हवा भेजता ? इस तरह का विश्वास करने के माने परोक्ष मे डाइन पर विश्वास नही हुआ ? परिवार को भी सतर्क रखे, तो ऐसी डाइन भी है ?

माथुर यह सब सोच रहा था और अपनी शिक्षित चेतना मे शिक्षा के ऊपरी स्तर पर और नीचे जो अधविश्वास का अधकार है उसे समझ कर निराश हो रहा था ।

पहान बोला, 'तुम लोग डाइन-आइन पर विश्वास नही करते हो। लेकिन इंसान डाइन बन जाता है । मेरे जीवन की एक कहानी सुनो ।'

'कहो ।'

'गिधना उराँव का किस्सा जानना चाहते थे । जो गिधना अँग्रेज़ों से लडा था, वह हमारा पुरखा था । अब हम लोगों का कुछ नही है । सब लोगों की तरह मैं भी कोहा हेसाडी के गुलबदन की जमीन फसल के दिनों जोतता हूँ, दूसरे वक्त जो काम मिलता है कर लेता हूँ । और यह पहान का काम है ।'

खून से डाइन पैदा होगी, इसलिए उसे काटेंगे नहीं। जलायेंगे क्यों नहीं ?'

इस बात पर सनीचरी ने गाल पर हाथ रखा, हाथ फेरा।

पहान बोला, 'याद है ?'

'याद है।'

'तू और मै अपनी माँ के दूध के बने है। मैं तब ग्राद (छोटा बच्चा) था, तू छोटी मुक्काहिकी (नन्ही बच्ची) थी। याद है ?'

'याद है। तुम्हारे मुँह पर एक ही बात रहती थी—किस लागेगा (भूख लगी है)।'

'तू कहती थी—भालू कुलार आवगुडा (पेट नही भरा)। ऐसी बातें हम करते थे। तेरा नाती भी कहेगा। लेकिन वह बात नही कहता हूँ।'

सनीचरी ने फिर गालो पर हाथ फिराया। बोली, 'तुम्हारे काका, वह डाइन हो गया।'

'घर मे आग लगाकर उसे जलाया।'

'उस आग के छिटकने से मेरा गाल जल गया। दाग है।'

'डाइन को जलाने से पानी हुआ, मडुआ हुआ, नदी मे मछली। सारा अकाल दूर हो गया।'

'क्या हुआ, अब समझ मे नही आता।'

'मुझे लगता है...।'

'क्या ?'

पहान ने फिर बड़ी बेचैनी के साथ वह आधी बीडी सुलगायी। चकमक, चिंगारी के बाद बीड़ी सुलगाकर वह बोला, 'किसी को बताना मत। मुझे लगता है, टाहाड़ का बाँभन देउता तो हम लोगों के घर चलते देखकर पानी न छिड़ककर किरासिन छोड़ देगा, ऐसा प्यार करता है। छोटी जात, तुम लोग जूते के तले की धूल हो—इसको छोड़कर उसके मुँह से कोई और बात नही निकलती। मुझे लगता है, उसी ने डाइन-डाइन का शोर मचाया, डाइन है नही।'

'डाइन नही है ?'

'लगता है, नही है।'

'मुरहाई मे वे...?'

'अच्छा काम है न !'

'अच्छा भी नहीं, बुरा भी नहीं, काम है।'

'कहो।'

'एक गिधना और हुआ। हमारे इसी वंश में। हमारे काका थे। उनका नाम गिधना माँ-बाप ने क्यों रखा, यही सोचता हूँ। गिधना उरांव के बाद इस वंश में यह नाम कोई रखता नहीं। उन्हीं काका के पास मैं आदमी बना। मेरे बाप को बाघ ने मार डाला, यह तुम्हें मालूम है। काका बहुत भले आदमी थे।

'जब तक मुझे जवान नहीं कर दिया तब तक वह भला आदमी था। काका की बहू खचड़ी थी। अपने भाई की पकड़ बेटे को रामगढ़ कोयला खोदने के काम में भेज दिया। उससे काका का मन बहुत टूट गया।

'कोयले के काम में नकद पैसा था। नये मालिक ने जब कोयले की खान ली, तो काका के बेटे ने पक्के मकान में घर लिया। काका की बहू तब गाँव छोड़ कर बेटे के पास चली गयी।

'तब भला आदमी बुरा हो गया। मैंने कहा, मैं बाप को नहीं जानता, तुमको जानता हूँ। मेरे पास रहो। वह बोला, तेरे भात पर नहीं रहूँगा। मैंने कहा, यह अच्छी बात है। अपना भात खाओ, मेरे पास रहो।

'पता है उसने क्या कहा? बोला, देवी-देवता के पास नहीं रहूँगा। देवी-देवता मान कर चलता रहा। उसी से बूढ़ी वयस में मुझे इतनी शान्ति है। तू चौदह बरस का लड़का है। पहान बनेगा, इसलिए तुझे पहान ने गोद लिया था।

'काका अपने ढँग से रहे, मैं अपने ढंग से रहा। उस साल खूब वर्षा हुई। इस जिलाद में बाढ़, अभी कुरुडा में बाढ, पानी मानो पागल हाथी की तरह चल रहा हो। पहान ने मुझसे कहा, तू नासमझ है, बिलकुल नन्हा बच्चा, जाकर देख तो आ, काका रात में बत्ती जला कर क्या करता है?

'मैंने देखा कि काका बत्ती जलाकर किसी को बुला रहा है, भात दे। पानी दे। महुआ निकाल। मुझे छोड़ कर मत जाना।

'मैंने कहा, काका? किसे बुला रहे हो?

'काका ने कहा, तेरी काकी को। देखा कि बहुत महुआ पिये है।'

'आँधिधूका (अँधेरे) मे क्या देखा, कौन जानता है ! भालू हो सकता है।'

'डाइन नही !'

'लगता है, नही। हवा अच्छी है, जंगल में डर की बात नही है। मरते-मरते बुधना का वेटा जी उठा। लड़के की जान नहीं थी, हवा मे सनसनाहट नही छोड़ी, जंगल के जानवरों को डराया नहीं। यह कैसी डाइन है ?'

'देखो, पूजा करके देखो। हिसाव लगाकर, गुनकर देखो। जानोगे तो तुम जानोगे, हम नही जानेंगे।'

'किसी से कहना मत।'

'न, न।'

सनीचरी वड़ी चिन्ताकुल हो गयी। किन्तु धीरे-धीरे उसके मन मे साहस लौटने लगा। पहान ने अगर कहा है, तो पहान बिना जाने नही कहता। डाइन नही है। और डाइन अगर नही है तो वह जिलाद के मैदान में क्यों न जाये ?

'जिलाद का मैदान' शब्द के साथ याद आयी पथरीली जगह में बड़े-बड़े पत्थरों की। पत्थरों के बीच-बीच में कलटुली और गोली के पेड थे। गोली-गाछ की जड की सनीचरी को बड़ी जरूरत रहती थी। शाम को सूरज डूबेगा। बरसात के आसमान में रोशनी छायी रहेगी। उस समय वाल खोलकर सनीचरी को गोली के गाछ की जड खोदनी होगी।

वह जड मृतवत्सा की दवा थी। भगत की बहू के फिर सन्तान होगी। एक जीवित रही। किन्तु जिसकी सन्तान मर जाती हों वह जितनी बार पेट में फल धारण करती थी उतनी बार ही सावधानी बरतनी पड़ती थी।

जिलाद के मैदान मे शाम को कोई न जाता था। सनीचरी के समाज में अब मुर्दों को समाधि दी जाती थी, ओल्दा (चिता) जलाकर फूंकना भी चलता। हिन्दुओ के आने के बाद से ओल्दा मे जलाना होता है।

आदिम युग मे समाधि होती थी। समाधि पर पत्थर रखे जाते थे। वह सारे जनपद कब के समाप्त हो गये। जिलाद के मैदान में अब एक परित्यक्त श्मशान पत्थरों का मैदान है। सब जानते हैं कि शाम होने पर पत्थर जाग उठते हैं और चलते-फिरते, घूमते हैं।

'पहान से कहा। पहान बहुत सोच में पड़ गया। अन्त में बोला, रात में निकल जाता, भोर को लौटता, उसे क्या हो गया है?

'मैं क्या कहता, मुझे तो कुछ नहीं मालूम था। दिन में तुम्हारे घर में भूत की तरह काम करता हूँ, शाम होते ही सो जाता हूँ।

'इसके बाद ही गाँव में लोग मरने लगे। पहान की पत्नी के पैर में ईंट लग गयी। वह बाद में धनुक की तरह मुड़कर मुँह से फेन छोड़ती मर गयी। वह भगत की बुआ, कुएँ के जल में मर गयी। और बच्चों का क्या हुआ? हिचकियाँ लेकर हाथ-पैर सिकोड़ कर मरे। सात-आठ मरे, उसके बाद पहान ने एक दिन सबको बुलाकर दिखाया कि काका रात में घर छोड़कर निकल जाता है, जिलाद के मैदान में चला जाता है, सवेरे लौट आता है। वह जिस दिन मैदान में जाता है, उसी दिन लोग मरते हैं।'

माथुर साँस रोके सुन रहा था। बोला, 'उसके बाद? तब क्या हुआ?'

'सोचा गया।'

'सोचा गया!'

'पहान ने सोचा। काका ने कहा, जिलाद के मैदान में जाता हूँ, देवी-देवता ने तो सुविचार किया नहीं, भूत-पिशाच से पूछता हूँ, किसके पाप से मेरी पत्नी चली गयी? बच्चों ने खोज नहीं ली, मैं भूखा मर रहा हूँ। पहान बोला, तुम्हारे भतीजे ने तुमको रखना चाहा, तुम क्यों नहीं रहे? काका बोले, मैं गरीब हूँ। उनकी देखभाल नहीं कर सकता, काकी खाने को नहीं देती थी, तुमको गोद दिया था। अब वह तुम्हारा बेटा है। वह पहान बनेगा। उसके पास अपने भात पर कैसे रहूँगा? और देवी-देवता की पूजा देखने पर मुझे गुस्सा आता है।'

माथुर को लगा, यह एक भाग्य के मारे आदमी की पीड़ा का कहना है।

'देवी-देवता की पूजा देखने से मन में गुस्सा होता है, इससे ही सब पता चल गया। उसके बाद...।'

'क्या हुआ?'

'रात को सबने काका के घर के दरवाज़े पर सूखी झाड़ियों का पहाड़ लगा दिया। मैं कुछ कह न सका, कर भी न सका। कलेजे में कबूतर की तरह फटफटा रहा था।'

मनीचरी और पहान का डर मे काम नही चलता। सनीचरी वहाँ जाती है। वहाँ की गोली-गाछ की जड का गुण अधिक है।

पहान वहाँ जाता है। वीच-वीच मे वह मन-ही-मन समझता है कि पत्थरों का फेंकना वहुत वढ गया है। आदिम ओरांव लोगों की आत्माएँ वहुत अस्थिर और अशान्त हो गयी हैं। अशान्त होने की बात ही है। मृतक को समाधि देने से ही तो नही हो जाता है। परिवार मे केच्चा (मृत्यु) के प्रवेश होने पर, उल्लोचोत (अशौच) समाप्त होने पर, पुरखों की समाधि के पत्थर पर जल, चावल, नमक रखने का नियम है। जिलाद के मैदान में जिनकी समाधि है, उनके वशघरो में कौन कहाँ चले गये, क्या पता? लेकिन परलोक मे प्रेत भूखे रहकर क्या सूखेंगे?

इसी से आत्माएँ चचल होती हैं। इसी से वीच-वीच में पहान को भागना पडता है। जीवित ग्रामवासी और मृतकों की आत्मा—सवके ही प्रति पहान का कर्तव्य रहता है। जो पहान इसे नही मानता, वह पहान वनने का अधिकारी नही।

इसी से सनीचरी को पहान की वात से हिम्मत हुई। उसने भगत की बहू से कहा, 'कल दवा ले आऊँगी। आज गोठ ठीक कर रखो, घर-द्वार साफ कर लो।'

'ओर क्या लगेगा?'

'चावल-सुपारी-तेल, काली वकरी के वाल, गोमूत्र, नयी लोहे की एक चाभी।' गर्भ के भार से भगत की पत्नी बहुत परेशान थी। बोली, 'पेट मे क्या लोहे का वच्चा है, सनीचरी? बड़ा कष्ट हो रहा है।'

'तेल मालिश कर, चला-फिरा कर, बैठी न रहाकर। बैठे रहने से बाद में कष्ट होगा।'

'बच जाऊँगी?'

'जरूर।'

'भाई ने मुझे शहर के अस्पताल मे ले जाने को कहला भेजा है। स्वामी राजी नही है।'

'अस्पताल में वच्चा वदल देते है।'

'तू देख, क्या कर सकती है!'

पहान ने जल्दी-जल्दी बीडी के कश लिये। अतीत की स्मृति से जैसे विचलित हो रहा हो।

'उसके बाद उन्होंने आग लगा दी। उस आग के जलने पर काका चिल्लाया। वह चीख सुनकर मैं आग हटाकर घुसने लगा, मुझे सब लोगों ने हटा दिया। सनीचरी के गाल में आग उड़ कर लगी। अभी तक दाग है।'

'उसके बाद?'

'गाँव का सारा शाप दूर हो गया।'

'उसके बाद?'

'पुलिस आयी। किसी ने कुछ नही बताया। गाँव मे तंबू लगा, दो दिन खोज-खबर लेकर, मुर्गी और महुआ उड़ा कर पुलिस चली गयी।'

'काका की पत्नी और बच्चे?'

'कौन जाने उनका हाल!'

'यह तो बहुत दिनों की बात है।'

'सो तो है ही।'

'रात खतम हो गयी है।'

'आज मुझे बहुत काम है।'

'पूजा होगी?'

'करनी ही होगी।'

'हेसाडी मे डाइन फिर नही आयेगी?'

'न। वैसा कुछ करना पडेगा कि वह फिर न आये। गाँव के लडके भी कुछ नही मानते। गाय, बकरी मैदान मे ले जाते है। श्मशान के पत्थरो पर बकरियाँ हगती-मूतती है। यह अच्छी बात नही है।'

'थोडा लेट लो।'

'तुम सोओ।'

बरामदे मे घास के चबूतरे पर लेट कर माथुर ने अब होली के गीत मे लड़को की बातें सुनी :

ओ लडकी, ओ पत्थर के कलेजे वाली,
शिकार खेल आया—
तू वन के किनारे नही।

तू गाँव के किनारे नही।
तू गीले पाँव क्यों आयी ?
कुरुडा के जल मे पाँव भिगो कर ?
कोई नया साथी मिल गया क्या ?
बालों में कुसुम फूल
तेरा मुँह है लाल।

माथुर सो गया। सोने के पहले पहान से बोला, 'मैं फिर तोहरी घूम-कर आ रहा हूँ। डाइन का क्या हुआ, यह मालूम करके जाना है।'

हेसाडी गाँव की जानकारी के बाद एक दिन कोहा हेसाडी मे बड़े हाट मे तीन बुड्ढे मिले। कुरुडा, हेसाडी और मुरहाई के पहान थे। मुरहाई का पहान बोला, 'तेरी सनीचरी मर गयी?'

'हाँ।'

'अस्पताल में मरी।'

'माथुर लाया।'

'डॉक्टर ने क्या कहा ?'

'कुछ बीमारी थी उसे। उस बीमारी मे घाव सूखता नही, खून बद नहीं होता।'

'खून बहना बद नही होता ?'

'न। खून बहा तो बहा, तमाम घाव हो गये। आँखें गड्ढों में धँस गयी।'

कुरुडा का पहान हेसाडी के पहान का शोकार्त और कातर चेहरा देख नहीं पा रहा था। वह बोला, 'बाबा! डाक्टर को क्या पता? डाक्टर सुई लगाना, दवा पिलाना, नाक मे नली ठूँसना जानते हैं। सनीचरी को केच्चा (मौत) का नाखून लगा था। उसके बाद इंसान जिन्दा रहता है? सनीचरी गयी, अच्छी गयी।'

'उसका नाती ?'

'मेरे पास है। वह मेरी बचपन की बहिन थी। छोटा-सा लड़का है, कहाँ रहेगा?'

'उसका घर?'

'पड़ा रहे।'

'हूम।'

'कैसे ?'

'सियार के भिटे में घुस जाने पर क्या करते हो ?'

'आग जलाते हैं।'

'आग जलाओ।'

ढाई का पहान बोला, 'जलाकर मारोगे ? एँ ? उसे जलाओगे ?'

'न, न, उसे मारने पर अपनी मौत है।'

'तब क्या कह रहे हो ?'

'गुफा के मुँह पर आग जलाओ। धुएँ की गर्मी से वह निकलेगी। तब खेदना।' टूरा का पहान बोला, 'खेदेंगे जंगल की ओर। गाँव की ओर नहीं। अपने गाँव में हम अकाल से जल रहे हैं।'

'जल कौन नहीं रहा है ?'

'वही कह रहा हूँ।'

अब माथुर जो कुछ देख रहा था वह सब अस्वाभाविक लग रहा था। आश्चर्यजनक तेज़ी से वे लोग पेड़ों को काट रहे थे, झाड़ियाँ काट रहे थे। जनता खून की प्यासी थी। सैनिकों की तरह वे गुफा के मुँह पर झाड़ियों और डालियों का ढेर कर रहे थे। ढाई गाँव से कोई किरासिन लाया। उन पर छोड़ा। हेसाडी के पहान ने चकमक ठोंका।

आग ही आग। हवा ने झोंके मारे। आग फैल रही थी। धुआँ गुफा में जा रहा था। आग की गर्मी से हरी डालें फट्-फट् की आवाजें कर रही थीं। आग से बचने के लिए लोग पीछे हटे।

सब ने गरदनें आगे बढ़ायीं। सब स्तब्ध थे। आँखों में, चेहरों पर भयानक उल्लास था। भयंकर संकल्प था।

'निकल ! निकल !'

हेमाडी का पहान हिल क्यों रहा है ? क्या मंत्र पढ़ रहा है ? क्या यह डाइन को खोंचा मार कर निकालने का क़ायदा है ?

सब हिल रहे थे। सब कह रहे थे, 'निकल! निकल!' माथुर एक होकर इनके साथ हिल रहा था। क्या उसके अन्दर भी कहीं प्रस्तर-युग माथुर ने पेड़ की डाल पकड़कर बदन को संभाला।

'बहुत दवा और मंत्र जानती थी।'

'उसी मे मरी।'

हेसाडी का पहान बोला, 'सोमरा, अँधेरा हो रहा है। बताओ, क्यों बुलाया था?'

'बात क्या? डाइन का पता नही। उससे डर बहुत है। जब पता चले तब भगायेंगे। मैं कहता हूँ, हमारे लड़के राजी हैं। हम अगर एक साथ तलाश करते।'

हेसाडी का पहान आहिस्ता से बोला, 'न। राजी तो हमारे लड़के भी होंगे। लेकिन सोचकर देख लो।'

'तुम बताओ। तुम उमर में बड़े हो, गियान-मान मे बड़े हो।'

हेसाडी के पहान ने समझा कि उसकी तरह लँगोटी पहने, झूलती चमड़ी के और दो बुड्ढों के निकट उसे जो सम्मान मिला है, वह उसके दो पुरखो गिधना और कालना उरांव के कारण है। गिधना की फाँसी और कालना की गोली से मौत पर एक गीत सबको मालूम है :

गिधना, तुम मत डरना
गले मे फाँसी पड़ने से।
कालना, तुम मत डरना
आगे बढ़ गोली खाने से।
नाम तुम्हारे हुए गाछ के पत्ते
झरते जितनी बार टहकते उतने ही।

हेसाडी का पहान बोला, 'जो जायेंगे, वे माँ-बाप के बेटे हैं। डाइन का स्पर्श लगते ही मर जायेंगे। अपने बेटो को हम पहान होकर मरने भेजेंगे?'

'नही, ठीक ही कह रहे हो।'

'जैसा जहाँ हो, वैसा वहाँ काम करेंगे। भली बात है, गुलबदन कोलियरी चलायेगा?'

'सुन तो रहे हैं।'

'देखा जाये। अब पेट का काम नही चलता।'

'गुलबदन को तब सस्ती मिल गयी, कोलियरी खरीद ली। उसके भाई का ईंटों का भट्टा भी तो बन्द है।'

'वह ! वह देखो।'

धुएँ की कुंडली अचानक साँप की तरह बन गयी। अजगर की तरह श्लथ सर्पिलता से वह गुफा में घुसी। धुएँ में सब-कुछ अँधेरा हो रहा था।

'आँ—आँ—आँ—आँ—आँ' आर्तनाद, मानव का आर्तनाद, मानवी ही तो डाइन बन जाती है। जब बन जाती है तो मनुष्य ही उसे खींच-खींचकर बाहर निकालता है। माथुर के कलेजे में सब टूटा क्यों जा रहा है?

'आँ—आँ—आँ—आँ।' अचानक चीखें रुक गयीं। सन्नाटा। भयानक सन्नाटा। उसके बाद कातर रुदन। अद्भुत और अविश्वसनीय। मानो कोई सद्य-प्रसवा रोयी हो।

सभी डरे हुए, खोये-से थे। अचानक समस्त दृश्य की अवास्तविकता को भग कर टूरा का पहान चीख पड़ा, 'ना-आ !'

टूरा का पहान भागा हुआ गया। एक बड़ी-सी डाल खींचते-खींचते वह दोनों हाथों से आग ठेल रहा था। राह बना रहा था।

'क्या कर रहे हो?'

'मुझे जाने दो।'

'न।'

'मैं जाऊँगा, जरूर जाऊँगा।'

'न।'

'छोड़ दो।'

'मरोगे?'

'मरा हूँ, मर गया हूँ। मैं तुम्हारे पैर पड़ता हूँ...।'

टूरा के पहान ने उसका हाथ काटा। लोगों ने उसका हाथ छोड दिया। उसके अपने हाथ मे खून बह रहा था।

टूरा के पहान ने खून से सना मुँह हथेली से पोंछकर कहा, 'जो आगे बढेगा उसे काट डालूंगा। सब चुपचाप खड़े रहो।'

टूरा का पहान आग को रौंदता हुआ भागा। उसके बाद उसकी आवाज़ से गुफा रोने लगी। 'सोमरी ! सोमरी ! सोमरी !'

माथुर आगे बढ़ा। अयथार्थ के दुःस्वप्न से यथार्थ मे लौटा। उसने भीड़ की ओर देखा, आग रौंदता अन्दर घुसा।

'वदमाशी से बन्द कर रखे हैं।'

मुरहाई का पहान अब बेचैनी के साथ बोला, 'मेरा बेटा सुनकर आया है कि वह कोलियरी और ईंटों का भट्ठा टाहाड के हनुमान मिश्र ने खरीद लिये हैं। पूस के महीने में चालू करेगा।'

'खरीदे। जो भी खरीदेगा, हमें बारह आना रोज से ज्यादा नही देगा। या देगा ? हमें काम मिलेगा तो काम करेंगे।'

'क्या दिन लगे है ! समय पर पानी नहीं, हवा में तरावट नहीं।'

'और खराब होगा।'

'तो एक काम करना होगा। आदिवासी दफ्तर से कहना होगा कि हमको कुली का काम मिले।'

हेसाडी के पहान ने माथुर से वही बात कही। बोला, 'तुम तोहरी में अफसर से कहना न !'

'कहूँगा।'

यह सरफ़ेस कोलियरियाँ उस अचल की खूबी थी। इन कोलियरियों में जमीन के लगभग ऊपर ही निम्नवर्ग का कोयला मिलता था। राष्ट्रीयकरण कर इस दूर दुर्गम मे छोटी-छोटी सतही कोलियरियों को सरकारी अधिकार मे नहीं लिया गया। यह सरकार से स्वतंत्र व्यक्तिगत मिलकियत में मौजूद है।

सत्तर-इकहत्तर मे पश्चिमी बंगाल में औद्योगिक संकट का शोर मचा कर जो लोग दक्षिण-पूर्व बिहार में घुस गये, उन्होंने उस वक्त दस-पन्द्रह हजार मे ही ऐसी एक-एक कोलियरी खरीद ली। आदिवासी और स्थानीय निम्नवर्ग के कुली पानी के भाव मिलते थे। यह लोग बेलचा और कुदाल से, गैंती से भी, कोयला खोदते थे। कच्ची सडक से ट्रक इस कोयले को दूर-दूर तक ढोकर ले जाते थे।

ईंटो के भट्टे भी बहुत फ़ायदे के थे। यहाँ की मिट्टी से जो ईंटें तैयार होती उन्हें कच्ची सुखाकर भी उनमे बने मकान बहुत बरस तक खड़े रहते, पकाने पर तो बात ही क्या थी ! ईंटो की मिट्टी सब जगह नही थी, जहाँ कोलियरी थी वही थी। दस या पन्द्रह या तीस हजार में ही कोई कोलियरी का मालिक बन जाता था। दस बरस कोयला खोदने मे ही काफ़ी फ़ायदा

गुफ़ा के अंधकार मे आँखें काम नही कर रही थी। अबाबीलो की दुर्गन्ध थी। अबाबील धुएँ से पंख फड़फड़ाकर उड़ रहे थे।

गुफ़ा मे ज़मीन पर टूरा का पहान घुटनों के बल ज़मीन पर बैठा था। ज़मीन पर एक युवती नंगी पड़ी थी। उसके पैरों की फाँक में नाल-लगा नवजात बच्चा था।

'मेरी बेटी।'

टूरा के पहान ने ज़मीन से ही कहा। उसके बाद अँधेरे मे आँखें उठाकर कहा, 'गूँगी। शरीर बड़ा हुआ। अक्ल नही। टाहाड़ के हनुमान मिश्र के घर उपले बनाने मे लगाया था। उपलों के काम मे।'

'कब ?'

'बरस हो गया। आज पाँच महीने हुए उसकी खबर नही। मिश्रजी बोले, वहाँ से कही चली गयी। बहुत खोजा, नही मिली। बाद में पता चला कि ठाकुर के बेटे ने उसे ख़राब किया। खोजने जाने पर जूते खा आया। डाइन, डाइन, ठाकुर ने डाइन की बात फैला दी। सो नही मालूम था कि मेरी सोमरी डाइन है। बिलकुल पता नहीं था।'

'डाइन नही थी !'

माथुर ने मुँह मोड़ा। हेसाडी और मुरहाई के पहान थे।

टूरा के पहान ने वन्य पशु के समान सिर हिलाया। उसके बाद रुँधे विकृत स्वर में बोला, 'मुझे भी मारो। इस निकम्मे को भी।'

'डाइन नही है !'

हेसाडी के पहान की इस प्रसग में दो बातें थी। अर्थात डाइन के प्रसंग में अन्तिम बात। उसके बाद हेसाडी के पहान ने जो कुछ कहा, वह टूरा के पहान की बेटी सोमरी के प्रसग में पहली बात थी।

'तुम उठ आओ। अरे, औरतो को बुलाओ, यह उनका काम है।'

'क्या काम ?'

टूरा के हतबुद्धि, विभ्रान्त पहान ने नज़र उठायी। जो मारे गये हों, उन्हें क्या काम रह जाता है ? हेसाडी के पहान ने गुफ़ा की दीवार थाम कर मुँह घुमाया। बोला, 'ढाई गाँव मे औरतें नही है ? नाल नही काटेंगी ? बुलाओ। उठो।'

था। अचल के मजदूर बारह आना रोज पाकर ही धन्य हो जाते थे, क्योंकि *वे किसी भी काम में इतना पैसा नही कमाते थे।*

पता लगाने पर माथुर को मालूम हुआ कि बात सच थी। टाहाड के हनुमान मिश्र मन्दिर बनाकर चुप नही बैठे। बहुत-से फलो के बगीचे ख़रीदे, तमाम जमीन खरीदी। कुछ कोलियरियाँ ख़रीद लेने से निश्चित रूप से अचल उनके हाथों मे आ जायेगा।

हनुमान मिश्र ने उससे बात स्वीकार की। अफ़सोस के साथ बोले कि यह सब अँग्रेजी पढाने का कुफल है। लड़के मन्दिर लेकर नही रहना चाहते। अपने ही को देखो न ! तुम क्या अपने बाप के व्यौसाय मे गये ? उनके लिए यह सब करना पड़ रहा है। मेरा कहना है, करो। तुम एक ही क्यों, दस कोलियरी खरीदो। मैं अपना मन्दिर लेकर रहूँगा।'

'अचल के लेबर को तो लेंगे ?'

'तबियत तो ऐसी ही है, देखे विश्वनाथ जी क्या करते हैं ! उनकी कृपा के बिना कुछ नही होना है।'

माथुर ने हेसाडी आकर सारी बातें की। उसके बाद कहा, 'ईंटो का भट्टा तो जल गया है। सब नये सिरे से करना होगा।'

'गये थे ?'

'नही, वह तो बहुत दूर है।'

हेसाडी के बाद तीन गाँव पार कर जो गुफा है, उसके बाद ईंटो का भट्टा है।

'टुरा गाँव मे ? टुरा के पास। टुरा से और थोड़ा दूर।'

'अच्छा, वहाँ हिरन मिलते है ?'

'क्या मारना है ?'

'पूछ रहा हूँ।'

'पता नही। इतनी दूर कौन जायेगा ? फिर वह गुफा की जगह ठीक नही है।'

'क्यों ?'

'रात में वह जगह बहुत खराब है।'

'डाइन का तो पता नही है।'

उसने माथुर से कहा, 'कमीज उतारो। बाप के हाथों में दे दो। बाप रह सकता है। हम-तुम नही रह सकते।'

हेसाडी का पहान निकल आया। चिल्लाकर बोला, 'सारी बातें बाद में होंगी। टूरा के पहान की गूँगी खोयी हुई लड़की सोमरी के बच्चा हुआ है। कोई गाँव मे जाओ। औरतो को बुलाओ। पहान! तुम्हारे गाँव मे आदमी नही हैं ?'

'डाइन कहाँ है ?'

'टाहाड़ मे जाकर खोजो। गूँगी-बहरी को लड़कों ने तंग कर भगाया था। सो बाद मे धुआँ दिया, डाइन निकाली, पत्थर मारो, जान से मत मारो।'

'तुम यह क्या कह रहे हो ?'

'जो कह रहा हूँ ठीक कह रहा हूँ। गिधना-कालना के नाती का नाती, डाइन होने पर यह बातें कहता ? जाओ, गाँव मे जाओ।'

इस बात के बाद दूसरी बात नही थी। गिधना-कालना सबके रक्त में स्वप्न बनकर जीवित हैं, जीवित रहे।

हेसाडी का पहान कभी उनका नाम लेकर कोई अधिकार नही जताता। और अगर जताता है तो उनकी ही तरह इस भूखे पहान की बात सारे उराँव मानने को बाध्य होते हैं।

टूरा के मुंडा युवक गाँव की ओर भागे।

डाई से औरतें आयी। नाल काटा, बच्चे को पोछकर साफ किया। जिन्होंने डाइन को पत्थर मार कर निकालना चाहा था, जिन्होने आग जलाकर डाइन को गुफा से निकालना चाहा था, उन्होंने पत्ते और डालें काटकर मचान बनाया।

औरतें सोमरी को पकड़कर बाहर लायी। माथुर की कमीज से इस समय उसकी नग्नता ढँकी गयी। सोमरी ने सबकी ओर देखा। न, उनकी आँखों मे प्रतिहिंसा नही थी। आदमी लोग उसकी ओर देख नही पा रहे थे।

मचान पर उसे और बच्चे को लिटाया गया। डाई गाँव की पहानी ने बिस्तर-सा बना दिया। उस पर उसको उठाया गया। टूरा का पहान पत्तों-सहित एक डाल से सोमरी पर की धूप बचाकर मचान के साथ-साथ पैदल चला।

'क्या समझूं ? डाइन है, इस बारे में कुछ मालूम नहीं हुआ। सनीचरी मर गयी। उस बात को सोचकर भी दुख होता है।'

'चलो न, शिकार के लिए चलें।'

'फिर शिकार !'

'बन्दूक ले आऊँगा। शिकार करेंगे, परमिट पर।'

'ओः ! तुम लोग कितनी परमिट लेते हो !'

'सरकारी कानून तो सब खतम हो गये। गुलदार गाँव में घुसेगा, गाय-बकरी सब मार डालेगा। परमिट आने पर उसे मारेंगे ? गुलदार या बड़ा बाघ क्या परमिट जानते है ?'

'वही तो। तुमको बहुत शौक है ?'

'बहुत।'

'कैसे बन्दूक चलाते हो ? चाम्पियन।'

'देखा जायेगा। वह गुलदार बहुत खतरनाक होता है। हमारी गायों के लिए कुत्ते पहरे पर रहते है। वे गाँव की पुलिस होते है। तो गुलदार को अगर कुत्ता मिल जाये, तो फिर कुछ न लेगा। उसी को मार देगा।'

'कुत्ता ?'

'गुलदार।'

'ठीक ! इस बार आते वक्त थोड़ा-सा किरासिन ला सकते हो ? कोहा हेसाडी में परमिट पर किरासिन नही मिलता। महुए के तेल मे बहुत धुआँ होता है, आँखें जलने लगती हैं।'

'ले आऊँगा। तोहरी से साइकिल पर न आ सकूंगा। दो लड़कों को भेज देना।'

कुछ दिनों के बाद दो लड़के तोहरी पहुँचे। उन्हें दो टीन किरासिन लेना था, और कुछ रस्सी और कीलें। पहान ने कह दिया था, माथुर थोड़ी-सी लाल दवा ले आये। अकेले माथुर को वह दवा मालूम है जिससे जला-कटा सब अच्छा हो जाता है। सनीचरी के नाती का बदन गरम पानी गिरने से जल गया था।

सबके अन्त में वे बोले, 'बन्दूक और गोली लाने को पहान ने कहा है।'

'क्यों ?'

अब आदमी लोग उलझन [illegible] सब अपने-अपने गाँव को लौटे। हेसाडी का पहान और माथुर [illegible] माथुर ने बन्दूकें और गोलियाँ ढूंढ निकाली।

चलते-चलते माथुर ने एक बात भी न की। हेसाडी के पहान ने दो बातें कही, 'भूख की तड़पन से कच्चा मास खाया था।'

माथुर कुछ न बोला।

'तुमने हनुमान मिश्र से जो बातें कही थी, उन्हें वापस ले लो। हम लोग उसके कुली के काम पर नही जायेंगे। किसी को नही जाने दूंगा। बाहर के कुली भी न लाने दूंगा।'

माथुर ने सिर हिलाकर 'अच्छा' कहा, बोला नही। शान्ति, आश्चर्यजनक शान्ति थी। हेसाडी का पहान बीच-बीच मे चुप हो जाना चाहता था। लगता था कि जो कुछ देख रहा था सब-कुछ नया था। माथुर समझ रहा था कि हेसाडी का पहान समझ रहा है कि हवा वैसी ही मीठी है, वन वैसे ही हरे है। आतंक के दबे बादल उड गये थे, इसलिए हेसाडी का पहान समझता है कि सब कुछ जैसा था, वैसा ही है। आकाश ने कभी रग नही बदला था। हवा रुकी नही थी। अनावृष्टि के दूसरे बरसो मे प्रकृति जैसी रहती है, वैसी ही है। हेसाडी का पहान ही दूसरी तरह का हो गया था, इसलिए सोच रहा था कि सब-कुछ बदल गया है।

हेसाडी का पहान फिर बोला, 'खुद नही जायेंगे। बाहर से किसी को जाने नही देंगे।'

माथुर कुछ न बोला। 'हाँ' जताकर सिर हिलाया। उसकी आँखो मे आँसू उमड़ रहे थे। पहान बोला, 'रो क्यो रहे हो?'

माथुर कुछ न बोला। पहान और उसके मिलन का तो कोई बिन्दु नही है। वे समानान्तर हैं। मिलते नही। वह कैसे समझाये कि उसे रुलाई क्यों आ रही है!

जगल छोड़कर वे नदी-पार उतरे। पीछे देखने पर उन्हे बहुत दूर पर टाहाड़ में हनुमान मिश्र के बड़े ऊँचे मन्दिर की पीतल की ध्वजा दिखायी दी। उन्होंने पीछे न देखा। चलने को सामने अभी लम्बी राह है।

'गुलदार कहाँ है?'

'ढाई गाँव के जगल में।'

'किसने देखा?'

'किसने देखा? गाँव के कुत्ते एक-एक कर तीन गायब हो गये हैं। जगल के ऊपर गिद्ध उड़ रहे हैं।'

माथुर ने एक बड़ी शीशी मर्क्युरियोक्रोम लिया। पहान को यह बहुत अच्छा लगता था। डाक्टरी दवाइयाँ, इंजेक्शन—कुछ नही मानता, पर माथुर के साथ जो दवाइयो का बैग रहता था उसके मर्क्युरियोक्रोम से उसके पैर का छाला अच्छा हो गया था, उसे याद रहा। माथुर को लगा कि पहान दूसरी मानसिकता का आदमी होने पर भी विज्ञान की उन्नति मानता तो है रत्ती-भर। उस बार माथुर ने उसका दाँत पक जाने पर ऐंटीबायोटिक खिलाया था। सनीचरी अस्पताल जायेगी, यह सुनकर पहान ही ने सबसे अधिक जोश दिखाया था।

शायद डाइन के मामले में भी पहान किसी दिन तर्क का परिचय दे।

लेकिन डाइन के मामले मे क्या तर्क हो सकता है? माथुर क्या अबकी ज्ञानबुद्धि से डाइन के मामले में कोई सूत्र पा रहा है?

सात-पाँच सोचकर माथुर ने अपनी पत्नी से कहा, 'दिलीप की कुछ पुरानी कमीज-पैंटें तो दे दो।'

'बर्तन ख़रीदोगे?'

'नही।'

दो लड़के-लड़की होने के बाद भी माथुर और उसकी पत्नी के सम्बन्ध बहुत अच्छे थे। मीरा ने उसे बाप का व्यवसाय न कर मास्टरी करने के लिए कभी भी दोष न दिया। मीरा बहुत ही कोमल और शान्त औरत है। पति के सारे परिवार के लिए दुर्बोध्य होने से मीरा के मन मे पति के प्रति एक ममत्व का भाव था।

एक पोटली कपड़े, मर्क्युरियोक्रोम, कील, डोरी, बीड़ी लेकर माथुर रवाना हुआ। बन्दूक और गोलियाँ भी। शिकार करना उसे बड़ा अच्छा लगता था। जाते वक्त उसने देखा कि मीरा का मुँह सूखा था। ज़रूर किसी व्रत के कारण उसने कोई उपवास रखा था।

'उपवास किया है ?'

'हाँ।'

'क्यों ?'

'तुम्हारे लिए।'

'क्यों ?'

'डाइन है न, जहाँ जा रहे हो !'

'जिसके घर में तुम हो, उसका डाइन क्या करेगी ?'

'ऐसी बात मत कहो। चगे-चगे लौट आओ। यह साहब सारे झगड़े की जड़ है। खुद तो पटना में बैठा है, और तुमको आग में ढकेल दिया है।'

'नहीं मीरा, डॉक्टरेट करने पर तुमको लेकर अमरीका चला जाऊँगा।'

बात कहते समय शायद माथुर का वैसा कोई सपना नहीं था। कुछ ही दिनों में कठोर यथार्थ के आघात से उसका मन बैठ गया और वह स्वप्न समाप्त हो गया। अब, इस सबके बाद, माथुर सपने नहीं पालता। अब भी वह तोहरी में मास्टरी कर रहा है, और उस इतिहास को लेकर थीसिस नहीं लिखेगा, गिधना के उस इतिहास का माल-मसाला खोजने के बहाने बार-बार हेसाडी जाता था। पहान को वह प्यार करने लगा था और उनका स्नेह अभी भी रेल-लाइन के पास की नदी की तरह समान्तराल है। दोनों के मिलने की कभी सभावना नहीं है। माथुर और पहान—रेलपथ और नदी के किसी भी बिन्दु पर मिलने से सर्वनाश अवश्य होगा।

माथुर हेसाडी चला गया। सनीचरी के नाती के फोड़ों और घाव पर दवा लगायी। कीलें ठोंक कर आँगन मे बैठने के लिए मचान बनाया। पहान के साथ गाँव मे किरासिन बाँटकर सबके धन्यवाद का पात्र बना। उसके दूसरे दिन सवेरे, शिकार मारकर बाघ के साथ गाँव वालों की तसवीर खींचने का वादा कर कुछ युवकों को लेकर ढाई के लिए रवाना हो गया।

हेसाडी के बाद तीन गाँव पार कर एक गुफा थी। उसके बाद ईट-भाटी। उसके बाद टूरा गाँव था। टूरा मुडा लोगों का गाँव था।

तीन गाँवों के बाद अन्त का गाँव ढाई था। ढाई बहुत ही छोटा गाँव था। वह कुरडा नदी के पार था। उसके पार जगल था। आँवला, पलाश, सीधे और छोटे-छोटे पेड़ों का जंगल था। गाँव के कुत्ते नदी के पार हमेशा

आया करते थे। एक के बाद एक कुत्ते के गायब होने के मतलब थे—चीते और बाघ। सब जानते थे कि चीते को कुत्तों का मांस बहुत अच्छा लगता है। जगल के ऊपर गिद्ध उड़ते है, जरूर कुत्तों का खाया हुआ शरीर वहाँ पड़ा है। माथुर ने लड़कों से कहा, 'बिलकुल बोलना मत, चीता बहुत खतरनाक होता है। आवाज पाते ही भाग जायेगा।' उन लोगों को बड़ा मजा आ रहा था, बहुत उत्तेजना हो रही थी। जंगल के अन्दर से होकर सावधानी से चलना अच्छा लग रहा था। जंगल के भीतर हरी छाया घनी हो रही थी, चलने मे मजा आ रहा था। आशा थी कि साँप नही होंगे, पाँव मे काट न लें।

उसके बाद जगल और झीना था। आँधी से कई पेड़ गिरे पड़े थे।

पेड़ के ठूँठ पर बैठ उनकी ओर पीठ किये डाइन ने हाथ उठाये। कुत्ते का पैर मुँह के पास ले गयी। माथुर के कलेजे मे हथौड़ियाँ चल रही थी। युवक जान छोड़कर भागे।

डाइन ने मुँह फेरा। उसके बाद 'आँ—आँ—आँ' की चीखों से वन को चीरती हुई उठ खड़ी हुई। फूला हुआ, बीभत्स शरीर था। माथुर ने आँखें बन्द कर ली, बन्दूक फेंककर पीछे घूमा, फिर भागा।

भागते-भागते उसने पीछे घूमकर देखा। डाइन पीछा करती आ रही थी। लेकिन ढीले कदमो से। माथुर ने फिर भागना शुरू किया।

लड़कों ने समझ लिया था कि डाइन ने माथुर को मार डाला है। डाइन की 'आँ—आँ—आँ' की चीख से वह धारणा और पक्की हो गयी। माथुर अच्छा भाग सकता है, इसलिए उसने ही उन्हे आकर पकड़ लिया।

माथुर बोला, 'डाइन नही है। आदमी है।' उन्होंने माथुर को एकदम उड़ा दिया! डर, बहुत डर! उसी के साथ भयानक क्रोध।

वे ढाई गाँव के अन्दर से चिल्लाते हुए गये, 'डाइन! डाइन! औरतो, घर में जाओ। मर्दो, बाहर आओ। हम जा रहे हैं।'

वे हेसाडी चले गये। ढाई, तोपा और बुरुडी गाँव के आदमी निकल आये। अब माथुर इस नाटक के मच पर था। निकलने की राह नही थी। और यह उसका नाटक नही था, उसकी कोई भूमिका नही थी। वह अपेक्षा करने लगा।

अपेक्षा करते-करते, उनकी गुस्से से भरी बातें सुनते-सुनते उसे अचानक एक विस्फोटक सत्य देखने को मिला।

आकाश में बादल मँडराते है, पानी नही बरसता। जंगल मे कद नही मिलता। नदी मे मछलियाँ नही हैं। हवा मानो साँस छोड़ रही हो।

बातें ऐसी थीं। सहसा माथुर ने समझा कि मानवरचित आर्थिक ससार में इन लोगो का स्थान नही है। ईंटो का भट्ठा, कोलियरी-बोकरो का इस्पात कारखाना, लकड़ी का रोजगार, रेल लाइन, खेत-खेती—सभी ने इन्हे बेकार बना दिया है।

प्रकृति ही इनका एकमात्र सहारा है। बरसात हो तो खेती हो, जंगल हरे-भरे हों, कंदमूल मिलें, नदी में मछलियाँ हों। अनावृष्टि से प्रकृति के स्तन सूख गये हैं। इसलिए यह डाइन को उसका उत्तरदायी मानकर क्रुद्ध है। उसके बाद आदमी को इनकी जरूरत नही। प्रकृति के विमुख होने से यह समाप्त हो जायेंगे।

एक-एक कर लोग इकट्ठा हुए। सब सशस्त्र थे। सबके हाथों मे लाठियाँ, कमर मे पत्थर थे।

यह गुस्सा क्यो है, यह माथुर को पता था। लेकिन यह जानकर भी माथुर उनकी मनोभूमि पर उतरकर उनसे एकात्म नही हो पाता था। माथुर और वे एक ही अचल की सन्तान थे। लेकिन माथुर के हाथो मे बन्दूक का कुदा था। नली उनकी छाती की ओर थी। सवर्ण हिन्दू बनाम आदिवासी। बन्दूक फेंककर टार्गेट और घातक हाथ मिलकर एक नही हो सकते थे।

हेसाडी के पहान के आकर पहुँचने के समय ग्यारह बज गये। उसके बाद सौ से अधिक लोग एक साथ चिल्लाते-चिल्लाते जगल मे घुसे।

डाइन उठ खड़ी हुई। डाइन झुकी जा रही थी, फिर चल रही थी। बार-बार ठोकर खा रही थी। जगल में पत्थर फेंकना बेकार था। पेड़ो से टकरा जाते। 'आँ—आँ—आँ' कभी गरज और कभी अर्तनाद बन जाता।

'हे ! तुम लोग ठहर जाओ। वह नदी पार कर रही है।'

'कहाँ जायेगी ?'

'अरे, अरे, गुफा मे जा रही है।'

'गुफा में ?'

'तुम लोग देखो !'

जंगल का सहारा छोड़ डाइन अब नदी पार कर रही थी। धीमी गति से। बीच-बीच में मुँह फेर कर देख लेती है। हाथों को ऊपर उठाती है, फिर पेट दबा लेती है। उसका हिलना, डुलना, चलना बहुत अजीब था।

'मार पत्थर !'

'खून गिरे तो नही जानता।'

डाइन झुकी। उसके बाद पत्थर उठा घूमकर खड़ी हो गयी।

लोग ठिठक कर खड़े हो गये। माथुर उनके पीछे था। वह अच्छी तरह देख नही पा रहा था। सहसा, प्रायः विद्युत्-गति से डाइन जान छोड़कर गुफा में भागी।

'गयी—गयी—गयी।'

सभी आकर गुफा के बाहर खड़े हो गये। टूरा गाँव के मुंडा लोग भी आये थे। जनता का मिजाज बहुत गरम हो रहा था।

ढाई गाँव का पहान बोला, 'तुमने यह क्या किया ?'

'क्या किया ?'

'वह हमारे जीवन मे घुस गयी।'

'हमने घुसाया ?'

'वह गुफा से नही निकलेगी।'

'हमे पता है।'

'हमे आफत में फँसाकर तुम्हे जाने न देंगे।'

'रोकोगे ?'

'काटकर फेंक देंगे।'

'हमे काटना नही आता है ?'

हेसाडी का पहान बोला, 'यह कोई काम की बातें नही है। ऐसी मुसीबत है।'

'बताओ, क्या करें ?'

'उसे निकालकर भगाना होगा।'

'निकालेगा कौन ?'